KHAN GLOBAL STUDIES

KGS Campus, Sai Mandir, Musallahpur Hatt, Patna - 6
Mob. No.: +91-8877918018, +91-875735880

GS PAPER - II

सामान्य अध्ययन

पेपर - 2

प्रश्नोत्तरी

भूगोल, पर्यावरण एवं आपदा प्रबंधन

BY AJIT SIR

भारत का भूगोल

66वीं BPSC (मुख्य परीक्षा) - 2021

1. जनांकिकी लाभांश से आप क्या समझते हैं? यू.एन.एफ.पी.ए. की रिपोर्ट के अनुसार, भारत विशेष रूप से बिहार को इसके लाभ उठाने के अवसर किस समय तक प्राप्त होंगे? बिहार द्वारा इस संबंध में उठाए गए कदमों पर प्रकाश डालिए।

65वीं BPSC (मुख्य परीक्षा) - 2020

2. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रमों की नयी परिभाषा बताइए। भारत में औद्योगिक वृद्धि की गति को तीव्र करने व आत्मनिर्भर भारत अभियान की सफलता को सुनिश्चित करने में इन उपक्रमों की भूमिका का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

64वीं BPSC (मुख्य परीक्षा) - 2019

3. जब तक भारत में जनसंख्या वृद्धि अवरूद्ध नहीं की जाती, तब तक आर्थिक विकास को उसक सही रूप में नहीं देखा जा सकता।" इस कथन का परीक्षण कीजिए।

63वीं BPSC (मुख्य परीक्षा) - 2019

4. वर्तमान में भारतीय कृषि की प्रमुख समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए उन्हें दूर करने हेतु सुझाव दें। साथ ही भारतीय कृषि के विकास हेतु सरकार द्वारा चलाए जा रहे प्रमुख कार्यक्रमों की चर्चा करें।
5. भारत के प्रमुख बड़े पैमाने के उद्योग भौगोलिक दृष्टि से कुछ विशेष क्षेत्रों में ही स्थापित हो पाए हैं, इसके कारणों की व्याख्या करें एवं भारत के प्रमुख बुनियादी उद्योगों की व्याख्या करें।
6. भारत में पाए जाने वाले प्रमुख खनिजों की विस्तार से व्याख्या करें। भारतीय अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास में इनके योगदान की चर्चा करें, साथ ही भारत की नई खनिज नीति के प्रमुख बातों को बताएं।

60-62वीं BPSC (मुख्य परीक्षा) - 2018

7. भारतीय कृषि में संवृद्धि एवं उत्पादकता की प्रवृत्तियों की व्याख्या कीजिए। देश में उत्पादकता में सुधार लाने और कृषि आय को बढ़ाने के उपाय भी सुझाइए।

56-59वीं BPSC (मुख्य परीक्षा) - 2016

8. 'जनांकिकी लाभ' क्या है? आर्थिक संवृद्धि पर इसके प्रभाव को स्पष्ट कीजिए।
9. 'पर्यावरण संरक्षण' तथा 'धारणीय विकास' में क्या संबंध है? भारत में आर्थिक संवृद्धि तथा पर्यावरण अधःपतन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
10. क्षेत्रीय विकास से क्या तात्पर्य है? बिहार के आर्थिक विकास में क्षेत्रीय नियोजन कहां तक सफल रहा है? विवेचना कीजिए।

बिहार से जुड़े प्रश्न

11. किस प्रकार से भारतीय मानसून का परिवर्तनशील स्वभाव भारत की कृषि को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है? बिहार के विशेष संदर्भ में इसकी व्याख्या कीजिए। (53-55 वीं BPSC/2012)
12. "प्राकृतिक विपदायें बिहार में निर्धनता के प्रमुख कारण हैं।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं? इस पर अपने विचार बताइये। (47वीं BPSC/2007)

13. बिहार में विभिन्न कृषि उपजों की प्रति हेक्टेयर उत्पादन स्थिर क्यों है? इनके आधारभूत कारणों एवं उन्हें दूर करने के महत्वपूर्ण उपायों को समझाइये। (46वीं BPSC/2005)
14. बिहार में उद्योगों के लिए संसाधन संभाव्यता, योजना तथा विकास का परीक्षण कीजिए। (42वीं BPSC/1999)
15. बिहार में समेकित क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम (Integrated Area Development Programme-IADP) की मुख्य विशेषताओं को दर्शाएं। इसकी उपलब्धि क्या है? (41वीं BPSC/ 1997)
16. बिहार अपने घरेलू, कृषि तथा औद्योगिक संबंधी आवश्यकताओं के लिए जल-संसाधनों का उपयोग युक्तिसंगत ढंग से नहीं कर रहा है। समीक्षा कीजिए। (39वीं BPSC/1993)

लघु-उद्योग

17. लघु उद्योगों का क्या अर्थ है? लघु उद्योग की भारतीय अर्थव्यवस्था में निर्यात एवं रोजगार की दृष्टि से क्या भूमिका है? (45वीं BPSC/2002)
18. औद्योगिक ढांचा में लघु उद्योग क्षेत्र के महत्व की व्याख्या कीजिए। (43वीं BPSC/2001)

कृषि

19. "कृषि विविधता (Agricultural Diversification) एवं जैव कृषि (Organic Farming) भारत में खाद्य संरक्षण के अच्छे विकल्प हैं।" बिहार के विशेष संदर्भ में इसकी आलोचनात्मक विवेचना कीजिए। (53-55 वीं BPSC/2012)
20. हरित क्रांति ने भारत में अनाज उत्पादन को बढ़ाया है परन्तु इसने अनेक पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं।" इसकी व्याख्या उदाहरण सहित कीजिए। (48-52वीं BPSC/2009)
21. उदारीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय कृषि में कौन-कौन सी महत्वपूर्ण प्रवृत्तियां उभर कर आयी हैं? (44वीं BPSC/2002)
22. स्वतंत्रता के बाद भारतीय कृषि की मुख्य प्रवृत्तियों (Trends) की विवेचना करें। (41वीं BPSC/ 1997)

अर्थव्यवस्था के अन्य प्रश्न

23. भारत में, वन देश के आर्थिक विकास में किस प्रकार योगदान करते हैं? (41वीं BPSC/ 1997)

भूगोल से संबंधित प्रश्न

24. भारत को भौतिक प्रदेशों में विभक्त कर मानचित्र सहित उनका वर्णन कीजिए। (43वीं BPSC/2001)
25. भारत में नदी - जल के बंटवारे को लेकर अन्तर्राज्यीय विवादों के कारणों एवं परिणामों की विवेचना सोदाहरण करें। क्या इस समस्या का समाधान हो सकता है? (42वीं BPSC/1999)
26. भारत के प्रमुख मृदा - प्रदेशों की विशेषताओं तथा महत्वपूर्ण फसलों के लिए उनकी उपयुक्तता की विवेचना कीजिए। (42वीं BPSC/1999)
27. प्रायद्वीपीय भारत की संरचना तथा विकास (Evolution) की विवेचना कीजिए। (40वीं BPSC/1995)
28. प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत के आधार पर हिमालय की उत्पत्ति की व्याख्या कीजिए। (39वीं BPSC/1993)
29. भारत में मृदा अपरदन के प्रमुख भौतिक एवं सांस्कृतिक कारण बताइये। (39वीं BPSC/1993)

जनसंख्या

30. भारत में 2011 की जनगणना के अस्थायी (Provisional) नतीजों ने भारत की घटती हुई जनसंख्या दर एवं लिंग अनुपात को प्रदर्शित किया है। यह किस प्रकार से भारत में प्रादेशिक नियोजन को प्रभावित करेगा? (53-55वीं BPSC/2012)

31. आप कहां तक सहमत हैं कि जनसंख्या का अधिक घनत्व भारत में गरीबी का मुख्य कारण है? (48-52 वीं BPSC/2009)

32. स्वतंत्रता बाद भारत की जनसंख्या के वृद्धि प्रतिरूप की प्रादेशिक विविधता का विवरण दीजिए तथा आर्थिक विषमता पर उनके प्रभाव को दर्शाइए। (42वीं BPSC/1999)

33. विकास के लिए बढ़ती जनसंख्या एक प्रमुख बाधक है। विवेचना कीजिए। (40 वीं BPSC/1995)

प्र. जनांकिकी लाभांश से आप क्या समझते हैं? यू.एन.एफ.पी.ए. की रिपोर्ट के अनुसार, भारत विशेष रूप से बिहार को इसके लाभ उठाने के अवसर किस समय तक प्राप्त होंगे? बिहार द्वारा इस संबंध में उठाए गए कदमों पर प्रकाश डालिए।

Key to Answer

- जनांकिकी लाभांश का अर्थ, परिभाषा एवं उसकी अवधारणा को समझाएं।
- UNDP के अनुसार बिहार को इसका लाभ कब तक और किस तरीके से प्राप्त हो सकता है।
- राज्य सरकार को जनांकिकी लाभांश का लाभ उठाने हेतु कौन-कौन से कदम उठाने चाहिए।

उत्तर- संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष (UNFPA) के अनुसार - " आर्थिक विकास क्षमता जो जनसंख्या की आयु संरचना में बदलाव के परिणामस्वरूप प्राप्त हो सकती है। मुख्य रूप से जब कार्यशील उम्र की आबादी (15 से 64 वर्ष) का हिस्सा गैर-कार्यशील उम्र (14 और उससे कम तथा 65 एवं उससे अधिक) की आबादी से बड़ा हो। " जनसांख्यिकी लाभांश कहलाता है। यह किसी देश में युवा तथा कार्यशील जनसंख्या की अधिकता तथा उससे होने वाले आर्थिक लाभ के रूप में देखा जाता है। भारत में 62 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या की आयु 15 से 59 वर्ष के मध्य तथा जनसंख्या की औसत आयु 30 वर्ष से कम है, अर्थात् भारत जनसंख्या आयु संरचना के आधार पर आर्थिक विकास की क्षमता का प्रतिनिधित्व करने वाले जनसांख्यिकी लाभांश के चरण से गुजर रहा है और इस लाभांश का अवसर वर्ष 2005-2006 से वर्ष 2055-56 तक 5 दशकों के लिए उपलब्ध है। बिहार के संदर्भ में यदि देखा जाय तो कार्यशील उम्र समूह (20-59 वर्ष) वाली आबादी 2041 में 55.8 प्रतिशत तक पहुंच जाने की संभावना है।

जनांकिकीय लाभांश के संभावित लाभ

1. दूसरों पर आश्रित रहने की तुलना में कार्यशील जनसंख्या अधिक होने से संवृद्धि एवं समृद्धि दोनों ही दृष्टि से अप्रत्याशित लाभ की संभावना बढ़ती है।
2. कार्यशील आयु वर्ग समूह अपना भरण-पोषण तो करता ही है, साथ ही साथ दूसरों (पराश्रितों) को सहायता भी देता है।
3. समाज कल्याण कार्यक्रमों पर राज्य सरकार को कम खर्च करना पड़ेगा, जिससे राज्य का राजकोषीय संतुलन बना रहेगा।
4. आर्थिक क्षेत्रों में श्रम बल आपूर्ति सदैव सुनिश्चित रहेगी।
5. युवाओं की अधिक कार्यक्षमता का लाभ उत्पादकता में वृद्धि के रूप में मिलेगा।

किन्तु यदि इसे एक चुनौती के रूप में देखा जाय तो जनांकिकी लाभांश से

1. भविष्य में रैपिड एजिंग (वृद्धजनों की संख्या में बढ़ोतरी) की समस्या उत्पन्न होगी यह जनांकिकीय संक्रमण की अंतिम अवस्था होती है।
2. जनांकिकीय लाभांश का लाभ लिए बिना ही राज्य की पराश्रित जनसंख्या का बोझ राजकीय अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा।
3. समाज कल्याण संबंधी कार्यक्रमों पर अधिक खर्च करना पड़ेगा।
4. आर्थिक विकास की गति धीमी हो जाएगी।
5. श्रम-प्रधान क्षेत्रों का विकास अवरूद्ध हो जाएगा।

राज्य के आर्थिक सर्वेक्षण 2019-20 के अनुसार बिहार में युवा (0-19 वर्ष) की आबादी का हिस्सा घटने लगा है। यह आबादी 2011 के 49.2 प्रतिशत से घटकर वर्ष 2041 तक मात्र 30.1 प्रतिशत तक

रह जाने का अनुमान है, यद्यपि बुजुर्ग आबादी (60 वर्ष और अधिक) का हिस्सा आने वाले दशकों में बढ़ने का अनुमान है। वर्ष 2011 के 7.8 प्रतिशत से वर्ष 2041 में 11.6 प्रतिशत तक। इस प्रकार जनसांख्यिकी लाभांश प्राप्त होने से बिहार में आने वाली स्थिति बिहार में आर्थिक विकास के अधिक अवसर उपलब्ध करवाने वाली हो सकती है। हालांकि इस क्षमता को वास्तविकता में बदलने के लिए किशोरों/युवाओं को स्वस्थ्य एवं सुशिक्षित होना आवश्यक है क्योंकि राज्य का कल्याण इसी पर निर्भर है।

बिहार द्वारा इस संबंध में उठाए गए विभिन्न कदम इस प्रकार हैं-

1. **स्वास्थ्य संबंधी चुनिंदा सूचकः** राज्य सरकार द्वारा उठाए गए कुछ परिणाममूलक कदमों के कारण विगत वर्षों में स्वास्थ्य संबंधी परिणामों में काफी प्रगति हुई है। जन्मकालीन जीवन संभाव्यता (एल ई बी) का आशय मृत्यु संबंधी वर्तमान स्थिति के तहत किसी नवजात के जीवित रहने के औसत वर्षों से है। यह पर्याप्त पोषण, अच्छा स्वास्थ्य, शिक्षा और अन्य मूल्यवान उपलब्धियों जैसे अनेक आयामों के लिए एक परोक्ष पैमाना होता है। इसके तहत अन्य स्वास्थ्य संबंधी सूचक भी शामिल हैं जैसे- CBR, IMR, CMR, U5MR, NMR, PMR एवं TFR इत्यादि। उपर्युक्त सूचक / मानकों की सहायता से युवा कार्यशील नागरिकों को न्यूनतम जीवन गुणवत्ता प्रदान कर उनके मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है।
2. **प्रजनन दर में कमी लानाः** राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार 'मिनिमम वेल्थ क्विंटिल' महिलाओं के 'उच्चतम वेल्थ क्विंटिल' की महिलाओं की अपेक्षा औसतन 1.6 गुना अधिक बच्चे होते हैं। अर्थात् समृद्धतम से निर्धनतम की ओर बढ़ने पर प्रजनन दर बढ़ती जाती है। इस प्रकार प्रजनन दर का प्रभाव स्वास्थ्य एवं शिक्षा पर भी पड़ता है क्योंकि उच्च जनसंख्या वृद्धि वाले राज्यों में ही प्रति व्यक्ति स्कूल, अस्पताल बिस्तर इत्यादि की उपलब्धता पाई जाती है।
3. **जीवन की गुणवत्ताः** राज्य के निवासियों को न्यूनतम जीवन गुणवत्ता प्रदान करने के लिए शिक्षा एवं स्वास्थ्य प्रणाली पर निवेश करने के साथ-साथ अनाजों एवं खाद्यान्नों का अधिक से अधिक उत्पादन करना होगा। लोगों को रहने के लिए घर, स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति एवं सड़क परिवहन और विद्युत उत्पादन तथा वितरण जैसे बुनियादी ढांचे को सशक्त करने एवं उन्हें समय पर उपलब्ध कराकर समायोजन हेतु राज्य सरकार वांछित माध्यमों से अपने संसाधन को बढ़ा रही है। वर्तमान में अल्प-वित्त पोषित शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पोषण प्रणाली युवाओं को उभरते रोजगार के अवसर का लाभ उठाकर आवश्यक कौशल प्रदान करने के लिए पर्याप्त नहीं है।
4. **छीजन दर में कमी लाना:** बिहार में विद्यालय छोड़ने के मामलों में कमी शिक्षा क्षेत्र के योजनाकारों द्वारा ध्यान देने के लिए अपेक्षाकृत नया फोकस है। सबको प्राथमिक व बुनियादी शिक्षा देने पर जोर के साथ नामांकन बढ़ा है, जिससे वंचित एवं सीमांत समूह के विद्यार्थी विद्यालय में आ गए, इसके साथ ही प्राथमिक, उच्च एवं माध्यमिक सभी स्तरों पर छात्राओं की छीजन दर छात्रों से कम रही है। इससे यह साफ प्रतीत होता है कि इस सर्वव्यापीकरण से सशक्त एवं समृद्ध मानव पूंजी तैयार हो रही है जो भविष्य में जनांकिकीय लाभांश की कमियों को अवश्य दूर करेगी।
5. **महिला सशक्तिकरणः** राज्य सरकार ने महिला सशक्तिकरण नीति, 2015 का निर्माण किया और लैंगिक मुद्दों पर ध्यान रखने के लिए महिला विकास निगम के तहत लैंगिक संसाधन केंद्र का निर्माण किया जो समाज कल्याण विभाग का

हिस्सा है। साथ ही वर्ष 2008-09 से जेंडर बजट का प्रकाशन आरंभ किया। इस प्रकार राज्य के कुल बजट में महिलाओं पर परिव्यय का हिस्सा विभिन्न वर्षों के मध्य थोड़े बहुत अंतर के साथ लगभग 11 प्रतिशत रहा है जो GSDP का लगभग 3-4 प्रतिशत रहा है। महिला सशक्तिकरण के तहत राज्य सरकार द्वारा बाल विवाह, लिंग आधारित हिंसा, दुर्व्यवहार और तस्करी के प्रति उनकी संवेदनशीलता जैसी समस्याओं के प्रति युवा महिलाओं को उनकी पूरी क्षमता हासिल करने से रोकते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त कुछ अन्य कारक भी हैं जिसकी सहायता से राज्य सरकार जनांकिकी लाभांश का लाभ आने वाले समय में ले सकती है। यदि वह इस लाभांश के प्रति सतर्क होकर इसका गुणवत्तापूर्ण उपयोग करे जैसे-

1. शिक्षा, कला संस्कृति एवं युवा कार्य संबंधी क्षेत्र में समुचित ध्यान देकर पर्यटन इत्यादि रोजगार उपलब्ध कराना।
2. आपदा प्रबंधन की स्थिति में मजबूती से परस्पर सहयोग हेतु सशक्त मानव श्रम तैयार कराना।
3. ई-शासन की नींव को आधार प्रदान कर डिजिटल वर्ल्ड में अपनी अमूल्य पहचान बनाना।
4. कानून एवं प्रशासन के अनुरक्षण के साथ-साथ आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देना।
5. शांति का वातावरण बनाए रखना ताकि निवेश को आकर्षित किया जा सके।
6. शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार कर तार्किक शिक्षा को बढ़ावा देना।
7. व्यक्ति को स्वयं का व्यवसाय प्रारंभ करने हेतु प्रोत्साहित करना।
8. माल्थस एवं डेविड रिकार्डो के जनसंख्या सिद्धांत का उपयोग कर संसाधनों का समन्वय करना।

निष्कर्षतः अर्थव्यवस्था के समष्टि आर्थिक चर जैसे रोजगार, प्रतिव्यक्ति आय बचत और निवेश से अधिक विकास संभव है लेकिन जनसांख्यिकी लाभांश के साथ आर्थिक विकास हो तो अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सरकार द्वारा जनांकिकी लाभांश के प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन अभी भी इसमें सुधार की आवश्यकता है। क्योंकि यदि किसी कारणवश राज्य की छवि खराब होती है तो इससे निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसी तरह आतंकवादी या अन्य कोई अप्रिय घटना घटती है तो सरकार को शांति स्थापित करने के लिए हर संभव प्रयास करने होंगे, क्योंकि यह आवश्यक नहीं है कि कार्यशील जनसंख्या के बढ़ने से आर्थिक विकास तीव्रगामी होगी। अतः राज्य सरकार को जागरूकता अभियान चलाकर शिक्षा के स्तर को बढ़ाकर तथा गरीबी को समाप्त करने जैसे उपाय अपनाकर जनसंख्या नियंत्रण संबंधित प्रयास करने चाहिए।

Key to Remember

- जनांकिकी लाभांश क्या है एवं इसके लाभ क्या - क्या हैं।
- जनांकिकी लाभांश किस सीमा तक उचित है।
- जनांकिकी लाभांश के फायदे को बिहार सरकार किस प्रकार अपने राज्य के विकास में उपयोग कर सकती है।

प्र. भारतीय कृषि में 1991 से संवृद्धि एवं उत्पादकता की प्रवृत्तियों की व्याख्या कीजिए | बिहार में कृषि उत्पादन और उसकी उत्पादकता को बढ़ाने के लिए क्या व्यावहारिक उपाय किए जाने चाहिए?

उत्तर- भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की अहम भूमिका है। 2011 की जनगणना के अनुसार देश की आबादी का लगभग 54.6% कृषि और इससे जुड़ी गतिविधियों में लगा है तथा देश में मौजूदा कीमतों पर सकल संवर्धित मूल्य में कृषि एवं सहायक क्षेत्रों का हिस्सा 2019-20 में 16.5% हो गया है।

भारत में 1991 में आर्थिक सुधारों के द्वारा जो वैश्विकरण निजीकरण तथा उदारीकरण की नीति लाई गई उससे भारतीय कृषि क्षेत्र में निम्न परिवर्तन के माध्यम से कृषि संवृद्धि तथा उत्पादकता को बढ़ाने का प्रयास किया गया।

1. इन सुधारों से कृषि क्षेत्र का मशीनीकरण करने में सहायता मिली।
2. उन्नत बीज तथा खाद आदि की आपूर्ति का रास्ता आसान हुआ।
3. कृषि पर नई व्यापार नीतियों का प्रभाव पड़ा।
4. इन सुधारो ने खाद्य प्रसंस्करण तथा विपणन के माध्यम से कृषि क्षेत्र को सहायता पहुँचाने का कार्य किया।
5. इसके द्वारा भारत के कृषि उत्पादों के लिए नये बाजार के द्वार खुले जिसने अंततः उत्पादकता बढ़ाने के लिए किसानों को प्रेरित किया।
6. वैश्वीकरण के द्वारा प्रौद्योगिकी विकास जो वैश्वीक स्तर पर हुए उसे भारत का कृषि क्षेत्र लाभानावीत हुआ तथा हमारे देश के कृषि वैज्ञानिकों को प्रौद्योगिकी विकास तथा अनुसंधान करने के लिए प्रोत्साहित किया।

कृषि क्षेत्र में संवृद्धि का तुलनात्मक अध्ययन 1991 से अब तक

पिछले कुछ दशकों के दौरान, अर्थव्यवस्था के विकास में मैन्युफैक्चरिंग और सेवा क्षेत्र का योगदान तेजी से बढ़ रहा है। परन्तु कृषि क्षेत्र के योगदान में गिरावट आई है। 1950 के दशक में जी.डी.पी. में कृषि क्षेत्र का हिस्सा लगभग 50 प्रतिशत था जो 1991 में लगभग 30 प्रतिशत हो गया था और वर्तमान में 16.5 प्रतिशत है (आर्थिक समीक्षा 2019-20)

हालांकि जी.डी.पी. में योगदान लगातार कम होने के बावजूद खाद्यात्र उत्पादन लगातार प्रत्येक वर्ष बढ़ रहा हैं। देश गेंहू, चावल, गन्ने और कपास आदि जैसी फसलों के मुख्य उत्पादको में से एक है। भारत दुग्ध उत्पादन में पहले तथा फलो और सब्जीयों के उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। 2013 में भारत ने दाल उत्पादन में 25 प्रतिशत का योगदान दिया जोकि एक देश के लिहाज से सबसे अधिक है। इसी प्रकार कृषि विकास दर (प्रतिशत में) चावल उत्पादन में भारत की हिस्सेदारी वैश्वीक स्तर पर 22 प्रतिशत तथा गेंहू उत्पादन में 13 प्रतिशत है। पिछले अनेक वर्षों से भारत दूसरे सबसे बडे कपास निर्यातक होने के साथ-साथ कुल कपास उत्पादन में भारत की हिस्सेदारी 4% लगभग 25 प्रतिशत है। हालांकि अनेक फसलों के मामलो 2%- में कृषि उत्पादकता चीन, ब्राजील तथा अमेरिका जैसे बडे कृषि उत्पादक देशों की तुलना में कम है।

ऐसे कई कारण है, जो कि कृषि उत्पादकता को प्रभावित करते है। जैसे खेती की जोत का आकार निरंतर छोटा होना है। कृषि की मानसून पर निर्भता तथा पर्याप्त सिंचाई सुविधा का न होना, उर्वरको का असंतुलित उपयोग जिससे उर्वता में कमी, भारत में आधुनिक तकनीक का सभी किसानो को उपलब्ध न होना तथा ऋण की असमान उपलब्धता तथा खाद्यन्नों का सरकारी एजैंसीयों द्वारा पूर्ण खाद्यन खरीद न होने से किसान हतोउत्साहीत होते हैं जिससे संवृद्धि तथा उत्पादकता पर प्रभाव पडता है।

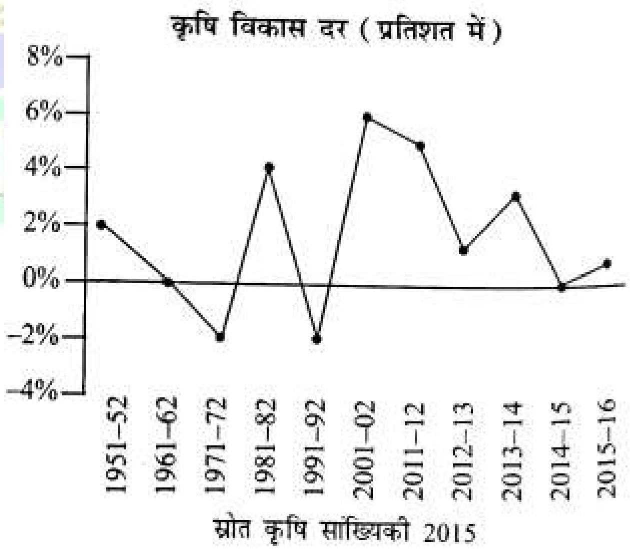

स्रोत कृषि सांख्यिकी 2015

कृषि की उत्पादकता कई करको पर निर्भर करती हैं। जैसे कृषि इनपूट्स - जमीन, पानी, बीजा एवं उर्वरकों की उपलब्धता और गुणवत्ता, कृषि ऋण एवं फसल बीमा की सुविधा, कृषि उत्पादों के लाभकारी मूल्यों का आश्वासन तथा स्टोरेज, मार्केटिंग, इंफ्रास्ट्रक्चर आदि में सुधार कर तथा उत्पादक किसानों को सस्ती कीमत पर उपलब्ध कराकर उनकी उपज के मूल्यों को सुनिश्चित कर कृषि उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है।

भारत में कृषि उत्पादन 1991 के बाद से अबतक

1. खाद्यान्नों का कुल उत्पादन 1950-51 में 51 मिलियन टन से बढ़कर 2015-16 में 252 मिलियन टन तथा 2016-17 में 272 मिलियन टन हो गया।
2. 1960 के दशक मे हारित क्राति के बाद गेंहू और चावल के उत्पादन में जबरदस्त वृद्धि हुई तथा 2015-16 तक देश के कुल उत्पादन में गेंहू और चावल की जिस्सेदारी 78 प्रतिशत हो गई।

भारत में कृषि उत्पादकता

भारत में कृषि उत्पादकता की वृद्धि दर बहुत धीमी रही है। उदाहरण के लिए 1981 में ब्राजील में चावल की उत्पादकता 1.3 टन प्रति हैक्टेयर थी जोकि 2011 में बढ़कर 4.9 टन प्रति हैक्टेयर हो गई, इसके मुकाबले भारत की उपज 2.0 टन प्रति हैक्टेयर से बढ़कर 3.6 टन प्रति हैक्टेयर हो गई। इसी अवधि में चीन की उत्पादकता 4.3 टन से बढ़कर 6.7 टन प्रति हैक्टेयर हो गई।

अतः 1991 के सुधारों द्वारा कुल खाद्यान्न उत्पादन तो अप्रत्याशित रूप से बढ़ा परन्तु कृषि क्षेत्र की विकास दर को सुधारने की आवश्यकता है ताकि सरकार के किसानों की आय दुगना करने के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके तथा आत्मनिर्भर भारत कार्यक्रम को मजबूती के साथ पूर्ण किया जा सके।

प्र. सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रम का नयी परिभाशा बताइए। भारत में औद्योगिक वृ की गति को तीव्र करने व आत्मनिर्भर भारत अभियान की सफलता को सुनिष्चित करने में अन उपमों की भूमिका का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर - सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रम देश के भौगोलिक विस्तार में लगभग 63.4 मिलियन यूनिट के साथ 6.11% विनिर्माण क्षेत्र की जी.डी.पी. में तथा 24.63% सेवा क्षेत्र की जी.डी.पी. में साथ ही साथ भारत के विनिर्माण उत्पादन में 33.4% का योगदान करता है।

इसके साथ ही एम.एस.एम.ई. क्षेत्र लगभग 12 करोड़ लोगों को आजीविका देता है। कुल मिलाकर यह भारत की जी. डी.पी. में लगभग 29% का योगदान करता है साथ ही भारत के निर्यात में लगभग 45% का योगदान करता है।

भारत में एम. एस.एम.ई. उद्योग लगभग 80 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में अवस्थित हैं जो ग्रामीण क्षेत्र के विकास में इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को दर्शाता है।

हाल के समय में कोविड महामारी के साथ सम्पूर्ण भारत में लोकडाऊन के कारण इन उद्योगों को काफी नुकसान का सामना करना पड़ा, जिसके निराकरण के लिए भारत सरकार द्वारा कई उपाए किए गये जैसे - एम. एस.एम.ई. के तीन लाख तक के लोन की गारंटी भारत सरकार द्वारा ली गई तथा कई राज्य सरकारों द्वारा भी इन उद्योगों के लिए कदम उठाए गये तथा पंजीकरण (स्व-घोषणा) के आधार पर ऑनलाईन किये जाने का विकल्प दिया गया। दस्तावेज अपलोड करने की बाध्यता खत्म कर दी गई। इसी के साथ एम.एस.एम.ई. वर्गीकरण के लिए बुनियादी मानदंड, संयंत्र, मशीनरी और उपकरण में निवेश तथा टर्नओवर को भी आधार बनाया गया।

नवीनतम वर्गीकरण के आधार पर

1. सूक्ष्म उद्यम वे होंगे जिनमें 1 करोड़ रुपये से अधिक का निवेश नहीं और उसका सालाना 5 करोड़ का कारोबार/ टर्नओवर होगा।
2. लघु उद्यम वे होंगे जिनमे 10 करोड़ रुपये तक का निवेश होगा और 50 करोड़ रुपये तक का कारोबार / टर्नओवर होगा।
3. मध्यम उद्यम वे होंगे जिसमे 50 करोड़ तक का निवेश तथा 250 करोड़ का कारोबार / टर्न ओवर होगा।

इन सभी परिवर्तनों के परिणामस्वरूप निम्न निहितार्थ होंगे-

- इससे एम.एस.एम.ई. उद्यमों के काम करने के तरीकों में पूरी तरह बदलाव आ जायेगा जो यह सुनिश्चित करेंगे कि वे वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा कर सकें जिससे नए उद्योगों को स्थापित करने में सहायता मिलेगी।
- इन सभी प्रोत्साहनों की सहायता से ये उद्यम तेजी से V-आकार की रिकवरी की स्थिति को प्राप्त कर महामारी से हुए नुकसान को नियंत्रण में ला सकेंगे तथा सरकार की मेक इन इंडिया आत्मनिर्भर भारत, जैसी योजनाओं को पूर्ण करने में सहायता मिलेगी।

इस प्रकार सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रमों द्वारा कोविड-19 महामारी से प्रभावित अर्थव्यवस्था को पुनः पटरी पर लाने में सहायता मिलेगी जो निम्न प्रकार है-

- जो आर्थिक पैकेज इन सेक्टर को दिया गया है वह भारत को विनिर्माण क्षेत्र में सशक्त करेगा जिससे आयात पर निर्भरता 11 सशक्त कम होगी और यह पूरे देश को आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ायेगा।
- आत्मनिर्भर भारत निम्नलिखित पाँच स्तंभों पर खड़ा होना चाहिए - (1) अर्थव्यवस्था, (2) आधारिक संरचना, 21वीं सदी प्रौद्योगिकी प्रेरित तंत्र के माध्यम से विकास, (4) मांग को बढ़ाना, (5) वाइर्बेट जनसंख्या लाभांश।

आत्मनिर्भर भारत अभियान में कई और सुधार किए गए जैसे-

- सरल एवं स्पष्ट कानून
- तर्कसंगत कराधान प्रणाली
- कृषि में आपूर्ति श्रृंखला सुधार
- सक्षम मानव संसाधन
- मजबूत वित्तीय प्रणाली

अतः एम.एस.एम.ई. सेक्टर भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल स्तम्भ है। इसके माध्यम से निर्यात को प्रोत्साहित कर आयात प्रतिस्थापन को प्राप्त कर महामारी के कारण अर्थव्यवस्था को हुई हानि को रिकवर करने में सहायता मिलेगी। इससे भारत को आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ाया जा सकता है।

प्र. भारत में 'खाद्य सुरक्षा' की आवश्यकता का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

Key to Answer

- खाद्य सुरक्षा की अवधारणा को स्पष्ट करें।
- बढ़ती जनसंख्या एवं खाद्य सुरक्षा के बीच सम्बंध की व्याख्या करें।
- खाद्य सुरक्षा हेतु सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं का संक्षेप में समालोचनापूर्वक उल्लेख करें।

उत्तर- खाद्य सुरक्षा, का अर्थ है कि सभी लोग पर्याप्त, सुरक्षित और पौष्टिक भोजन तक आर्थिक पहुंच रखते हैं, जो उनकी खाद्य वरीयताओं एवं आहार संबंधी जरूरतों को पूरा करता है। यह एक सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन के लिए अनिवार्य है।

देश की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को लम्बे समय तक बनाये रखना एक कठिन चुनौती है, क्योंकि आबादी में लगातार वृद्धि हो रही है, शहरीकरण बढ़ता जा रहा है एवं नागरिकों की आय बढ़ने से भोजन की मांग एवं विविधता में भी वृद्धि दर्ज की जा रही है। यदि इस भावी परिदृश्य को 2050 के नजरिये से देखा जाए तो भारत की आबादी लगभग 1.65 अरब तक पहुंचने की संभावना है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस समय देश की 50% आबादी शहरी क्षेत्रों में बसी होगी, जिससे खाद्यान्न असुरक्षा बढ़ने की सम्भावना जताई जा रही है। कुछ महत्वपूर्ण अध्ययनों से पता चला है कि यदि देश के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) मे सात प्रतिशत की वृद्धि दर मानी जाय तो वर्ष 2050 में अनाज की मांग 50% तक बढ़ सकती है। जबकि फलों, सब्जियों एवं पशु उत्पादों में 100 से 300% तक की वृद्धि हो सकती है। इसका एक अर्थ यह भी है कि प्रति व्यक्ति कैलोरी मांग 3000 किलो कैलोरी से अधिक हो सकती है।

उपर्युक्त के आधार पर अनुमान लगाया गया है कि देश में खाद्यान्नों की मांग 45 करोड़ टन तक पहुंच सकती है। इसी तरह से दालों, खाद्य तेलों, दूध, मांस, अण्डा, फलों, सब्जियों, चीनी एवं अन्य कृषि उत्पदकों की मांग भी इसी अनुपात में बढ़ सकती है।

खाद्य सुरक्षा तीन तत्वों का संयोजन है जिसमें, भोजन की उपलब्धता, भोजन की पहुंच, खाद्य उपयोग शामिल है।

भोजन की उपलब्धता

भोजन की उपलब्धता अर्थात भोजन पर्याप्त मात्रा में और सुसंगत आधार पर सबको उपलब्ध होना चाहिए। यह किसी दिये गये क्षेत्र में स्टॉक और उत्पादन और व्यापार या सहायता के माध्यम से कही और से भोजन लाने की क्षमता पर विचार करता है।

भोजन की पहुंच

सभी व्यक्तियों को भोजन तक पहुंच अर्थात् नियमित रूप से खाद्यान्न खरीद तथा खाद्य सहायता के माध्यम से भोजन की पर्याप्त मात्रा प्राप्त करने में सक्षम होना चाहिए।

खाद्य उपयोग

उपयोग किय गये भोजन का नागरिकों पर पोषण का सकारात्मक प्रभाव होना चाहिए। यह खाना पकाने, भण्डारण और स्वच्छता प्रथाओं तथा व्यक्तियों के स्वास्थ्य को सही रखने में सहायता करता है।

उल्लेखनीय है कि खाद्य सुरक्षा घरेलू संसाधनों, डिस्पोजेबल आय और सामाजिक आर्थिक स्थिति से निकटता से सम्बंधित है। यह अन्य मुद्दों जैसे खाद्य मूल्य, जलवायु परिवर्तन, जल, ऊर्जा और कृषि विकास के साथ दृढ़ता से जुड़ा हुआ है।

खाद्य सुरक्षा भारत के लिए महत्वपूर्ण क्यों?

इसे निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है।

- कृषि क्षेत्र को बढ़ावा देने लिए।
- खाद्य कीमतों पर नियंत्रण रखने के लिए।
- आर्थिक विकास एवं रोजगार सृजन के लिए गरीबी में कमी लाने के लिए।
- व्यापार अवसरों में वृद्धि के लिए।
- बढ़ी हुई वैश्विक सुरक्षा और स्थिरता के लिए।
- बेहतर स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य सेवा के लिए।

भारत में खाद्य सुरक्षा की चिन्ताएं

- भारत में वर्तमान में दुनिया में कुपोषित लोगों की सबसे बड़ी संख्या (लगभग 195 मिलियन) निवास करती है।

- भारत में लगभग 10 करोड़ बच्चों में 4.7 करोड़ अविकसित या स्टंटिंग के कारण अपनी पूरी मानव क्षमताको नहीं कर पाते हैं।

भारत में कृषि उत्पादकता बहुत कम है। विश्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार भारत में अनाज की पैदावार 2992 किग्रा / हेक्टेयर है, जबकि यही उत्तरी अमेरिका में 7318.4 किग्रा / हेक्टेयर है।

- मछली, अण्डे, दूध एवं मांस की उपलब्धता काफी कम
- ग्लोबल हंगर इण्डेक्स-2019 के अनुसार भारत 119 देशों में से 102वें स्थान पर था।

उपरोक्त आंकड़ों के आधार पर भारत में खाद्य सुरक्षा को लेकर चिन्ताएं उजागर हो जाती है, क्योंकि उक्त आंकड़ों में इसके सभी पड़ोसी देशों की स्थिति भारत से अच्छी है।

उचित खाद्यान्न की आपूर्ति न हो पाने के कारण भारत में खाद्य सुरक्षा पर प्रश्नचिह्न लग रहे हैं। क्योंकि भारत 15 वर्ष की प्रजनन आयु की 51.4% महिलाएं एनीमिक (रक्त अल्पता) की शिकार हैं, वहीं भारत में 5 वर्ष से कम आयु के 38.4% बच्चों का वजन कम है। ये आंकड़े भारत के लिए बहुत चिंता का विषय है।

- आदिवासी समुदायों के लिए, दूरदराज के कठिन इलाकों में रहने वाले एवं जीवन निर्वाह करने वाले लोगों तक खाद्य सुरक्षा की पहुंच अपने आप में चुनौतीपूर्ण है।
- अनौपचारिक कार्यबल का बड़ा हिस्सा गांव से शहरों की ओर पलायन कर रहा है, जिसके परिणामस्वरूप शहरी क्षेत्रों में मलिन बस्तियों का अनियोजित विकास हुआ है तथा बुनियादी स्वास्थ्य और स्वच्छता सुविधाओं की कमी, अपर्याप्त आवास और खाद्य असुरक्षा में वृद्धि हुई है।
- ग्लोबल वार्मिंग अथवा गर्म होती धरती की वैश्विक विपदा को खाद्य सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा माना जा रहा है। वैज्ञानिक अनुमान बताते हैं कि यदि हम औसत तापमान बढ़ोतरी पर कोई सार्थक रोक नहीं लगाते तो सन् 2050 तक औसत तापमान में 2.2 से 2.9°C तक की वृद्धि हो सकती है। इससे रबी एवं खरीफ की फसलों के साथ फलों, सब्जियों, दूध उत्पादन तथा मछली उत्पादन पर भी अधिकाधिक प्रभाव पड़ने की सम्भावना जताई जा रही है। अनुमान है कि तापमान बढ़ोत्तरी के वर्तमान रुख के अनुसार वर्ष 2050 तक गेहूं के कुल उत्पादन में 01 करोड़ 17 लाख टन तक की कमी आ सकती है। आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु एवं कर्नाटक में बरानी चावल के उत्पादन में 10-15% तक बढ़ोत्तरी हो सकती है, किन्तु पंजाब, हरियाणा में इसमें 15-17% की कमी आ सकती है। यहीं तक नहीं देश के अन्य क्षेत्रों में भी चावल की पैदावार में 6-8% की गिरावट देखी जा सकती है। सन् 2050 तक दूध उत्पादन में डेढ़ करोड़ की गिरावट की अशंका जताई जा रही है। तापमान बढ़ने से हमारे देश के शीतोष्ण क्षेत्रों में उगने वाले फलों के क्षेत्र एवं उत्पादन के लिहाज से प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका जताई जा रही है। इसी भाँति सागरों एवं नदियों का औसत तापमान बढ़ने से मछली उत्पादन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

भारत जैसे विशाल और आर्थिक विषमताओं वाले देश में दूर-दराज के दुर्गम इलाकों तक और समाज के सबसे कमजोर वर्ग तक अनाज की भौतिक और आर्थिक पहुंच सुनिश्चित कर पाना एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है। यह कार्य अनुकूल शिश नीतियों, कारगर योजनाओं और प्रभावी क्रियान्वयन के बिना असंभव सा लगता है।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (NFSA) 2013 अंतर्गत कानूनी रूप से लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत सब्सिडी वाले अनाज को भारत की 67% आबादी को पहुंचाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसके अतिरिक्त सरकार राष्ट्रीय पोषण

मिशन, काम के बदले अनाज कार्यक्रम, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन आदि का संचालन खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु कर रही है। इस अधिनियम के अन्तर्गत राशन कार्ड जारी करने का उद्देश्य 18 वर्ष या उससे अधिक आयु के घर की सबसे बड़ी महिला को घर की मुखिया होना अनिवार्य है।

खाद्य सुरक्षा मिशन-2007 - भारत सरकार द्वारा उपरोक्त समस्याओं के समाधान हेतु क्षेत्र विस्तार एवं उत्पादकता में वृद्धि के माध्यम से चावल गेहूं, दालों, मोटे अनाजों एवं नगदी फसलों के उत्पादन में संधारणीय रूप से वृद्धि करना है, किन्तु इस दिशा में और अधिक इच्छाशक्ति दिखाने एवं कृषकों को सब्सिडी पर प्रौद्योगिकी मुहैया करानी होगी।

सरकार के द्वारा चलाये गये / जा रही अन्य योजनाएं

- 1960 के दशक में हरित क्रान्ति का सूत्रपात किया गया, किन्तु यह भारत के सभी क्षेत्रों तक नहीं पहुंच पाया।
- 1960 के दशक में ही सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) की शुभारम्भ किया गया। इसके तहत उचित कीमत पर अनाज सुलभ कराना था।
- 1997 में बीपीएल कार्ड जारी कर कम कीमत पर अन्न मुहैया कराया गया।
- सन 2000 में अन्त्योदय अन्न योजना प्रारम्भ की गई।

निष्कर्ष : उपर्युक्त अनेक चिन्ताओं के बावजूद खाद्य सुरक्षा के भविष्य को लेकर सरकार, योजनाकार और अन्य संबंधित संस्थाएं लगातार गहन-विचार-विमर्श करते हुए नई पहल कर रहे हैं। इसलिए आशा के साथ विश्वास भी किया जाना चाहिए कि भारत खाद्य सुरक्षा निरन्तर एवं सतत् बनी रहेगी।

प्र. "जब तक भारत में जनसंख्या वृद्धि अवरूद्ध नहीं की जाती, तब तक आर्थिक विकास को उसके सही रूप में नहीं देखा जा सकता।" इस कथन का परीक्षण कीजिए।

Key to Answer

- भारत में जनगणना, 2011 के अनुसार जनसंख्या के परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करें।
- जनसंख्या विस्फोट का उल्लेख करें।
- आर्थिक विकास पर जनसंख्या के नकारात्मक प्रभावों की चर्चा कीजिए।
- निष्कर्ष में जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण के उपाय सुझाते हुए जनसंख्या लाभांश का उल्लेख करते हुए उत्तर का समापन करें।

उत्तर - जनगणना, 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या 121 करोड़ थी। एक अनुमान के अनुसार भारत की जनसंख्या 2019 में बढ़कर 13 करोड़ हो गयी है, जो भारत जैसे विकासशील देश के लिए अत्यन्त भयावह स्थिति है क्योंकि यहां प्राकृतिक भूभाग एवं संसाधन अत्यन्त सीमित हैं। यू.एन. वर्ल्ड पॉपुलेशन प्रोस्पैक्ट्स के अनुसार भारत की जनसंख्या 2027 में चीन की जनसंख्या को पार कर जाएगी। यह स्थिति भारत में जनसंख्या विस्फोट की स्थिति को दर्शाती है।

किसी भी देश में उसकी बढ़ती हुई जनसंख्या अर्थव्यवस्था को दो रूपों में प्रभावित करती है। एक ओर यह आर्थिक विकास के लिए कुशलतम मानवीय संसाधन उपलब्ध कराती है, वहीं दूसरी ओर यह अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव भी डालती है। तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास की गति को धीमी कर देती है क्योंकि तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि के कारण उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय आय का अधिकांश भाग व्यय कर दिया जाता है। जिसके फलस्वरूप जनंसख्या वृद्धि के अनुरूप उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पाती है। फलतः लोगों की प्रति व्यक्ति निम्न आय उनके जीवन स्तर को को निम्न कर देती है और

उनकी उत्पादन क्षमता घट जाती है। परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की दर बढ़ने लगती है। इस प्रकार बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक विकास के मार्ग पर अवरोधक का कार्य करती है।

अतः स्पष्ट है कि जब-तक जनसंख्या वृद्धि अवरुद्ध नहीं की जाती, तब-तक आर्थिक विकास को उसके सही रूप में नहीं देखा जा सकता। इस आधार पर भी कहा जा सकता है कि तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक विकास के मार्ग में एक दीवार की भांति खड़ी होकर बाधा पहुंचाती है। जिससे आर्थिक प्रगति का प्रयास सीमित हो जाता है।

भारत में तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या देश की आर्थिक प्रगति के समक्ष निम्नलिखित समस्या उत्पन्न करती है।

1. **आय, बचत एवं विनियोग को प्रभावित करती है:** आर्थिक विकास आय सृजन का सूचक होता है, परन्तु बढ़ती हुई जनसंख्या इस सृजित आय का अधिकांश भाग अपने में अवशोषित कर लेती है, क्योंकि आय का अधिकांश भाग जनसंख्या के उपयोग व्यय से खर्च किया जाता है। फलस्वरूप बचत एवं विनियोग में कमी होती है और आर्थिक विकास अवरुद्ध हो जाता है।
2. **तीव्र जनसंख्या वृद्धि से खाद्यान्न की समस्या :** बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण खाद्यान्न की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए सरकार को अरबों रुपए प्रति वर्ष राष्ट्रीय आय एवं विदेशी पूंजी का भाग खर्च करना पड़ता है। जिसके फलस्वरूप इन आयों का प्रयोग आर्थिक प्रगति में करने की जगह जनसंख्या की खाद्यान्न आपूर्ति में व्यय किया जाता है। फलतः आर्थिक विकास की दर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
3. **बेरोजगारी में वृद्धि :** जनसंख्या वृद्धि के कारण कार्यशील जनसंख्या में वृद्धि होती है। लेकिन रोजगार के साधन उस अनुपात में नहीं बढ़ते हैं। जिसके परिणामस्वरूप बेरोजगारी की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।
4. **आश्रितों की संख्या में वृद्धि :** जनसंख्या बढ़ने के कारण आश्रितों की संख्या में लगातार वृद्धि होती जा रही है। जिसके परिणामस्वरूप कार्यशील जनसंख्या पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। वर्तमान में लगभग 66% लोग आश्रित हैं।
5. **उपयोगी सेवाओं में भीड़** : बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण सड़क, यातायात रेलवे, शिक्षा इत्यादि सेवाओं में अत्यधिक भीड़ बढ़ती जा रही है, जिसके कुशल प्रबन्धन एवं सुरक्षा के लिए सरकार को अधिक व्यय करना पड़ता है। इस प्रकार राष्ट्रीय आय का एक बड़ा अंश, इन अनुत्पादक कार्यों में खर्च हो जाता है जिसके कारण आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न हो जाती है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कई अन्य आर्थिक विकास पर दुष्परिणाम देखने को मिलते हैं। जैसे-

- कृषि एवं उद्योग के विकास में बाधा।
- मंहगाई में वृद्धि
- उत्पादन तकनीक पर प्रभाव आदि।

निष्कर्ष - उपर्युक्त विवरणों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक विकास के लिए बाधक सिद्ध होती है, लेकिन इसके बावजूद जनसंख्या - लाभांश के रूप में यह देश के विकास में सहायक भी होती है। अतः कहा जा सकता है कि तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या, अर्थव्यवस्था में दोहरी भूमिका अदा करती है, किन्तु नकारात्मक पक्ष की अधिकता के कारण, यह विकास के पथ पर अवरोधक का कार्य करती है।

प्र. वर्तमान में भारतीय कृषि की प्रमुख समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए उन्हें दूर करने हेतु सुझाव दें। साथ ही भारतीय कृषि के विकास हेतु सरकार द्वारा चलाए जा रहे प्रमुख कार्यक्रमों की चर्चा करें।

Key to Answer

भरतीस कृषि की समस्याओं का उल्लेख करें। इन समस्याओं को दूर करने हेतु अपने सुझाव दें, भारतीय कृषि के विकास हेतु सरकार द्वारा चलाए जा रहे कार्यक्रमों एवं योजनाओं का उल्लेख करें।

उत्तर - कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। वर्तमान में सकल घरेलू उत्पाद में इस क्षेत्र का योगदान 18% है। हाल ही में जारी किए गए NSSO के रिपोर्ट के अनुसार 64% भारतीय जीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं। 74% लोगों को इस क्षेत्र में रोजगार मिला हुआ है। मानसून के अच्छे होने की स्थिति में खाद्यान्न उत्पादन के मामले में आत्मानिर्भरता की स्थिति प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार की स्थिति के बावजूद वर्तमान में भारतीय कृषि के साथ अनेक समस्याएं देखने को मिलती है, जैसे-

1. **सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याएं-**
   - अधिकं जनसंख्या का होना।
   - अशिक्षा का व्याप्त होना तथा अंधविश्वास।
   - भूमि का अलाभकारी विभाजन।
2. **आर्थिक समस्याएं-**
   - कृषि साख की उचित व्यवस्था का अभाव।
   - वैज्ञानिक कृषि के लिए आवश्यक संसाधनों का अभाव।
   - कृषि मूल्य नीति की समस्या।
   - भूमि सुधार की समस्या।
3. **प्राकृतिक और प्रशासनिक समस्याएं-**
   - मानसून पर निर्भरता।
   - कीटों के अधिक प्रकोप की समस्या।
   - सरकार की निष्क्रियता भी इसके मार्ग में बाधक है।
   - किसानों का भाग्यवादी होना।

भारतीय कृषि की समस्याओं को दूर करने, कृषि विकास तथा किसानों की आय को दुगुना करने हेतु सरकार ने अनेक कार्यक्रम संचालित किए है जिनका विवरण निम्नवत है-

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना- "हर खेत को पानी" के उद्देश्य के साथ 1 जुलाई, 2015 से प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना की शुरुआत की गयी ताकि सिंचाई आपूर्ति श्रृंखला, जल संसाधनों, नेटवर्क वितरण और फार्म लेवल अनुप्रयोगों में सर्वागीण समाधान किया जा सके। इसका उद्देश्य " प्रति बूंद अधिक फसल" पाना है। साथ ही, वर्षों से लंबित मध्यम एवं बड़ी सिंचाई योजनाओं को 4 वर्षों में प्राथमिकता के आधार पर पूरा किया जाना है। इसके अतिरिक्त जल संचयन एवं प्रबंधन के साथ ही वाटर शेड डेवलपमेंट का कार्य भी तेज गति से कार्यन्वित हो रहा है।

प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना- प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना के तहत एग्रो प्रोसैसिंग क्लस्टरों के फार्वर्ड एवं बैकवर्ड लिंकेज पर कार्य करके फूड प्रोसेसिंग क्षमताओं का विकास किया जाएगा जिससे 20 लाख किसानों को लाभ मिलेगा और करीब साढ़े पांच लाख लोगों के लिए रोजगार के अवसर पैदा होंगे।

ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार (e-NAM) योजना- विपणन (कृषि बाजार) में सुधार के लिए केंद्र सरकार कृषि बाजार में सुधार पर जोर दे रही है। तीन सुधारों के साथ ई-राष्ट्रीय कृषि बाजार (e-NAM) योजना की शुरूआत की गई है जिसमें अभी तक 450 से अधिक मंडियों को जोड़ा जा चुका हैं। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र में बाजार सुधार की दिशा में एक मॉडल एपीएमसी एक्ट राज्यों को जारी किया गया है जिसमें निजी क्षेत्र में मंडी स्थापना, प्रत्यक्ष विपणन मंडी यार्ड के बाहर बनाने का प्रावधान है। इसके अतिरिक्त संविदा कृषि

को बढ़ावा देने के लिए सरकार एक मॉडल एक्ट बनाने का कार्य भी कर रही है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना- जोखिम, सुरक्षा एवं सहायता के लिए केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की है। खरीफ व रबी फसल में काफी कम दर तय की गई है, जो क्रमशः अधिकतम 2 प्रतिशत और 1.5 प्रतिशत है। इसमें खड़ी फसल के साथ-साथ बुवाई से पहले और कटाई के बाद के जोखिमों को भी शामिल किया गया है। नुकसान के दावों का 25 प्रतिशत भुगतान भी तत्काल ऑनलाइन किया जा रहा है। इस योजना में किसानों को फसल नुकसान के त्वरित भुगतान हेतु उपज के अनुमान के लिए ड्रोन तकनीक तथा फसल कटाई के लिए स्मार्ट फोन जैसी नई तकनीकों का उपयोग भी कई राज्यों में प्रारम्भ किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, किसानों की सुविधा के लिए इस खरीफ मौसम से कस्टमर सर्विस सेंटर एवं बैंक ऑनलाइन जैसी नई तकनीकी सुविधाओं के माध्यम से प्रीमियम राशि जमा कराने का भी प्रावधान किया गया है।

प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले नुकसान के राहत नियमों में भी सरकार ने बदलाव किए हैं। अब केवल 33 प्रतिशत फसल नुकसान होने पर भी सरकार द्वारा अनुदान दिया जा रहा है। साथ ही अनुदान की राशि को 1.5 गुना बढ़ा दिया गया है। जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव को भी कम करने के लिए अधिक सहनशीलता वाली किस्मों और पशुओं की प्रजातियों का विकास तथा प्रभावित जिलों के लिए आपातकालीन प्लान भी तैयार किए गये हैं।

किसानों को संस्थागत ऋण उपलब्ध कराने के लिए 1982 में नाबार्ड की स्थापना की गई थी। नाबार्ड प्राथमिक सहकारी समितियों को ऋण उपलब्ध कराता है ताकि ये किसानों तथा ग्रामीण लोगों को आश्यकतानुसार ऋण उपलब्ध करा सकें।

कृषि की आर्थिक समस्याओं के तत्काल निदान हेतु भारत सरकार ने किसान क्रेडिट कार्ड योजना की शुरूआत 1998-99 में की। इससे किसान न केवल कृषि संबंधी आर्थिक सहायता प्राप्त करते है बल्कि अपनी घरेलू आवश्कताओं हेतु भी ऋण प्राप्त करते है। इस ऋण की अवधि 3 वर्ष होती है।

कृषकों को नीम कोटेड यूरिया उपलब्ध कराया जाता है। नीम कोटेड यूरिया की मुख्य विशेषता यह है कि यह धीरे-धीरे घुलता है जिससे फसलों को लम्बे समय तक यूरिया मिलता रहता तथा यूरिया की बरबादी नहीं होती है। किसानों को फसल संबंधित उन्नत किस्म के बीजों तथा कृषि संबंधी जानकारी प्रदान करने के लिए सरकार ने एक टोल फ्री नम्बर 1551 जारी किया है। डीडी किसान चैनल के माध्यम से भी किसानों को कृषि संबंधी अनेक जानकारियाँ उपलब्ध करायी जाती है।

वर्तमान समय में किसान कर्ज के बोझ में दबा है जिसके कारण महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि राज्यों के किसान आत्महत्या कर रहे है। किसानों के पुराने कृषि ऋणों को केन्द्र तथा अनेक राज्यों की सरकारों ने माफ किया है। 1990 में वीपी सिंह सरकार ने 10 हजार करोड़ रूपये कृषि ऋण के रूप में माफ किए थे, 2008 में भी सरकार ने किसानो के 72 हजार करोड़ रूपये माफ किए थे। दिसम्बर, 2018 में राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, पंजाब तथा मिजोरम आदि की सरकारों ने किसाने के कर्ज माफ करते हुए उन्हें राहत दी है।

सहायक गतिविधियों का विकास - सहायक गतिविधियों से अर्थात कृषि के अनुषंगी कार्यकलापों जैसे - बागवानी, डेयरी विकास, पोल्ट्री, मधुमक्खीपालन, मत्स्य पालन, श्वेत क्रांति, नीली क्रांति, कृषि वानिकी, एकीकृत फार्मिंग (Integrated Farming) और रूरल बैकयार्ड पोल्ट्री डेवलपमेंट के जरिए किसानों की आमदनी बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे है। इन विवरणों से स्पष्ट है कि कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अति महत्वपूर्ण है किन्तु इसकी समस्याओं को दूर करने के लिए ईमानदार प्रयास की जरूरत है। जिससे अर्थव्यवस्था

में कृषि क्षेत्र के योगदान को और अधिक बढ़ाया जा सके। इसके लिए आमजन (कृषक) और सरकार दोनों को अपनी जिम्मेवारी समझनी होगी और उसके अनुकूल अपने कर्त्तव्यों का पालन करना होगा।

प्र. भारत के प्रमुख बड़े पैमाने के उद्योग भौगोलिक दृष्टि से कुछ विशेष क्षेत्रों में ही स्थापित हो पाए हैं, इसके कारणों की व्याख्या करें एवं भारत के प्रमुख बुनियादी उद्योगों की व्याख्या करें।

Key to Answer

भारत में उद्योगों के कुछ क्षेत्र विशेष में स्थापित किए जाने के प्रमुख कारकों का उल्लेख करते हुए भारत के बुनियादी उद्योगों की व्याख्या करें।

उत्तर- उद्योगों की अवस्थिति भौगोलिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक तथा आर्थिक कारकों पर निर्भर करती है। यही कारण है कि भारत में प्रमुख बड़े पैमाने के उद्योग भौगोलिक दृष्टि से कुछ विशेष क्षेत्रों में ही स्थापित हो पाये है। प्रमुख कारकों में कच्चे माल की उपलब्धि, ऊर्जा, बाजार, पूंजी, परिवहन, श्रमिक आदि प्रमुख हैं।

- **कच्चा माल-** उद्योग सामान्यतः वहीं स्थापित किये जाते हैं जहां कच्चे माल की उपलब्धता होती है। जिन उद्योगों में निर्मित वस्तुओं का भार, कच्चे माल की तुलना में कम होता है, उन उद्योगों को कच्चे माल के निकट ही स्थापित करना होता है। जैसे- चीनी उद्योग। गन्ना भारी कच्चा माल है जिसे अधिक दूरी तक ले जाने से परिवहन की लागत बहुत बढ़ जाती है और चीनी के उत्पादन मूल्य में वृद्धि हो जाती है। लोहा और इस्पात उद्योग में उपयोग में आने वाले लौह-अयस्क और कोयला दोनों ही वजन ह्रास और लगभग समान भार के होते हैं। अतः अनुकूलनतम स्थिति कच्चा माल व स्रोतों के मध्य होगी जैसे जमशेदपुर।
- **शक्ति (ऊर्जा)** - उद्योगों में मशीन चलाने के लिये शक्ति की आवश्यकता होती है। शक्ति के प्रमुख स्रोत - कोयला, पेट्रोलियम, जल-विद्युत, प्राकृतिक गैस तथा परमाणु ऊर्जा है। लौह-इस्पात उद्योग कोयले पर निर्भर करता है, इसलिये यह उद्योग खानों के आस-पास स्थापित किया जाता है। छत्तीसगढ़ का कोरबा तथा उत्तर प्रदेश का रेनूकूट एल्युमीनियम उद्योग विद्युत शक्ति की उपलब्धता के कारण ही स्थापित हुए हैं।
- **श्रम-** स्वचालित मशीनों तथा कंप्यूटर युग में भी मानव श्रम के महत्त्व को प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता। अतः सस्ते व कुशल श्रम की उपलब्धता औद्योगिक विकास का मुख्य कारक है। जैसे- फिरोजाबाद में शीशा उद्योग, लुधियाना में होजरी तथा जालंधर व मेरठ में खेलों का सामान बनाने का उद्योग मुख्यतः सस्ते कुशल श्रम पर ही निर्भर है।
- **परिवहन एवं संचार** - कच्चे माल को उद्योग केंद्र तक लाने तथा निर्मित माल की खपत के क्षेत्रों तक ले जाने के लिये सस्ते एवं कुशल यातायात की प्रचुर मात्रा में होना अनिवार्य है। मुम्बई, चेन्नई, दिल्ली जैसे महानगरों में औद्योगिक विकास मुख्यतः यातायात के साधनों के कारण ही हुआ है।
- **बाजार-** औद्योगिक विकास में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका तैयार माल की खपत के लिये बाजार की है।
- **सस्ती भूमि और जलापूर्ति** - उद्योगों की स्थापना के लिये सस्ती भूमि का होना भी आवश्यक है। दिल्ली में भूमि का अधिक मूल्य होने के कारण ही इसके उपनगरों में सस्ती भूमि पर उद्योगों ने द्रुत गति से विकास किया है।

उपर्युक्त भौगोलिक कारकों के अतिरिक्त पूंजी, सरकार की औद्योगिक नीति, औद्योगिक जड़त्व, बैंकिंग तथा बीमा आदि की सुविधा ऐसे गैर-

भौगोलिक कारक हैं जो किसी स्थान विशेष में उद्योगों की स्थापना को प्रभावित करते हैं।

भारत के महत्वपूर्ण उद्योग : भारत में अनेक उद्योग की स्थापना की गई है जिनका विवरण निम्नवत् है -

- **लौह इस्पात उद्योग:** देश का पहला उद्योग बंगाल आयरन वर्क्स कम्पनी की स्थापना 1874 ई. में प. बंगाल के कुल्टी में की की गई। 1907 ई. में जमशेदजी टाटा द्वारा साकची (जमशेदपुर) में टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी की स्थापना की गई। इसमें इस्पात का उत्पादन 1913 ई. से आरम्भ हुआ।
- **सीमेंट उद्योगः** सीमेंट का उत्पादन एवं उपभोग किसी देश के विकास का मापदंड है। भारत में सीमेंट उद्योग के विकास की वास्तविक शुरुआत 1914 ई. में हुई, जब पोरबंदर (गुजरात) में सीमेंट का कारखाना लगाया गया। 1934 ई. में एसोसिएट सीमेन्ट कम्पनी लि. (ACC) की स्थापना की गई। भारत का सबसे बड़ा सीमेंट उत्पादक राज्य राजस्थान है।
- **रासायनिक उर्वरक उद्योगः** भारत में रासायनिक खाद का पहला कारखाना 1906 ई. में तमिलनाडु में सुपर फॉस्फेट के उत्पादन हेतु लगाया गया। 1939 ई. में कर्नाटक के बैलागुला में आमोनिया कारखाना लगाया गया। सिन्दरी में 1951 ई. में एक बड़ा कारखाना लगाया गया, जो एशिया का सबसे बड़ा रासायनिक उर्वरक का संयंत्र है। उर्वरक उत्पादन एवं उपभोग में भारत का विश्व में चीन और अमेरिका के बाद तीसरा स्थान है। भारत अभी भी नाइट्रोजन उर्वरकों की अपनी खपत का 94% व फास्फेटी उर्वरकों की खपत का 82% ही उत्पादन कर पाता है। पोटाशी उर्वरकों के लिए भारत पूरी तरह से आयात पर निर्भर है।
- **वस्त्र उद्योगः** वस्त्र उद्योग, भारत का सबसे बड़ा, संगठित एवं व्यापक उद्योग है, जो देश के औद्योगिक उत्पादन का 14%, सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 4% कुल विनिर्मित औद्योगिक उत्पादन का 20% व कुल निर्यातों के 24.6% की आपूर्ति करता है। भारत में पहला सफल सूती कपड़ा कारखाना मुम्बई में कवासजी डावर द्वारा 1854 ई. में खोला गया, जिसमें उत्पादन कार्य 1856 ई. से आरम्भ हुआ। सर्वाधिक सूती मिलें तमिलनाडु (300) राज्य में सर्वाधिक मिलें कोयंबटूर जिलें में स्थापित हैं। मुम्बई को भारत के सूती वस्त्रों की राजधानी, कानपुर को उत्तर भारत का मैनचेस्टर, कोयम्बटूर को दक्षिण भारत का मैनचेस्टर एवं अहमदाबाद को भारत का बोस्टन कहा जाता है।
- **जूट उद्योग:** भारत में जूट को सोने का रेशा (Golden Fibre) कहा जाता है। भारत में जूट का प्रथम कारखाना 1859 ई. में पश्चिम बंगाल में रिसरा में लगाया गया। भारत की अधिकांश जूट मिलें पश्चिम बंगाल में स्थित हैं (लगभग 80%)। भारत सम्पूर्ण विश्व के 35% जूट के सामानों का निर्माण करता है और वह विश्व का सबसे बड़ा जूटों का समान बनाने वाला देश है।
- **ऊनी वस्त्र उद्योगः** भारत में ऊन की पहली मिल 1870 ई. में कानपुर में स्थापित की गई। वर्तमान समय में ऊनी वस्त्र उद्योग मुख्य रूप से पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र एवं गुजरात राज्यों में स्थित है। भारत विश्व का एक मात्र देश है जहाँ शहतूती, एरी, टसर एवं मूंगा चारों किस्म की रेशम का उत्पादन होता है। चीन के बाद भारत विश्व में प्राकृतिक रेशम उत्पन्न करने वाला दूसरा सबसे बड़ा देश है। विश्व के कुल उत्पादन का 16% रेशम का उत्पादन भारत में होता है। भारत में आधे से अधिक रेशम का उत्पादन सिर्फ कर्नाटक से होता है।
- **चमड़ा उद्योगः** कानपुर भारत का सबसे बड़ा चर्म उत्पादक शहर है। इसके अतिरिक्त आगरा, बाटानगर, मद्रास, कोलकाता, मुंबई एवं

फरीदाबाद चमड़ा उद्योग के महत्त्वपूर्ण केन्द्र हैं। भारत विश्व में चमड़े का सबसे बड़ा उत्पादक एवं निर्यातक है।

- **दवा निर्माण उद्योगः** दवा निर्माण उद्योग के प्रमुख स्थान दिल्ली, मुम्बई, अहमदाबाद, पुणे, पिम्परी (पेन्सिलीन), हैदराबाद, कानपुर, मथुरा, हरिद्वार एवं ऋषिकेश आदि।
- **कागज उद्योगः** भारत में आधुनिक ढंग का पहला कारखाना 1716 ई. में चेन्नई के समीप ट्रंकोवार नामक स्थान पर डॉ. विलियम द्वारा स्थापित किया गया, जो असफल रहा। कागज का पहला सफल कारखाना लखनऊ में 1879 में स्थापित किया गया। पश्चिम बंगाल कागज का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है। भारत में अखबारी कागज का पहला कारखाना 1947 ई. में नेपानगर (म.प्रदेश) में लगाया गया।
- **चीनी उद्योगः** भारत विश्व में ब्राजील के बाद चीनी उत्पादन करने वाला दूसरा सबसे बड़ा देश है। देश में चीनी मिलों की सर्वाधिक संख्या महाराष्ट्र राज्य में है। गन्ना उत्पादन में उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश प्रमुख राज्य है जबकि चीनी उत्पादन में उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु और गुजरात प्रमुख राज्य है। 20 अगस्त, 1998 ई. को केन्द्र सरकार ने चीनी उद्योग पर 1931 ई. से लागू लाइसेंस व्यवस्था समाप्त कर दी। सरकार ने 2002-03 ई. के दौरान चीनी उद्योग को पूरी तरह से नियंत्रण मुक्त कर दिया।
- **अभियान्त्रिकी उद्योगः** भारी इंजीनियरिंग निगम लि. की स्थापना सोवियत रूस के सहयोग से राँची में 1958 में की गई थी। हिन्दुस्तान मशीनरी टूल्स लि. की स्थापना स्विट्जरलैण्ड के सहयोग से बंगलुरू में 1963 ई. में की गई थी। इसके अन्दर पाँच कारखानें कार्यरत हैं- बंगलुरू, पिंजौर (हरियाणा), कालमसेरी (केरल), श्रीनगर एवं हैदराबाद। हैवी इलेक्ट्रिकल प्लांट- रानीपुर (हरिद्वार), तिरुचिरापल्ली, हैदराबाद, भोपाल, नैनी (इलाहाबाद), पटियाला एवं रानीखेत।
- **रेलवे उद्योगः** भारत रेल के इंजनों तथा सवारी एवं माल ढोने वाले डिब्बों के निर्माण में आत्मनिर्भर है। रेलवे उपकरण के निर्माण के लिए 1921 ई. में पेनिन्सुलर लोकोमोटिव कम्पनी की स्थापना सिंहभूम (झारखंड) में की गई। इसको 1945 ई. में टाटा समूह ने खरीद कर टाटा इंजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव कम्पनी (टेल्को) का नाम दिया। रेलवे इंजन बनाने का कारखाना. चितरंजन (स्थापना-1950 ई.) वाष्प एवं विद्युत इंजन वाराणसी (स्थापना 1961 ई., डीजल इंजन), जमशेदपुर (लोकोमोटिव) एवं भोपाल (विद्युत इंजन) है।

नोट : 10 अप्रैल, 2018 को बिहार के मधेपुरा में निर्मित भारत का पहला सबसे शक्तिशाली इलेक्ट्रिक लोकोमोटिव इंजन (12000 अश्व शक्ति) को राष्ट्र को समर्पित किया गया।

- **वायुयान निर्माण उद्योगः** देश में वायुयान निर्माण का प्रथम कारखाना 1940 ई. में बंगलुरू में हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट कम्पनी के नाम से स्थापित किया गया। इसका वर्तमान नाम-हिन्दुस्तान एयरोनॉटिक्स लि. (HAL) है। वायुयान का ढांचा बंगलुरू, कानपुर एवं नासिक में, इंजिन कोरापुट एवं इलेक्ट्रॉनिक्स हैदराबाद में बनाया जाता है। इसकी अन्य इकाइयां बैरकपुर, लखनऊ आदि स्थानों पर हैं।
- **जहाजरानी उद्योगः** भारत में जलयान निर्माण का पहला कारखाना 1941 ई. में मे. सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कं. द्वारा विशाखपत्तनम में स्थापित किया गया। 1952 ई. में सरकार द्वारा इसका अधिग्रहण करके हिन्दुस्तान शिपयार्ड विशाखापत्तनम नाम दिया गया। कोचीन शिपयार्ड (जपान की सहायता से) देश का नवीनतम एवं सबसे बड़ा पोत प्रांगण है। यहां 1 लाख DWT की क्षमता वाले पोत बनाए जाते हैं। हिन्दुस्तान शिपयार्ड - (विशाखापत्तनम) में

मालवाहक जहाज बनाये जाते हैं। मझगाँव डॉक (मुम्बई) में नौसेना के फ्रिगेट किस्म के जहाज बनाए जाते हैं। जबकि गार्डन रीच वर्कशाप (कोलकत्ता)। गोवा शिपयार्ड (गोवा) में सुरक्षा संबंधी पोत भी बनाये जाते हैं।

उपरोक्त के अतिरिक्त मोटर गाड़ी, साइकिलए ट्रैक्टर, बिजली के उपकरण उद्योग, टेलीफोन उद्योग, खेल का सामान, चूड़ी उद्योग, हीरा तरासना आदि उद्योगों का भी भारत में काफी विकास हुआ है।

Key to Remember

- भारत में बड़े उद्योगों की स्थापना हेतु उत्तरदायी प्रमुख कारक
- कारणों की व्याख्या
- भारत के प्रमुख बुनियादी उद्योगों को उल्लेख

प्र. कृषि आधारित उद्योग का विकास ग्रामीण भारत की खाद्य सुरक्षा, पोषण सुरक्षा, आजीविका सुरक्षा सहित सामाजिक-आर्थिक रूपांतरण का वाहक सिद्ध हो सकता है। उक्त कथन का परीक्षण करते हुए इस उद्योग के विकास की संभावनाओं एवं चुनौतियों पर प्रकाश डालिये।

उत्तर : भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ के लगभग दो-तिहाई लोगों का भरण-पोषण कृषि पर निर्भर है। यहाँ तक कि औद्योगिक क्षेत्र की प्रगति और उपलब्धि भी काफी हद तक कृषि व कच्चे माल की आपूर्ति पर निर्भर है। कृषि में फसल उत्पादन के अलावा पशुपालन, बागवानी, मत्स्य पालन, रेशम उत्पादन आदि सभी क्रियाओं को शामिल किया जाता है। वर्तमान में भारत की जीवीए में कृषि क्षेत्र का योगदान लगभग 18% है और आज भी यह क्षेत्र आजीविका का प्रमुख आधार है।

- कृषि क्षेत्र के विकास में कृषि आधारित उद्योगों का काफी महत्त्व है। सामान्यतः कृषि आधारित उद्योग वे हैं जो कृषि की उपजों को कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त करते हैं, उदाहरणस्वरूप, यदि वस्त्र उद्योग को ही लिया जाए तो इसमें सूती, ऊनी व रेशमी वस्त्र तथा पटसन से बने तथा रेशों से बने सभी प्रकार के वस्त्र शामिल किये जाते हैं। वस्त्र उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। औद्योगिक उत्पादन, रोज़गार के अवसर जुटाने तथा विदेशी मुद्रा अर्जित करनें में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस उद्योग के विकास पर भारतीय अर्थव्यवस्था काफी हद तक निर्भर करती है।
- सूती वस्त्र उद्योग के रूप में पटसन उद्योग भारत का दूसरा बड़ा वस्त्र उद्योग है। चीनी उद्योग भारत का सूती कपड़ा उद्योग के बाद दूसरा सबसे बड़ा कृषि आधारित उद्योग है। भारत में चीनी का मुख्य स्रोत गन्ना है। यह उद्योग लगभग 4 लाख लोगों को आजीविका प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त लगभग 2.50 करोड़ कृषक भी गन्ने की कृषि करके इस उद्योग से लाभ उठाते हैं।
- कृषि आधारित उद्योगों में खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का व्यापक महत्त्व है। इसके तहत आलू चिप्स, कुरकुरे, टोमैटो कैचअप, चिली सॉस, डिब्बा बंद खाद्य उत्पाद आदि शामिल किये जाते हैं। इसके विकास के द्वारा जहाँ खाद्य एवं पोषण सुरक्षा सुनिश्चित होती है, वहीं बड़ी संख्या में स्थानीय स्तर पर रोज़गार सृजित होते हैं। इस प्रकार यह आजीविका सुरक्षा में भी सहायक है।
- इसके अलावा, देश के विभिन्न भागों में बेंत, शहतूत, सरई, खस आदि उगते हैं, जो कुटीर उद्योग को कच्चा माल प्रदान करते हैं। इस उद्योग से ग्रामीण श्रमिकों को रोज़गार के अवसर मिलते हैं। और वे खाली समय में काम करके अपनी आय में वृद्धि करते हैं। कुटीर उद्योग देश के लगभग सभी भागों में विकसित है, इसमें निम्न स्तर की प्रौद्योगिकी की आवश्यकता होती है। इस प्रकार ये आजीविका

सुरक्षा के साथ-साथ सामाजिक आर्थिक रूपांतरण में भी सहायक हैं।

भारत में कृषि आधारित उद्योगों के विकास की संभावनाएँ

- किसी भी उद्योग के विकास हेतु कच्चा माल, श्रम आपूर्ति, पूंजी, तकनीक, उद्यमशीलता आदि तत्त्वों की आवश्यकता होती है। कृषि आधारित उद्योगों के विषय में भी ये पूर्व- दशाएं कुछ निश्चित अनुपात में लागू होती हैं।
- भारत में भंडारण सुविधा की अपर्याप्तता तथा बाज़ार केंद्रों की दुरुस्त अवस्थिति में लाखों टन खाद्यान्न एवं फल-सब्जी बर्बाद हो जाते हैं। कृषि आधारित उद्योगों के विकास से इनकी स्थानीय स्तर पर मांग सृजित होगी जिससे इनकी बर्बादी कम होगी।
- पुनः भारत में दुग्ध एवं दुग्ध उत्पादों का बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है लेकिन इसके प्रसंस्करण की सुविधा काफी निम्न है, जिससे इसका दूरस्थ क्षेत्रों के बाज़ारों एवं निर्यात तक पहुँच नहीं हो पाती।
- भारत में कृषि क्षेत्र में अतिरेक श्रम बल लगा हुआ है। कौशल विकास कार्यक्रम को गाँव एवं प्रखंड स्तर पर लागू कर इन श्रमबलों को प्रशिक्षित औद्योगिक श्रमबल में रूपांतरित किया जा सकता है।
- यद्यपि औद्योगिक विकास में पूंजी की कमी एक बड़ी समस्या है, फिर भी हाल के वर्षों में सरकार की नीतियों के चलते कृषि क्षेत्र के वित्त प्रवाह में भारी वृद्धि हुई है। साथ ही वित्तीय संस्थाओं द्वारा उद्यमशीलता को प्रोत्साहन एवं वित्तीयन की पर्याप्त सुविधा दी जा रही है।
- भारत की विशाल आबादी का देशी बाज़ार है। अतः यह कृषि आधारित उद्योगों के मांग की दशा उत्पन्न कर उनके विकास में सहायक है। ग्राहक जागरूकता कार्यक्रमों द्वारा ऐसे स्वदेशी कृषि उत्पादों के उपयोग को प्रोत्साहन दिया जा सकता है। यथा- पतंजलि के उत्पाद।

कृषि आधारित उद्योगों की चुनौतियाँ

- पूंजी एवं तकनीकी दक्षता की कमी।
- आधारभूत संरचना के विकास की कमी। अभी भी अनेकों गाँव बारहमासी परिवहन योग्य सड़क सुविधा से नहीं जुड़े हैं।
- भारतीय कृषक समाज की शिक्षा एवं साक्षरता का स्तर काफी निम्न कुशल श्रम की आपूर्ति करने में काफी पीछे है। साथ है। अतः ही उनमें उद्यमशीलता का अभाव है।
- प्रशासनिक नीतियाँ किसान फ्रेंडली नहीं होने से ऐसी पहलें व्यावहारिक रूप से सतह पर नहीं आ पाती हैं। भ्रष्टाचार इसमें सबसे बड़ी रुकावट है।
- भारतीय समाज की आधी आबादी अर्थात् महिलाओं को प्रत्यक्ष अवसर प्रदान नहीं किया जाना है। यद्यपि ये बाधा धीरे-धीरे धूमिल हो रही है फिर भी यह एक बड़ी समस्या बनी हुई है।

उपरोक्त चुनौतियों के बावजूद सरकार द्वारा कृषि आधारित उद्योगों के विकास की व्यापक पहल की जा रही है, जिसमें कौशल विकास कार्यक्रम, प्रक्रियाओं का सरलीकरण, पर्याप्त वित्तीय प्रवाह की सुविधा, तकनीकी उन्नयन, नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों का विकास आदि प्रमुख है। अतः भविष्य में ये उद्योग समाज एवं अर्थव्यवस्था में अपनी व्यापक भागीदारी सुनिश्चित करेंगे।

प्र. कृषि क्षेत्र में विद्युत के महत्त्व को बताएँ। सरकार ने किसानों तक विद्युत की पहुँच सुनिश्चित करने के लिये कौन-से प्रयास किये हैं?

उत्तर : बदलते वैश्विक परिदृश्य के साथ आज कृषि क्षेत्र में अनेक प्रकार की समस्याएँ देखी जा रही हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण बदलते मौसम के मिज़ाज से कृषि के अनुकूल वर्षा न होने से कृषि सिंचाई हेतु विद्युत का महत्त्व अपरिहार्य है। भारतीय कृषि में सिंचाई, हरित क्रांति के आगमन के बाद उन्नत बीज एवं रासायनिक उर्वरकों में वृद्धि के साथ-साथ कृषि का मशीनीकरण भी हुआ है। वर्तमान समय में लगभग सभी कृषि-कार्यों में मानव एवं पशुओं के स्थान पर ट्रैक्टर, हार्वेस्टर, थ्रेसर, ट्यूबवेल, पावर ट्रिलर जनरेटर आदि का प्रयोग बहुतायत रूप में हो रहा है, जिनके लिये विद्युत की आवश्यकता होती है। हालाँकि, इनमें से कुछ यंत्र डीज़ल के द्वारा चलते हैं तथा कुछ यंत्र विद्युत द्वारा चलते हैं। कटाई, सिंचाई, प्रसंस्करण, भंडारण के लिये विद्युत का उपयोग किया जाता है।

- मुख्य रूप से कृषि में विद्युत का उपयोग सिंचाई के लिये किया जाता है, क्योंकि मानसून की बदलती प्रवृत्ति के कारण कृषि हेतु सही समय पर वर्षा नहीं होती, जिससे फसलों के सूखने का संकट मँडराने लगता है। इस समस्या से निजात पाने हेतु ट्यूबवेल द्वारा कृषि सिंचाई की जाती है, जिसके लिये विद्युत अत्यधिक आवश्यक है।
- कृषि के विकास हेतु किसानों को उचित दर पर विद्युत उपलब्ध कराना अति आवश्यक है क्योंकि अभी भी (2011 की जनगणना के अनुसार) देश की लगभग 55 प्रतिशत जनसंख्या कृषि और इससे संबंधित गतिविधियों से जुड़ी हुई है। कृषि के विकास में काफी हद तक उन्नति हुई है फिर भी आर्थिक विकास हेतु अनेक कार्य करना बाकी है। वर्तमान समय में भारत ऊर्जा संकट के दौर में है, इसलिये देश के लगभग सभी आर्थिक क्रिया-कलापों में विद्युत की कमी महसूस की जा रही है। इस कमी को दूर करने हेतु सरकार निरंतर प्रयासरत है।
- भाखड़ा नांगल परियोजना के द्वारा पंजाब - हरियाणा को प्रचुर मात्रा में विद्युत उपलब्ध होने लगी थी, जिससे हरियाणा राज्य ने अपनी कुल विद्युत खपत का 40 प्रतिशत से अधिक विद्युत कृषि क्षेत्र के लिये उपयोग किया, अतः यह राज्य कृषि क्षेत्र में अग्रिम राज्य बन गया। इसी प्रकार मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, गुजरात, राजस्थान आदि में भी विद्युत का उपयोग कृषि कार्य के लिये किया जाने लगा है। इसी कारण मध्य प्रदेश ने लगातार 5वीं बार 'कृषि कर्मण पुरस्कार' प्राप्त किया है। हालाँकि, पूर्वी राज्यों में कृषि - कार्य के लिये 10 प्रतिशत से कम विद्युत का प्रयोग होता है। उपर्युक्त सभी उदाहरण कृषि में विद्युत की उपयोगिता को दर्शाते हैं।
- भारत में वर्ष 1950-51 में कृषि में केवल 3.9 प्रतिशत बिजली का प्रयोग किया जाता था जो 2015-16 में बढ़कर लगभग 17.89 प्रतिशत हो गया है। कृषि के विकास हेतु भारत सरकार लगातार अनेक प्रयास कर रही है। अप्रैल 2005 में ग्रामीण विकास हेतु राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना (अब पंडित दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना) प्रारंभ की गई, जो एक तरह की सब्सिडीयुक्त योजना रही है। इसी प्रकार सरकार ने किसानों को वित्तीय जल सुरक्षा एवं कृषि क्षेत्र के डी - डिजिलाइजेशन के लिये किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महा-अभियान (कुसुम) योजना को प्रारंभ किया। इसके अंतर्गत 2.75 मिलियन सोलर पंप किसानों के लिये उपलब्ध कराए जाएंगे। अक्तूबर 2017 में प्रारंभ की गई सौभाग्य योजना का भी उद्देश्य शेष बचे सभी ग्रामीण एवं शहरी परिवारों को विद्युत कनेक्शन उपलब्ध कराना है।

अतः कहा जा सकता है कि कृषि के विकास के लिये विद्युत एक आधारभूत संरचना का कार्य करती है। सरकार द्वारा किसानों तक बिजली की पहुँच बनाने हेतु कई योजनाएँ प्रारंभ की गईं तो वहीं कुछ पहाड़ी क्षेत्रों में बिजली की पहुँच हेतु सौर ऊर्जा से संबंधित

संयंत्रों का प्रयोग किया जा रहा है, जिससे 'किसानों की आय दोगुना करने का सरकार का लक्ष्य' पूर्ण हो सकेगा और कृषकों का सामाजिक-आर्थिक विकास होगा।

प्र. भारत में पाए जाने वाले प्रमुख खनिजों की विस्तार से व्याख्या करें। भारतीय अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास में इनके योगदान की चर्चा करें, साथ ही भारत की नई खनिज नीति के प्रमुख बातों को बताएं।

Key to Answer

भारत में पाये जाने वाले खनिजों का उल्लेख करते हुए भारतीय अर्थव्यवस्था में इसकी योगदान की चर्चा करें। भारत की नयी खनिज नीति, 2016 के प्रमुख प्रावधानों का वर्णन करें।

उत्तर - भारत में खनिज सम्पदा का विशाल भंडार है, जिससे उद्योगों को, विशेषकर लोहा - उद्योग को कच्चा माल मिलता है। भूगर्भीय सर्वेक्षण विभाग के अनुसार भारत में खनिज सम्पदा वाले 50 क्षेत्र हैं और उन क्षेत्रों में लगभग 400 स्थलों पर खनिज मिलते है। भारत में लौह-अयस्क का बहुत विशाल भंडार है। भारत लोहा के अलावा मैंगनीज, क्रोमाईट, टाइटेनियम, मैग्नासाईट, केनाईट, सिलिमनाईट, परमाणु - खजिनों अभ्रक और बॉक्साइट के मामले में न केवल आत्मनिर्भर है, बल्कि इनका बड़ी मात्रा में निर्यात भी करता है।

भारत में पाये जाने वाले प्रमुख खनिजों का विवरण

- **लौह-अयस्क** - भारत में लोहे का अनुमानित भंडार 3200 करोड़ टन है, जिसमें 85% हेमेटाइट (उत्तम), 8% मैग्नेटाइट एवं 7% अन्य प्रकार के हैं। विश्व का लगभग 20% लौह-अयस्क भारत में संचित है। भारत विश्व का चौथा सबसे बड़ा लौह-अयस्क निर्यातक देश है। इसका सबसे बड़ा आयातक देश जापान (3/4) है। संचित भंडार की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। झारखंड एवं ओडिशा राज्यों से देश का लगभग 75% लोहा प्राप्त किया जाता है। इसके संचित भंडार हैं- ओडिशा (सोनाई, क्योंझर, मयूरभंज), झारखंड (सिंहभूम, हजारीबाग, पलामू एवं धनबाद), छत्तीसगढ़ (बस्तर, दुर्ग, रायपुर, रायगढ़, बिलासपुर), मध्य प्रदेश (जबलपुर), कर्नाटक (बेलारी, चिकमंगलूर, चित्र दुर्ग), महाराष्ट्र (रत्नागिरि एवं चांदा), तमिलनाडु (सलेम, तिरुचिरापल्ली), गोवा।
- **मैग्रीज-** मैग्रीज अयस्क में भंडार की दृष्टि से जिम्बाब्वे के बाद भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। भारत उत्पादन की दृष्टि से विश्व का दूसरा बड़ा देश है। देश में मैग्नीज का सर्वाधिक संचित भंडार कर्नाटक में है, जबकि सबसे अधिक उत्पादन ओडिशा में होता है। इसका संचित भंडार है- झारखंड (सिंहभूम), महाराष्ट्र (नागपुर और भण्डारा), ओडिशा (क्योंझर, सुन्दरगढ़), आंध्र प्रदेश (काकुलमणि), कर्नाटक (शिमोगा एवं बेलारी), गुजरात (पंचमहल), राजस्थान (बांसवारा)। .
- **बॉक्साइट** - विश्व में बॉक्साइट संसाधन के मामले में भारत का पांचवां स्थान है। भारत में इसका सबसे अधिक उत्पादन ओडिशा (कुल उत्पादन का 50%) में होता है। इसके संचित भंडार हैं. ओडिशा (पंचपत्तमल्ली), झारखंड (पलामू, राँची, लोहरदगा), बिहार (गया, मुंगेर), आंध्र प्रदेश (नेल्लोर), महाराष्ट्र (नागपुर, भण्डारा तथा रत्नागिरी), राजस्थान (अजमेर, शाहपुर)।
- **तांबा-** भारत में तांबा की कमी है। देश में यह सल्फाइड (कैल्कोपाइराइट, कैल्कोसाइट, ब्रोनाइट) के रूप में मिलता है। भारत में तांबा प्राचीन खेदार, कुडप्पा एवं अरावली संरचना में पाया जाता है। संचित भंडार हैं. झारखंड (सिंहभूम, हजारीबाग), राजस्थान (खेतड़ी,

झुंझुनू, भीलवाड़ा, अलवर एवं सिरोही), महाराष्ट्र (कोल्हापुर), कर्नाटक (चित्र दुर्ग, हासन, रायचूर), मध्य प्रदेश (बालाघाट), आंध्र प्रदेश (अग्नि गुण्डल)।

- **अभ्रक-** भारत विश्व का 60% अभ्रक का उत्पादन करता है। भारत अभ्रक का विश्व में सबसे बड़ा निर्यातक देश है। राजस्थान में 51% अभ्रक का उत्पादन होता है। कोडरमा विश्व की सबसे बड़ी अभ्रक की मंडी है। इसका संचित भंडार है झारखंड (पलामू), गुजरात (खेड़ा), मध्य प्रदेश (कटनी, बालाघाट, जबलपुर), छत्तीसगढ़ (बिलासपुर)।
- **सोना-** भारत में सोना क्वार्ज चट्टानों की नसों में एवं नदियों के बालू में मिलता है। कर्नाटक के कोलार एवं हट्टी क्षेत्र से भारत में कुल सोने के उत्पादन का 98% प्राप्त होता है। अन्य उत्पादन क्षेत्र हैं. आंध्र प्रदेश (अनन्तपुर, वारंगल), तमिलनाडु (नीलगिरि एवं सलेम), झारखंड (सिंहभूम)। देश में स्वर्ण का पहला परिशोधन कारखाना निजी क्षेत्र में शिरपुर (महाराष्ट्र) में स्थापित किया गया है।
- **जस्ता-** यह सीसा, तांबा आदि के साथ मिश्रित रूप में पाया जाता है। इसके प्रमुख उत्पादन केन्द्र हैं- राजस्थान (देबारी, सबसे बड़ा- चित्तौड़गढ़), केरल (टुण्डू), आंध्र प्रदेश (विशाखापत्तनम)।
- **चाँदी-** चाँदी सामान्यतः जस्ता, सीसा, तांबा आदि के अयस्कों के साथ मिश्रित रूप में पाया जाता है। इसका संचित भंडार है. कर्नाटक, (कोलार क्षेत्र, चित्रदुर्ग), राजस्थान (जाबर क्षेत्र), आंध्र प्रदेश (कुडप्पा, गुण्टूर तथा कुर्नूल)।
- **हीरा-** इसका मुख्य केंद्र मध्यप्रदेश (पन्ना) है।
- **जिप्सम-** मुख्य उत्पादक राज्य राजस्थान (95%) एवं तमिलनाडु।
- **कोयला-** कोयला उत्पादन में चीन व अमेरिका के बाद भारत का विष्ठव में तीसरा स्थान है। कुल विद्युत उत्पादन में कोयले का योगदान 70% है। भारत में एन्थ्रासाइड, बिटुमिनस तथा लिग्नाइट तीनों प्रकार का कोयला पाया जाता है। कोयला उत्पादक प्रमुख केंद्र- झारखंड (धनबाद, सिंहभूम, गिरिडीह), प. बंगाल (रानीगंज, आसनसोल), छत्तीसगढ़ (रायगढ़), ओडिशा (देसगढ़ तथा तलचर), असम (माकूम, लखीमपुर), महाराष्ट्र (चांदा), आंध्र प्रदेश (सिंगरेनी)। अन्य राज्य- मेघालय, जम्मू-कश्मीर, नागालैंड आदि।
- **खनिज तेल-** भारत में खनिज तेल मेसोजोइक एवं टर्शियरी काल की परतदार चट्टानों में पाया जाता है। रिलायंस पेट्रोकैमिकल्स का जामनगर रिफायनरी विश्व का सबसे बड़ा रिफायनरी है। खनिज तेल उत्पादक केंद्र असम (डिगबोई, सुरमा घाटी), गुजरात (खम्भातखाड़ी, अंकलेश्वर), महाराष्ट्र (बॉम्बे हाई- भारत का सबसे बड़ा तेल उत्पादक क्षेत्र)।
- **यूरेनियम-** यह धारवाड़ एवं आर्कियन चट्टानों में पाया जाता है। इसका संचित भंडार है- झारखंड (सिंहभूम, जादूगोड़ा), राजस्थान (विसुनडीह, उमरा), आंध्र प्रदेश (संकरा खान- नेल्लोर), केरल में बालू में पाये जाने वाले मोनाजाइट से 0.3% यूरेनियम मिलता है।
- **थोरियम-** यह मोनाजाइट से प्राप्त होता है। भारत में मोनाजाइट का विश्व में सबसे बड़ा संचित भंडार है, जो हैन झारखंड (हजारीबाग), राजस्थान (उदयपुर), तमिलनाडु (नीलगिरी) एवं केरल का तट है।

भारतीय अर्थव्यस्था के विकास में खनिजों का योगदान- खनन सेक्टर हमारी अर्थव्यवस्था का बुनियादी सेक्टर है। यह विभिन्न महत्वपूर्ण उद्योगों को बुनियादी कच्ची सामग्री उपलब्ध कराता है। सीएसओ द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार खनन सेक्टर (ईंधन, आवणिक, प्रमुख तथा गौण खनिजों

सहित) ने वर्ष 2014-15 में सकल घरेलू उत्पाद में 2.4% का योगदान दिया है।

वर्ष 2017-18 के दौरान, अभी तक इस सेक्टर में पिछले वर्ष की इसी अवधि की तुलना में 4% की वृद्धि दर्ज की है। भारत में खनिज उत्पादन में भी उल्लेखनीय वृद्धि आई है। मौजूदा वित्तीय वर्ष के दौरान, मार्च तक, प्रमुख खनिजों के के उत्पादन में पिछले वर्ष इसी अवधि की तुलना में 9 % की वृद्धि हुई। इस विकास गाथा में प्रमुख योगदान धात्विक सेगमेंट में बॉक्साइट (27%), क्रोमाइट (33%), तांबा सांद्र (30%) लौह अयस्क (21%) तथा सीसा सांद्र (32%) रहा। यह वृद्धि इस इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि चीन की अर्थव्यवस्था से आ रहे कमजोर संकेतों के चलते अंतर्राष्ट्रीय वस्तु बाजार उथल-पुथल के दौर में है। हमने 'भारत में विनिर्माण' को वैश्विक नाम के रूप में स्थापित करने के लिए नया मिशन शुरू किया है। भावी वर्षों में, खनन उद्योग के घरेलू तथा विदेशी निवेशों को जुटाने तथा उससे अतिरिक्त रोजगार पैदा करने के लिए प्रमुख उद्योग के रूप में विकसित होने की उम्मीद है।

भारत की नई खनिज नीति- 29 जून, 2016 को प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा 'राष्ट्रीय खनिज अन्वेषण नीति' (NMEP) को स्वीकृति प्रदान की गई। इस नीति का प्रमुख उद्देश्य है-निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ाकर देश में अन्वेषण गतिविधियों को तेज करना। खनिजों की पूर्ण क्षमता हेतु देश में व्यापक खनिज अन्वेषण की जरूरत है जिससे राष्ट्र के खनिज संसाधनों (गैर-ईंधन, गैर-कोयला) का सर्वश्रेष्ठ इस्तेमाल हो सके और भारतीय अर्थव्यवस्था में इस क्षेत्र के अंशदान को बढ़ाया जा सके।

राष्ट्रीय खनिज अन्वेषण नीति में देश में अन्वेषण को आसान बनाने के लिए निम्नलिखित मुख्य विशेषताएं निहित हैं-

- खनन मंत्रालय चिह्नित खनिज ब्लॉकों की निजी क्षेत्र में नीलामी कराएगा।
- उत्खनन एजेंसियों द्वारा नीलाम योग्य संसाधनों की खोज नहीं कर पाने पर, उत्खनन व्यय की प्रतिपूर्ति मानकीय लागत आधार पर की जाएगी।
- सरकार लक्षित खनिज भंडारों के स्टेट ऑफ द-आर्ट बेसलाइन डाटा को प्राप्त करने के लिए एक राष्ट्रीय हवाई भू-भौतिक कार्यक्रम चलाएगी।
- एक नेशनल जिओसाइंटिफिक डाटा डिपॉजिटरी (NGDD) की स्थापना का प्रस्ताव है।
- एनजीडीडी केंद्र और राज्य सरकार की एजेंसियों व खनिज रियायत धारकों (Concession Holders) से मिलने वाली बेसलाइन भू-वैज्ञानिक डाटा और खनिज उत्खनन से जुड़ी जानकारियों की तुलना करेगी और इनका भू-स्थानिक डाटाबेस (Jiospetial Database) पर इनका रख-रखाव करेगी।
- सरकार का वैज्ञानिक, अनुसंधान संस्थाओं, विश्वविद्यालयों तथा उद्योग की भागीदारी से देश में खनिज उत्खनन की चुनौतियों के समाधान तथा वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान के लिए एक स्वायत्त गैर-लाभकारी संस्थान की स्थापना का प्रस्ताव है।
- यह संस्थान 'नेशनल सेंटर फॉर मिनरल टारगेटिंग' (NCMT) के नाम से जाना जाएगा।
- आकर्षक राजस्व साझेदारी मॉडल के माध्यम से उत्खनन में निजी निवेश को आमंत्रित करने के लिए प्रावधान।
- ऑस्ट्रेलिया की 'अनकवर' (UNCOVER) परियोजना के तर्ज पर सरकार की 'नेशनल जिओफिजिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट' (NGRI) और प्रस्तावित एनसीएमटी (NCMT) तथा जिओसाइंस ऑस्ट्रेलिया के साथ भागीदारी के माध्यम से देश में गहरे और छिपे हुए खनिज

भंडारों की खोज की एक विशेष पहल शुरू करने की योजना है।

Key to Remember

- भारत में पाये जाने वाले प्रमुख खनिजों का उल्लेख
- भारतीय अर्थव्यवस्था में खनिजों का योगदान
- भारत की नयी खनिज नीति, 2016

प्र. भारतीय कृषि में संवृद्धि एवं उत्पादकता की प्रवृत्तियों की व्याख्या कीजिए। देश में उत्पादकता में सुधार लाने और कृषि आय को बढ़ाने के उपाय भी सुझाइए।

Key to Answer

भारतीय कृषि में संवृद्धि एवं उत्पादकता की साल दर साल हुए परिवर्तन की व्याख्या करें। प्रति हेक्टेयर उपज बढ़ाने तथा कृषि आय बढ़ाने के उपाय बतायें।

उत्तर - कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। कृषि, भारत में सबसे बड़ा रोजगार प्रदान करने वाला क्षेत्र है तथा साथ ही साथ अधिकतर व्यक्तियों की जीविका प्रदान करने वाला साधन भी है। इसके अलावा जनसंख्या का एक बड़ा भाग कृषि पर आधारित उद्योगों में और कृषि उत्पादों के व्यापार में रोजगार प्राप्त करता है। कृषि बहुत से उद्योगों के लिए उत्पादों के मांग की जनक भी है। इन सबके बावजूद एक लम्बे समय तक कृषि में वृद्धि, गैर-कृषि क्षेत्रों में वृद्धि से कम रही है। भारतीय अर्थव्यवस्था में रोजगार, राष्ट्रीय आय व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के आयाम के अन्तर्गत कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है।

भारत में कृषि में संवृद्धि की प्रवृत्ति- कृषि देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है लेकिन स्वयं अर्थव्यवस्था में सबसे धीमी गति वाला क्षेत्र है। हरित क्रांति के काल से पहले आजादी से लेकर 1964-65 ई. तक कृषि क्षेत्र की वार्षिक औसत वृद्धि 2.7 प्रतिशत थी। इस काल में भूमि सुधार व सिंचाई साधनों की दिशा में पर्याप्त विकास हुआ है। हरित क्रांति के समय में 1961-1981 तक कृषि क्षेत्र में औसत वृद्धि 3.0 प्रतिशत तथा 1980-81 से 1990-91 के मध्य 3.5 प्रतिशत रही है। 1992-93 के दौरान कृषि क्षेत्रों में वृद्धि प्रतिशत 2.9 व 1997-98 से 2006-07 के मध्य कम होकर 2.5 प्रतिशत हो गई। आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18 के अनुसार मौजूदा कृषि वृद्धि दर घटकर 2.1 प्रतिशत हो गई।

कृषि उत्पादकता की प्रवृत्ति- कृषि उत्पादकता की प्रवृत्ति को मुख्यतः दो भागों में बांटकर अध्ययन कर सकते हैं-

1. **भूमि की उत्पादकता-** इसे प्रति हेक्टेयर उत्पादन द्वारा निरूपित किया जा सकता है। आजादी के शुरुआती समय में सभी फसलों में प्रति हेक्टेयर उत्पादन कम था। दो मुख्य खाद्यान्न फसलों गेंहू व चावल ने 70 के दशक में उत्पादकता में प्रभावशाली वृद्धि अर्जित की। अन्य खाद्यान्न फसलों में उत्पादकता में वृद्धि बहुत धीमी रही। अखाद्यान्न फसलों में सिर्फ कपास में ही उत्पादकता वृद्धि प्राप्त की। तिलहनों में उत्पादकता में वृद्धि बहुत ज्यादा उत्साहवर्धक नहीं रही।
2. **कृषि में कार्यरत व्यक्तियों की उत्पादकता-** इसे प्रति व्यक्ति उत्पाद के रूप में व्यक्त किया जा सकता है। भारत में प्रति व्यक्ति कृषि उत्पादन विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है। यह इस बात से सिद्ध होता है कि भारत के कुल श्रमबल जनसंख्या का 48% भाग कृषि में कार्यशील है। परन्तु इसका राष्ट्रीय आय में योगदान मात्र 16% है।

उत्पादकता एवं आय में सुधार लाने के उपाय

- नई राष्ट्रीय कृषि नीति की शुरुआत की गई है। इसके अन्तर्गत किसानों को सूखा एवं वर्षा के साथ-साथ अन्य आपदाओं के लिए राहत प्रदान करने की व्यवस्था की गई है। हाल ही में शुरू

की गई प्रधानमंत्री फसल बीमा के माध्यम से फसल बीमा को काफी व्यापक बनाया गया है।

- सरकार द्वारा शुरू की गई मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना मृदा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए एक महत्वपूर्ण पहल है। इस योजना में मृदा की प्रकृति को परख कर फसल और उर्वरक आदि का निर्धारण किया जाता है।
- किसानों की साख में सुधार के लिए प्रधानमंत्री कृषि विकास योजना, किसान विकास पत्र आदि को आरंभ किया गया है।
- किसानों के उत्पादों के उचित एवं एकीकृत मूल्य प्रदान करने के लिए ई-नाम (e-NAM) की शुरुआत की गई है।
- सरकार द्वारा एमएसपी को फसल लागत का डेढ़ गुना करने की घोषणा
- फसल विविधीकरण कार्यक्रम
- नीम कोटेड यूरिया का प्रयोग
- प्रति बूंद अधिक फसल (Per drop more crop) सिद्धान्त
- गोदामों और कोल्डचेनों में अधिक निवेश
- खाद्य प्रसंस्करण के लिए प्रधानमंत्री किसान सम्पदा योजना शुरू

नोटः- कृषि मंत्रालय के अतिरिक्त सचिव अशोक दलवई की अध्यक्षता में केन्द्र सरकार ने 2022 तक किसानों की आय दोगुना करने के लिए समिति की घोषणा की है। इस समिति ने नीति आयोग के साथ एक सात सूत्रीय कार्यक्रम पेश किया है।

उत्पादकता एवं आय में सुधार लाने के लिए सुझाव

- सरकार द्वारा शुरू की गई योजनाओं का ठीक ढंग से क्रियान्वयन तथा जमीनी स्तर तक निगरानी तंत्र का विकास।
- ये सभी योजनाएं बड़े व सीमान्त किसानों तक ही सीमित रह जाते हैं, छोटे व मंझोले किसान इसके लाभ से वंचित रहते हैं। इसलिए इन योजनाओं को जन-जागरूकता के माध्यम से इन छोटे व मझोले किसानों तक पहुंचाया जाए।
- जैविक खेती को बढ़ावा देकर मिट्टी की उत्पादकता को बढ़ाना व किसानों की लागत को कम करना।
- डेयरी- पशुपालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, मेढ़ पर पेड़, बागवानी, मछली पालन आदि जैसी सहायक गतिविधियों को बढ़ावा देना।
- मनरेगा को कृषि व्यवस्था से जोड़ना, जिससे किसानों की लागत कम होगी तथा सही समय पर कृषि मजदूर उपलब्ध होंगे।

यद्यपि कृषि उत्पादन में हरित क्रान्ति के बाद कुल खाद्यान्न उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है जो लगातार अब भी बढ़ती जा रही है। लेकिन उत्पादन वृद्धि के अनुसार उत्पादकता में वृद्धि बहुत कम रही है। हाल के वर्षों में उत्पादकता में गिरावट की प्रवृत्ति रही है। उत्पादकता में गिरावट का एक प्रमुख कारण फसल विविधीकरण तकनीकी को न अपनाना है। मानसून ने भी काफी हद तक प्रभावित किया है। खेत की उत्पादकता बढ़ाने तथा किसानों की आय बढ़ाने के लिए बहुत बड़ी संख्या में सरकारी प्रयास किए जा रहे हैं। लेकिन क्रियान्वयन सही न होने तथा निगरानी तंत्र सुदृढ़ न होने के कारण इन कार्यक्रमों का सुचारू रूप से प्रभाव नहीं दिखाई पड़ रहा है। इसलिए आवश्यक है इन कार्यक्रमों के लिए निगरानी तंत्र को मजबूत कर कार्यान्वयन सुचारू ढंग से किया जाए।

Key to Remember

- भारतीय कृषि में वृद्धि की प्रवृत्ति
- कृषि उत्पादकता की प्रवृत्ति
- उत्पादकता एवं आय में सुधार लाने का सरकारी उपाय
- उत्पादकता एवं आय बढ़ाने के लिए सुझाव

प्र. 'जनांकिकी लाभ' क्या है? आर्थिक संवृद्धि पर इसके प्रभाव को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-'जनांकिकी लाभ' अर्थव्यवस्था में मानव संसाधन के सकारात्मक और सतत् विकास को दर्शाता है। यह जनसंख्या ढांचे में बढ़ती युवा एवं कार्यशील जनसंख्या (15 से 64 वर्ष आयु वर्ग) तथा घटते आश्रितता अनुपात के परिणामस्वरूप उत्पादन में बड़ी मात्रा का सृजन प्रदर्शित करता है। इस स्थिति में जनसंख्या पिरामिड उल्टा बनेगा अर्थात् इससे कम जनसंख्या आधार से ऊपर की ओर बड़ी जनसंख्या की ओर बढ़ते हैं।

दूसरे शब्दों में, 'जनांकिकी लाभ' उस स्थिति को कहते हैं जब किसी देश की जनसंख्या का बाहुल्य 15-64 वर्ष की आयु हो। 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों व 64 वर्ष से अधिक आयु के लोगों पर 15-64 वर्ष की आयु के भीतर जो लोग हैं, उन्हें पैसा खर्च करना पड़ता है। जितनी यह स्थिति कम होगी, वहां उतनी ही आय अधिक समझना चाहिए। कुछ वर्ष पूर्व जब डिकंस का जिक्र किया जाता था - यानी डबल इनकम नो किड्स। परन्तु विकासशील देशों में इस दृष्टि से तो स्थिति बुरी ही नहीं, अपितु भयावह है।

कार्यशील जनसंख्या हेतु संसाधन के अभाव में यह लाभ, हानि में परिवर्तित हो जाता है। भारत जैसे अन्य विकासशील देशों की स्थिति ऐसी ही है। तेजी से बढ़ती जनसंख्या देश की आर्थिक-सामाजिक समस्याओं की जननी बनकर देश के विकास के लिए खतरे की घंटी बन रही है। बढ़ती जनसंख्या देश में गरीबी, कुपोषण, शहरीकरण और मलिन बस्तियों जैसी कई चुनौतियों को बढ़ा रही है।

संसाधन के अभाव में बढ़ती जनसंख्या की आर्थिक संवृद्धि पर प्रभाव के निम्न बिन्दु द्रष्टव्य हैं-

- **बेरोजगारी-** रोजगारहीन जनसंख्या का सीधा संबंध आर्थिक संवृद्धि के प्रतिकूल स्थिति से है। यही कारण है कि कई देशों के आर्थिक विकास दर संतोषजनक होने के बावजूद रोजगार के अवसर उतने चमकीले नहीं हैं।
- **खाद्यान्न संकट-** खाद्यान्न उत्पादन दर में लगातार वृद्धि के बावजूद बढ़ती जनसंख्या के कारण उत्पादन वृद्धि आवश्यकता से कम दिखाई देती है। कई देशों को तो खाद्यान्न का आयात तक करना पड़ जाता है। भारत के मामले में, 'इंडियन-काउंसिल फॉर रिसर्च ऑन इंटरनेशनल रिलेशन' का कहना है कि भारत में उत्पादन घटने, ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ने, मानसून के धोखे की आशंका, बायोडीजल के लिए अनाज का उपयोग आदि के कारण 2017 के बाद देश में सभी के लिए भोजना जुटाना कंठिन हो जाएगा।
- **आवास की समस्या-** बढ़ती जनसंख्या के कारण आवास की समस्या से भी जूझना पड़ रहा है। रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन से मलीन बस्तियों का निर्माण तेजी से बढ़ रहा है जिससे बुनियादी सुविधा न होने के कारण जीवन आसन्न संकट की ओर उन्मुख होता जा रहा है। आवास की कमी के कारण करोड़ों लोगों को बेघर होकर किराए या अन्य खुले क्षेत्रों में निवास करना पड़ रहा है।
- **स्वास्थ्य-** खाद्यान्न की कमी एवं मलिन बस्तियों का दुष्प्रभाव स्वास्थ्य पर भी पड़ा है। कुपोषण के शिकार लोग असमय काल का निवाला बनते जा रहे हैं। रही-सही स्थिति स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी ने पूरी कर दी है, जिनसे प्रत्येक वर्ष लोग अनेक बिमारियों की चपेट में आकर मर रहे हैं।

युवा जनसंख्या के कार्यशील होने का चमकीला पक्ष भले ही सामने हो लेकिन उसे मानव संसाधन में परिवर्तित करना कोई साधारण कार्य नहीं है। देश में युवा भरपूर हैं लेकिन हुनरमंद कम हैं, जो साक्षर हैं उनमें भी रोजगारहीनता की स्थिति है। इसका

प्रतिकूल प्रभाव आर्थिक संवृद्धि पर सीधा पड़ता है। जरूरी है जन-जागरूकता के जरिए लोगों को छोटे परिवार के फायदे समझाए जाएं तथा देश की बढ़ती जनसंख्या को उपयुक्त नियंत्रित कर रोजगार के विकल्पों पर विचार किए जाएं।

Key to Remember

कार्यशील जनसंख्या को उपयुक्त अवसर प्रदान कर अनुकूल बनाया जा सकता है। रोजगारहीनता एक साथ कई भयावहता को लेकर आती है, यथा- निर्धनता, स्वास्थ्य, आवास आदि।

प्र. भारत में 'कृषि विपणन' का वर्णन कीजिए एवं 'कृषि विपणन व्यवस्था' की कमजोरियों को बताइए। कृषि उपज विपणन व्यवस्था में सुधार की दृष्टि से बिहार सरकार द्वारा क्या उपाय किए गए हैं?

Key to Answer

भारत में कृषि विपणन का वर्णन कीजिए। कृषि विपणन की समस्याओं तथा बिहार सरकार द्वारा किए गए सुधार प्रयासों की चर्चा कीजिए।

उत्तर- भारत कृषि प्रधान देश होने के बावजूद, यहां के खेतिहरों को निर्धनता का सामना करना पड़ता है। कारण स्पष्ट है कि वर्तमान में उसके शोध पर GDP का मात्र 0.3% ही खर्च किया जाता है जिससे भारतीय कृषि को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उत्पादन होने के बावजूद विपणन की सही व्यवस्था नहीं हो पाने के कारण किसानों को उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता। विपणन की व्यवस्था पर बिहार सरकार द्वारा उठाए गए कदम भी अभी तक संतोषजनक नहीं हैं।

भारतीय कृषि मानसून आधारित होने के कारण कभी अल्पवृष्टि के कारण उत्पादन कम, तो कभी पर्याप्त वर्षा के कारण उत्पादन ज्यादा होता है, फलस्वरूप मूल्यों में उतार-चढ़ाव होते ही रहते हैं। कृषि उत्पादन की विपणन संबंधी समस्याओं का अध्ययन इसलिए आवश्यक हो जाता है कि जब तक कृषि उत्पादकों को उनके उत्पादन का सही मूल्य नहीं मिल जाता तब तक देश का विकास होना असंभव है। कृषि उपजों का विपणन कृषकों के लिए एक जटिल समस्या है, और उसका . निराकरण नियंत्रित मण्डियों की स्थापना के द्वारा करने का प्रयास किया जाता है।

आज कृषि के सम्मुख अनेकों समस्याएं हैं। इसके दो पहलू हैं- कृषि ट्रेडिंग और कृषि विपणन। कृषि विपणन की प्रमुख समस्याएं निम्नलिखित हैं-

1. **वर्गीकरण एवं प्रमापीकरण का अभाव-** कृषि उपज मण्डी अधिनियम, 1972 के अंतर्गत इसकी व्यवस्था प्रत्येक मण्डियों में की गई थी, परन्तु सर्वेक्षण में पाया जाता है कि अधिकांश मण्डियों में इसकी सुविधा ही नहीं है। वर्गीकरण एवं प्रमापीकरण के अभाव में किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता, उपज का मूल्यांकन हेतु किसानों को व्यापारियों पर निर्भर रहना पड़ता है जो कि घाटे का सौदा है।
2. **अधिकारों का केन्द्रीकरण-** कृषि मण्डियों को स्वायत्त शासन का दर्जा दिया गया है, उनका विकेन्द्रीकरण नहीं किया गया, जिसके कारण सारा संचालन मण्डी बोर्ड के पास केन्द्रित हो गया। विकेन्द्रीकरण न होने के कारण सभी मण्डियां छोटे-छोटे कार्यों को पूर्ण करने के लिए संचालक की स्वीकृति पर निर्भर करती हैं। अतः इनका विकेन्द्रीकरण आवश्यक है।
3. **मध्यस्थों की शृंखला-** किसानों को अपने उपज को मण्डियों तक पहुंचाने में दलालों का सहारा लेना पड़ता है। यद्यपि मण्डियों की स्थापना मूल रूप से विपणन को सुगम बनाने के लिए की गई थी परन्तु, आज भी मध्यस्थों की शृंखला कृषि उत्पादों को कम में क्रय कर अधिक मूल्य पर बेचती हैं। उस श्रृंखला से किसानों का कई तरह का शोषण होता है, जिसके फलस्वरूप उन्हें आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

4. **प्रतियोगिता का अभाव-** कृषि उत्पाद के विपणन में स्वस्थ प्रतियोगिता कृषकों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य दिलाने में सहायक होती है, परन्तु उसका सर्वथा अभाव है। क्रेताओं द्वारा समूह बनाकर समझौते के द्वारा कृषि उपज का क्रय किया जाता है जिसके कारण व्यापारियों को लाभ, तो किसानों को हानि का सामना करना पड़ता है।
5. **गोदाम का अभाव-** जिले के कुछ मण्डियों में गोदाम का अभाव होने के कारण कृषकों एवं व्यापारियों को कृषि उत्पाद खुले में रखना पड़ता है। वर्षा होने के कारण अनाज सड़ जाते हैं। किसान गोदाम की व्यवस्था नहीं कर पाते क्योंकि उन्हें अगले फसल के लिए वित्त की जरूरत होती है। अतः गोदाम का अभाव कृषि-विपणन की प्रमुख समस्याओं में से एक है।

बिहार सरकार द्वारा विपणन की व्यवस्था उल्लेखनीय होते हुए भी अभी तक संतोषजनक नहीं है। भण्डारण के लिए उपयुक्त गोदामों की व्यवस्था जिले के मुख्यालयों में की गई है। इस हेतु शेड एवं कोल्ड स्टोर की व्यवस्था सराहनीय है, किन्तु संपूर्ण राज्य में ऐसी व्यवस्था समान रूप से नहीं है। देख-रेख के अभाव में अनाज बाहर ही सड़ जाते हैं। बिचौलियों की समस्या को समाप्त करने एवं सीधे मण्डियों तक पहुंचाने की व्यवस्था की गई है, परन्तु इसकी व्यावहारिकता में आने वाली समस्याओं के उन्मूलन का अभी तक इंतजार है। मण्डियों में प्रतियोगिता के लिए अनाज खरीद हेतु FCI तथा मूल्यों में गिरावट न हो डैच् की व्यवस्था है, किंतु सरकार की ढुलमुल रवैये एवं किसानों में जागरूकता के अभाव में उपज का उचित मूल्य मिलना आज भी मुश्किल है।

इस प्रकार कृषि प्रधान देश होने के बावजूद आधारिक संरचना एवं सरकारी अवहेलना ने किसानों को दरिद्रता की श्रेणी में पहुंचा दिया है। बिहार सरकार ने भरसक इसे कम करने की कोशिश की है, परन्तु दृढ़ इच्छा का अभाव यहां भी दृष्टिगोचर होते हैं।

प्र. 'पर्यावरण संरक्षण' तथा 'धारणीय विकास' में क्या संबंध है? भारत में आर्थिक संवृद्धि तथा पर्यावरण अधःपतन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

Key to Answer

'पर्यावरण संरक्षण' एवं 'धारणीय विकास' के मध्य संबंधों की चर्चा करें। भारत की आर्थिक संवृद्धि पर पर्यावरण को लिखें।

उत्तर - वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में भौतिकता की खोज में मानव इतना अंधा हो चुका है कि प्राकृतिक संसाधनों पर खतरा मंडराने लगा है। ये प्राकृतिक संसाधन अक्षुण्ण नहीं हैं। अतः इनके दोहन से गंभीर प्राकृतिक आपदाओं का आगमन एवं भावी पीढ़ी हेतु संसाधनों का संकट उत्पन्न हो गया है। ऐसे में वैश्विक समुदाय का ध्यान पर्यावरण संरक्षण एवं धारणीय विकास की ओर गया।

दूसरे शब्दों में, यदि कहा जाए तो पर्यावरण संरक्षण साधन है, तो " धारणीय विकास साध्य। इस प्राकृतिक संपदा को संरक्षित करके ही टिकाऊ विकास को प्राप्त किया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण का आशय पृथ्वी के चारों तरफ उन परिवेशों से है जिसमें वनस्पतियों, अन्य प्राणी और मानव जाति सहित सभी सजीवों और उनके साथ संबंधित भौतिक परिसर से है। इस आवरण पर अन्तः व वाह्य गतिविधियों के कारण संकट मंडराने लगा है। संकट की गंभीरता को समझते हुए वैश्विक • समुदाय ने अपने सम्मेलनों में संरक्षित करने का आशय रखा है। चूंकि पर्यावरण का संरक्षण इस लिहाज से कि उसका दोहन होते हुए भी भावी पीढ़ी पर कोई संकट न आए, इसी लिहाज से धारणीय विकास की अवधारणा यहां प्रस्फुटित हुई है।

1987 ई. में WCED (World Commission on Environment and Development) नामक रिपोर्ट में सतत् विकास की अवधारणा की व्याख्या की गई, जिसे UNO ने भी स्वीकार कर लिया। उस

व्याख्यानुसार पर्यावरण की सुरक्षा के बिना विकास को निर्वहनीय नहीं बनाया जा सकता है। आर्थिक विकास और पर्यावरण सुरक्षा के मध्य एक वांछित संतुलन बनाए रखना ही निर्वहनीय व टिकाऊ विकास है। वर्तमान में यह विकास का एक भूमण्डलीय दृष्टिकोण बन गया है। 1992 ई. के 'रियो घोषणा' में इसके प्रति पूर्ण समर्थन व्यक्त किया गया। 2002 ई. के 'जोहान्सबर्ग सम्मेलन' का मूल मुद्दा ही पर्यावरण संरक्षण आधारित सतत् विकास था।

भारत में, आर्थिक संवृद्धि का आधार भी पर्यावरण संरक्षण आधारित शाश्वत विकास ही है जिन्हें भारत ने वैश्विक सम्मेलनों में घोषित भी किया। भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार आज भी कृषि है। कृषि का महत्व मात्र सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के हिस्से से ही नहीं, अपितु रोजगार एवं श्रम-शक्ति के हिस्से से भी है। कृषिगत् उपजों को बढ़ावा देने के लिए HYV बीजों एवं नवीन तकनीक आधारित रासायनिक उर्वरकों का ज्यादातर इस्तेमाल से पश्चिमी भारत का अधिकांश हिस्सा बंजर होता जा रहा है। नये जल परियोजनाओं व नदियों पर बड़े-बड़े बांध निर्माण से कहीं सूखा, तो कहीं बाढ़ की स्थिति उत्पन्न होती रही है। उद्योगों एवं विनिर्माण के क्षेत्रों को विकसित करने में पर्यावरण की अवहेलना की जा रही है। नये आवासीय क्षेत्र एवं व्यापारिक प्रतिष्ठान हेतु जंगल काटे जा रहे हैं। ये सभी मानवीय क्रिया-कलाप भारत में भी बदस्तूर जारी हैं।

चूंकि आर्थिक संवृद्धि एवं विकास को नकारा नहीं जा सकता। हर युग और काल-परिवेश में मानवीय संस्कृति विकासशील रही है, परन्तु पर्यावरण की कीमत पर नहीं। आज की मानवीय संस्कृति भौतिकता के दौर में आंख मूंदे प्रकृति को तहस-नहस करती जा रही है। प्रकृति स्वयं में मानवीय हस्तक्षेप को ज्यादा दिनों तक बर्दाश्त नहीं कर सकती। आए दिन संपूर्ण भारत में है। प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ रहा है जिनसे आर्थिक क्षति के साथ-साथ जान-माल से भी हाथ धोना पड़ा हैं। अतः आज जरूरत हो गई है कि पर्यावरण को संरक्षित रखते हुए विकास की ओर बढ़ा जाए, एसा विकास जो भावी पीढ़ी तक बिना संकट के चलता रहे। इस हेतु वैश्विक समुदाय की भांति भारत भी गंभीर है। ऊर्जा के दोहन को देखते हुए परंपरागत ऊर्जा से हट कर वैकल्पिक ऊर्जा पर जोर दिया जा रहा है। उद्योग-कारखानों के निर्माण एवं अवशिष्ट पदार्थों के निस्तारण हेतु सुनियोजित तंत्र विकसित की गई है। नदी परियोजना के लिए भी बाढ़ एवं उसके आसन्न संकट को ध्यान में रखा जा रहा है। इसी क्रम में पानी बचाओं के साथ-साथ गंगा सफाई की योजना भी पर्यावरण संरक्षण में एक उपयोगी कार्यक्रम है ताकि सतत् विकास की अवधारणा को प्राप्त किया जा सके।

इस प्रकार पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् विकास में अटूट संबंध है जिससे संसाधन का ऐसा उपयोग किया जाना चाहिए जिससे भावी पीढ़ी भी लाभान्वित हो। इससे आर्थिक संवृद्धि की दर को भी बढ़ाया जा सकता है। वैश्विक समुदाय के तुल्य भारत सरकार भी इस मुद्दे पर अब अति गंभीर है।

Key to Remember

- 'सतत् विकास' शब्द का प्रथम प्रयोग IUCN ने अपनी रिपोर्ट 'विश्व संरक्षण रणनीति' में किया।
- 1992 ई. के पृथ्वी सम्मेलन में घोषित एजेंडा - 21 (रियो घोषणा) में सतत् विकास को पूर्ण समर्थन मिला।
- अंतर्राष्ट्रीय मानव पर्यावरण सम्मेलन (स्टॉकहोम सम्मेलन, 1972) को पर्यावरण का मैग्नाकार्टा कहा गया है।

प्र. क्षेत्रीय विकास से क्या तात्पर्य है? बिहार के आर्थिक विकास में क्षेत्रीय नियोजन कहां तक सफल रहा है? विवेचना कीजिए।

Key to Answer

क्षेत्रीय विकास की चर्चा कीजिए, बिहार में क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम किस हद तक सफल रहा, आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

उत्तर- आजादी के बाद देश में क्षेत्रीय असमानता जोरों पर थी। संसाधन होते हुए भी उनके समुचित दोहन के अभाव में आर्थिक संवृद्धि दर काफी कम थी। रोजगार के अवसर भी काफी सीमित थे, जिनके कारण निर्धनता दर काफी थी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के बाद आर्थिक नियोजन पर ध्यान दिया गया, जिसमें एक स्तर क्षेत्रीय विकास का रहा। भारत सरकार के योजना आयोग एवं NSD के आर्थिक योजना के तहत राज्यों को संसाधन मुहैया करवाए गए जिसके फलस्वरूप राज्यों ने अपने क्षेत्रों के अंतर्गत आर्थिक गतिविधियों की शुरुआत की।

इन शुरुआती आर्थिक नियोजन में कृषि एवं कृषि का विकास पर जोर दिया गया, जबकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना के बाद औद्योगिकीकरण पर विशेष ध्यान दिया गया। इन योजनाओं से एक तरफ देश की GDP में कृषि का योगदान बढ़ा, तो दूसरी तरफ बेरोजगारी की दर भी कम हुई। राज्यों ने अधिशेष कृषिगत् उत्पादन से विनिर्माण का शुभारंभ किया, जिनसे पूर्व के हालात बदले एवं राज्यों के पास भी स्वयं के संसाधन विकसित हुए जिनसे अन्य आर्थिक क्रिया-कलापों के कार्यान्वयन में सुविधा हुई। चूंकि क्षेत्रीय विकास का एक पैमाना यह रहा कि संबंधित राज्य में बुनियादी संरचनात्मक घटक कितना विकसित है, इन्हीं संरचनात्मक घटक के अभाव में देश के अन्दर क्षेत्रीय असमानता ने जन्म लिया।

आज संरचनात्मक घटकों की मौजूदगी के कारण गुजरात, महाराष्ट्र जैसे राज्यों का आर्थिक विकास दर उच्च हैं, वहीं बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा ओडिशा एवं छत्तीसगढ़ जैसे राज्य 'बीमारू राज्यों' की श्रेणी में आते हैं।

छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान बिहार में क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम का प्रारंभ हुआ। इसका मुख्य उद्देश्य था- पहचान किए गए गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों को साधन उपलब्ध कराकर उनकी आय में वृद्धि करना, जिनके फलस्वरूप वह परिवार गरीबी रेखा के ऊपर आ सके। इस कार्यक्रम द्वारा ग्रामीण इलाकों में स्वरोजगार के लिए अतिरिक्त अवसर भी पैदा किया जाना था। यह प्रोग्राम केन्द्र प्रायोजित है जिसमें केन्द्र-राज्य की सहभागिता क्रमश: 50: 50 है। प्रति वर्ष केन्द्र सरकार इस कार्यक्रम के अतिरिक्त DWCRA एवं TRYSEM के माध्यम से भी कार्यक्रम का संचालन करती है। 8वीं पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय नियोजन के अंतर्गत कुल 468 करोड़ रुपये खर्च हुए जिसमें 2.50 करोड़ रुपये DWCRA पर तथा 48.50 करोड़ रुपये TRYSEM पर खर्च किया गया, शेष राशि अन्य योजनाओं पर खर्च किए गए। बिहार में 8वीं योजना के दरम्यान इस कार्यक्रम में 2.95 लाख परिवार लाभान्वित हुए। साथ ही TRYSEM के अंतर्गत करीब 16 हजार लोगों को तकनीकी प्रशिक्षण दिया गया।

भारत सरकार के द्वारा इन योजना को सफलीभूत बनाने में बिहार सरकार ने कई गलतियां कर दी। पहली बात, इन योजनाओं की निगरानी का कोई नियोजित तंत्र नहीं था, दूसरी बात कि मध्यस्थों के कारण इन योजनाओं का लाभ सही लोगों तक नहीं पहुंच पाया। आर्थिक नियोजन के लिए जरूरी है कि क्षेत्र में बुनियादी संरचना खड़ा किया जाय, परन्तु बिहार में दबंगों एवं भ्रष्टाचार के कारण कोई भी योजना सफल नहीं हो पायी।

अतः आवश्यकता है कि राज्य सरकार इन योजनाओं को सफल बनाने के लिए एक विकसित या विशेष निगरानी योजना बनाए जिसमें भ्रष्टाचार पर अंकुश के अलावा गुण्डागर्दी पर लगाम लगाए जाएं ताकि आर्थिक क्रिया-कलाप सुचारू रूप से चल सकें, अन्यथा इसके बिना विकास बेमानी है।

Key to Remember

- विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि एवं उद्योग विकास हेतु किए गए उपायों का उल्लेख।
- TRYSEM (Training of Rural Youth for Self-Employment): इस योजना का आधार ग्रामीण गरीबी को दूर करने के लिए तकनीक मुहैया कराकर स्वरोजगार खोलना है।
- DWCRA (Development of Wamen and Children in Rural Area): ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा नियोजित

इस योजना का आशय ग्रामीण निर्धनता को कम करने के लिए 15-20 महिलाओं का समूह बनाना जो गरीबी रेखा से नीचे हों ताकि स्वरोजगार कर सकें।

प्र. किस प्रकार से भारतीय मानसून का परिवर्तशील स्वभाव भारत के कृषि को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है? बिहार के विशेष संदर्भ में इसकी व्याख्या कीजिए।

उत्तर - भारत में मानसूनी वर्षा अत्यधिक परिवर्तनशील (Variable) है। किसी जगह किसी वर्ष में वास्तविक वर्षा उस जगह के औसत वर्षा से विसामान्य होती है। यह विसमान्यता 10 प्रतिशत से अधिक तथा 60 प्रतिशत तक होती है।

भारत में मानसूनी वर्षा की परिवर्तनशीलता उन क्षेत्रों में सबसे अधिक होती है जहां औसत वार्षिक वर्षा सबसे न्यूनतम होती है। उदाहरण के तौर पर बाड़मेर, गंगानगर, जैसलमेर, जोधपुर आदि, जहां औसत वर्षा 20 सेमी. से भी कम होती है। इन क्षेत्रों में मानसूनी वर्षा की परिवर्तनशीलता लगभग 60 प्रतिशत होती है। इसके विपरीत जहां औसत वार्षिक वर्षा लगभग 1200 सेमी से अधिक होती है (उदाहरणार्थ-मॉसिनराम तथा चेरापूंजी, मेघालय पठार) वहां वर्षा की वार्षिक परिवर्तनशीलता 10 प्रतिशत से कम होती है।

पश्चिमी घाट की पश्चिमी ढाल, लघु हिमालय, शिवालिक तथा तराई क्षेत्र में भी 100 से 200 सेमी. के बीच औसत वार्षिक वर्षा दर्ज की जाती है। इन क्षेत्रों में वर्षा की परिवर्तनशीलता लगभग 10 से 20 प्रतिशत तक है। इस तरह औसत वार्षिक वर्षा तथा वर्षा की परिवर्तनशीलता के बीच एक प्रतिलोम संबंध है।

वर्षा की यह परिवर्तनशीलता कृषिगत प्रक्रियाओं तथा अन्य आर्थिक क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जिन क्षेत्रों में वर्षा की परिवर्तनशीलता अधिक होती है, वहां चिरकालिक जल का अभाव होता है। ये क्षेत्र सूखा, बाढ़ तथा अकाल के लिए अधिक प्रवण क्षेत्र होते हैं। उन क्षेत्रों में जहां औसत वार्षिक वर्षा अधिक होती है, ऐसे क्षेत्र सूखे से कम प्रभावित होते हैं। यद्यपि बाढ़ प्रवण क्षेत्र यहां की एक विशेषता है।

भारतीय कृषि का लगभग 60 प्रतिशत क्षेत्र मानसूनी वर्षा पर निर्भर है तथा सिंचाई की सुविधा लगभग 40 प्रतिशत क्षेत्र को उपलब्ध है। लेकिन, इसके लिए भी वर्षा की आवश्यकता होती है, क्योंकि वर्षा नहीं होने से नदियों का पानी घट जाता है जिससे बांधों में पानी की कमी हो जाती है। भू-जल का पुनर्भरण तभी होता है जब वर्षा होती है। बांधों में पानी की कमी से बिजली उत्पादन प्रभावित होता है। बिजली न होने से नलकूप भी नहीं चल पाते। उसी तरह नदियों का पानी घटने से नहरें सूखने लगती हैं। इस तरह बाढ़ और सूखे दोनों के कारण कृषकों की ऋणग्रस्तता एवं गरीबी और भयावह हो जाती है। हैं, जिससे कृषि में उनकी निवेश क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इस तरह कृषि अधोगति के दुष्चक्र में फंसा रहता है।

मानसून की परिवर्तनशीलता का बिहार पर प्रभाव

बिहार में वर्षा का आगमन मानसून के प्रारंभ के साथ माना जाता है। सामान्यतः मध्य जून तक पूरे प्रदेश में मानसून का है। विस्तार हो जाता है। जब कभी मानसून बिहार में देर से पहुंचता है तो चावल की कृषि पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

वर्षा की क्रमबद्धता पूरे वर्ष एक समान नहीं पाई जाती है। यहां कभी-कभी मानसूनी वर्षा अपना भयावह रूप दिखाती है, तो कभी सुखाड़ की स्थिति आ जाती है और कभी असमय वर्षा के कारण रबी की फसल भी बर्बाद और नष्ट हो जाती है। सक्रिय मानसून काल में यहां की नदियों में बाढ़ आने से तटबंधों के टूटने की स्थिति प्रायः देखने को मिलती है। यहां की अनेक नदियां, जैसे- कोसी, गण्डक तथा बागमती आदि अपने बाढ़ की विभीषिका के लिए प्रसिद्ध हैं। इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा

सकता है कि मानसून की परिवर्तनशीलता के कारण बिहार सहित समग्र भारत की कृषि में कभी बाढ़, कभी सूखा और कभी अन्य तरह की अनिश्चितताएं बनी रहती हैं, जो प्रतिकूल रूप से कृषि को प्रभावित करती हैं।

प्र. "प्राकृतिक विपदायें बिहार में निर्धनता के प्रमुख कारण हैं।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं? इस पर अपने विचार बताइये।

उत्तर - बिहार में निर्धनता के अनेक कारण हैं, जिनमें प्राकृतिक विपदायें मुख्यत: बाढ़ एवं सूखा प्रमुख हैं। चूंकि बिहार एक कृषि प्रधान राज्य है। अतः बाढ़ एवं सूखा का प्रभाव हमारे कृषि एवं कृषकों पर पड़ता है। बाढ़ के कारण राज्य में प्रतिवर्ष 68.8 लाख हेक्टेयर भूमि प्रभावित होती है। इससे लाखों की संपत्ति बर्बाद होती है। कृषि पर तो इसका खतरनाक प्रभाव पड़ता है। बाढ़ के कारण राज्य के एक बड़े भू-भाग पर जल जमाव की स्थिति पैदा हो जाती है। लगभग 9.41 लाख हेक्टेयर भूमि पर जल-जमाव की स्थिति है जिससे कृषि क्षेत्र प्रभावित होता है। बाढ़ से कृषि के अलावा सामान्य जीवन एवं व्यापार भी ठप्प हो जाता है। यातायात की समस्या होने से लोगों का बुरा हाल हो जाता है। बाढ़ के समय महामारी होने का खतरा बढ़ जाता है। सामान्य बीमारियां भी बरसात के कारण बढ़ जाती हैं। लेकिन लोगों को अस्पताल पहुंचने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इससे उनके जीवन स्तर का पता लगाया जा सकता है। बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में सारण, गोपालगंज, खगड़िया, सहरसा, बेगूसराय, पटना तथा जहानाबाद प्रमुख हैं। राष्ट्रीय बाढ़ आयोग के अनुसार बिहार देश का सबसे ज्यादा बाढ़ प्रभावित राज्य है। बाढ़ के समान ही प्राकृतिक विपदा का एक भयंकर रूप सूखा है। राज्य का लगभग 20% भाग सूखा प्रभावित है। बारिश की अनिश्चितता एवं परिवर्तनशीलता के कारण राज्य में हर दो-तीन साल में सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। सूखे की समस्या का प्रत्यक्ष प्रभाव कृषि की अवस्था पर पड़ता है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार की कमी, खाद्यान्न एवं चारे की कमी उत्पन्न हो जाती है। बड़े पैमाने पर लोग भूख एवं पेयजल की समस्या का सामना करते हैं। ये सभी बातें राज्य में गरीबी को बढ़ाने में सहायक हैं। इसके अलावा सर्दियों में सर्द हवा एवं गर्मियों में लू मानव एवं पशु को भारी नुकसान पहुंचाते हैं। बिहार का एक बड़ा हिस्सा ' भूकंप - जोन' में आता है। इसके अलावा भी अनेक प्राकृतिक आपदायें हैं जो बिहार में निर्धनता की वाहक हैं। परंतु इस सबके बावजूद सिर्फ प्राकृतिक आपदाओं को ही बिहार की गरीबी का सर्वप्रमुख कारण नहीं माना जा सकता। इसके कई अन्य गैर- प्राकृतिक कारण भी हैं। इसमें राज्य की जनसंख्या वृद्धि, सामाजिक सेवा क्षेत्र का कम विकास, राजनीतिक सक्रियता का अभाव एवं उदारीकरण के कारण ग्राम्य एवं कुटीर उद्योगों की उपेक्षा प्रमुख कारण हैं। इसके अलावा राज्य में खनिज संसाधनों का अभाव एवं कृषि का आधुनिक न होना भी निर्धनता के प्रमुख कारण हैं। राज्य की साक्षरता दर देश में अभी सबसे कम है। 2011 की जनगणना के अनुसार बिहार की साक्षरता दर सबसे कम 61.8% है। जबकि केरल की साक्षरता दर 94.0% है। राज्य में निर्धनता ने निर्धनता को और बढ़ाया है। लोगों के पास उद्योग-धंधों अथवा कृषि में निवेश के लिए धन की कमी है। कई अन्य कारण भी निर्धनता के लिए उत्तरदायी हैं।

अत: बिहार में निर्धनता के लिए प्राकृतिक विपदाओं के अतिरिक्त और अन्य कारक भी जिम्मेदार हैं जिनकी वजह से राज्य में निर्धनता का स्तर काफी ऊंचा हो गया है।

प्र. बिहार में विभिन्न कृषि उपजों की प्रति हेक्टेयर उत्पादन स्थिर क्यों है? इनके आधारभूत कारणें एवं उन्हें दूर करने के महत्वपूर्ण उपायों को समझाइये।

Key to Answer

कृषि उपजों की उत्पादन-स्थिरता का मूल कारण कृषि में विकास का न होना है। विकास न होने के प्राकृतिक एवं गैर-प्राकृतिक कारणों को समझाएं एवं इन्हें दूर करने के प्रभावकारी उपायों की चर्चा करें !

उत्तर - बिहार प्रारंभ से ही एक कृषि प्रधान राज्य रहा है। परंतु राज्य के विभाजन के बाद औद्योगिक नगर एवं खनिज संपदा के झारखण्ड में चले जाने के कारण बिहार की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर हो गयी। एक तरफ जहां राज्य की अर्थव्यवस्था एवं अधिकतर जनसंख्या कृषि आधारित है वहीं, विभिन्न कृषि उपजों की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता स्थिर होना विचारणीय तथ्य है।

कृषि उत्पादकता के स्थिर होने का कारण बिहार में कृषि का नवीनीकरण न होना है। विकास अवरोध के कई प्राकृतिक एवं गैर-प्राकृतिक कारण हैं। प्राकृतिक कारणों में सर्वप्रमुख बाढ़ है जिसके कारण राज्य में प्रतिवर्ष 68.8 लाख हेक्टेयर भूमि प्रभावित होती है। इसका व्यापक असर कृषि पर देखने को मिलता है। बाढ़ के कारण राज्य के एक बड़े कृषि योग्य भू-भाग पर जल- जमाव की स्थिति हैं। राज्य की कुल 9.41 लाख हेक्टेयर भूमि पर जल जमाव होने से राज्य का कृषि क्षेत्र प्रभावित होता है। बाढ़ एवं जल जमाव के अतिक्ति सूखे की समस्या भी कृषि विकास में बाधक है। राज्य के अधिकतर जिले सूखा प्रभावित हैं एवं इससे निपटने के प्रभावकारी उपाय की कमी है। सूखे से निपटने के लिए राज्य के पास सिंचाई के वैकल्पिक साधनों के अभाव में बिहार की कृषि मानसून पर निर्भर हो गयी है जिससे कृषि उत्पादकता एवं विकास प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुआ है।

कृषि उत्पादकता में स्थिरता अथवा विकास में कमी के लिए कृषि से संबंधित संरचनात्मक तत्व भी उत्तरदायी हैं। 80% से अधिक जोत इकाइयां 1 हेक्टेयर भूमि से कम की हैं, जबकि 4-10 हेक्टेयर के बीच मात्र 1.7% जोत इकाइयां हैं। बिहार में भूमि सुधार की विफलता का परिणाम है। छोटी जोत वाली इकाइयों के कारण उत्पादकता प्रभावित होती है। छोटे एवं सीमांत किसानों को इस कारण बटाईदारी पर खेती करने को मजबूर होना पड़ता है। अस्थायित्व एवं न्यूनतम लाभ की स्थिति के कारण बटाईदारी व्यवस्था भी कृषि एवं कृषकों के विकास में बाधक है।

कृषि के विकास में सबसे बड़ी बाधा कृषकों की अशिक्षा, परंपरागत सोच, साहुकारों पर निर्भरता एवं विपणन सुविधाओं का अभाव है। व्यापक-सुधारों के अभाव में कृषकों का जीवन अत्यंत कष्टकर है। मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' का मुख्य पात्र होरी अब भी भारतीय किसानों का प्रतीक है। दीनता, दुर्बलता एवं अभाव ही उसके पहचान हैं एवं समयपूर्व मृत्यु की प्राप्ति उसकी वास्तविकता। जब उत्पादक ही न्यूनतम लाभ का भागी होगा, तो उत्कृष्ट उत्पादकता संभव नहीं है।

सुधार के उपाय

बिहार में कृषि उत्पादों की स्थिति एवं उत्पादकता की समस्या के समाधान के लिए कृषि क्षेत्र में व्यापक स्तर पर सुधार की आवश्यकता है। बाढ़, सूखा एवं जल जमाव जैसी बड़ी समस्याओं के स्थायी निदान के लिए राज्य एवं केन्द्र सरकार को मिलकर काम करना होगा। बाढ़ को रोकने के लिए मजबूत बांधों की आवश्यकता होगी। बाढ़ से फसलों के नुकसान की स्थिति में सरकार को पर्याप्त क्षतिपूर्ति देनी होगी। राज्य में समुचित सिंचाई की व्यवस्था करनी होगी ताकि कृषि मानसून पर निर्भर न रहे। इसके लिए वर्षाजल, भूमिगत जल एवं नदियों के जल का समुचित प्रबंधन आवश्यक है। जल संरक्षण के विभिन्न उपाय अपना कर हम सूखे की समस्या को भी सुलझा सकतें हैं। राज्य की लगभग 9.41 लाख हेक्टेयर भूमि जल-जमाव अथवा दलदली भूमि के अन्तर्गत है। यदि इनका पुनरुद्धार किया जाए तो राज्य में कृषि क्षेत्र का विस्तार होगा। कृषि विकास के लिए सरकार को भूमि सुधार उपाय को

दृढ़तापूर्वक अपनाना होगा। भूमि हदबंदी कानून एवं काश्तकारी कानून में संशोधन कर इसे लागू करना होगा। इसके अतिरिक्त कृषकों की स्थिति में सुधार अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए कृषि को उद्योग का दर्जा देना होगा जिससे कृषक की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके। कृषकों की शिक्षा एवं उनके ज्ञान की वृद्धि आवश्यक है ताकि वे उत्कृष्ट बीजों, खाद्य एवं तकनीक का प्रयोग कर सकें। सरकारी एवं गैर-सरकारी स्तर पर वित्त व्यवस्था के लिए ढांचागत सुधार आवश्यक है। इसके लिए स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। बिहार में कृषकों के लिए विपणन की समस्या सबसे प्रमुख है। इसके लिए सरकार को कृषकों के उत्पाद को उचित मूल्य पर खरीदने चाहिए एवं गांवों को शहरों से जोड़ने के लिए सड़कों का विकास करना चाहिए। इसके अतिरिक्त भी अनेक उपायों को अपनाया जा सकता है।

Key to Remember

बिहार में कृषि उत्पादन की स्थिरता / कृषि विकास में

- **कमी के मुख्य कारण-**
  - बाढ़ - 68.8 लाख हेक्टेयर भूमि बाढ़ से प्रभावित (प्रतिवर्ष)
  - जल जमाव - 9.41 लाख हेक्टेयर भूमि प्रभावित
  - सूखे की समस्या
  - अपर्याप्त सिंचाई व्यवस्था
  - छोटी जोत इकाइयां - 80% से अधिक जोत इकाइयां 1 हेक्टेयर से कम की हैं।
  - बंटाईदारी व्यवस्था - अस्थायित्व व शोषक
  - कृषकों में अशिक्षा, परंपरागत सोच
  - वित्त एवं विपणन सुविधाओं का अभाव आदि।
  - वर्णित समस्याओं का उचित समाधान

प्र. बिहार राज्य के विकास में बहु-उद्देश्यीय नदी घाटी परियोजना की भूमिका को समझाइये।

उत्तर - बहु-उद्देश्यीय नदी घाटी परियोजना किसी भी राज्य, क्षेत्र अथवा देश के विकास में महत्वपूर्ण विकासात्मक भूमिका निभाती हैं। बिहार विभाजन के बाद महत्वपूर्ण एवं बड़ी परियोजनाएं झारखण्ड के हिस्से चली गईं। लेकिन बिहार में भी कुछ बहु-उद्देश्यीय योजनाएं हैं जो बाढ़ नियंत्रण, सिंचाई एवं विद्युत उत्पादन में सहायक हैं। वर्तमान में बिहार में तीन प्रमुख बहु-उद्देशीय परियोजनाएं हैं- (1) कोसी परियोजना, (2) गंडक परियोजना, (3) सोन परियोजना

1. **कोसी परियोजना-** उत्तर बिहार की यह एक प्रमुख परियोजना है जिसका निर्माण नेपाल के सहयोग से किया गया है। विनाशकारी बाढ़ों के कारण कोसी को 'उत्तरी बिहार का शोक' कहते हैं। इस परियोजना के निर्माण के पूर्व लगभग 3200 हेक्टेयर कृषियोग्य भूमि बाढ़ प्रभावित थी। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य कोसी नदी की बाढ़ एवं खिसकते प्रवाह पथ पर रोक, सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण एवं जल विद्युत उत्पादन रहा है। इस परियोजना से विभिन्न जिलों के लगभग 24 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जा रही है। साथ ही कटैया नामक स्थान पर एक जल विद्युत गृह का निर्माण किया गया है जिसकी क्षमता 20,000 किलोवाट है।
2. **गंडक परियोजना-** गंडक नदी भी नेपाल से आती है। इस परियोजना का निर्माण नेपाल सरकार के सहयोग से किया गया है। इस परियोजना के अंतर्गत भारत-नेपाल सीमा के पास भैंसालोटन नामक स्थान में बैराज निर्मित किया गया है। इससे निकाली गई नहरें सीवान, पूर्वी एवं पश्चिमी चंपारण, मुजफ्फरपुर, दरभंगा के लगभग 12.4 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई करती है। इससे विद्युत उत्पादन के लिए भी दो विद्युत गृहों की स्थापना की गई है।

3. **सोन परियोजना-** सोन विंध्याचल की पहाड़ियों से निकलती है एवं पटना के समीप गंगा में मिल जाती है। इस पर डेहरी में इंद्रपुरी बैराज का निर्माण किया गया है। इससे निकाले गए नहरों से बक्सर, भोजपुर, रोहतास, कैमूर, गया, औरंगाबाद तथा पटना जिलों में सिंचाई की व्यवस्था की गई है

उपर्युक्त परियोजनाओं के अतिरिक्त बिहार में अनेक परियोजनाएं चलाई जा रही हैं एवं कुछ नई परियोजनाओं का निर्माण हो रहा है। ये बहु-उद्देश्यीय परियोजनाएं बिहार में कृषि हेतु सिंचाई, उद्योग, कृषि एवं घरेलू उपयोग हेतु विद्युत एवं आंतरिक परिवहन के स्त्रोत हैं। ये बिहार के विकास में अत्यंत सहायक हैं।

Key to Remember

बिहार की प्रमुख बहु-उद्देश्यीय परियोजनाएं

(i) कोसी परियोजना- नेपाल के सहयोग से निर्मित
   - उद्देश्य कोसी नदी के बाढ़ एवं खिसकते प्रवाह पथ पर रोक, जल विद्युत उत्पादन, सिंचाई।

(ii) गंडक परियोजना - नेपाल के सहयोग से निर्मित
   - गंडक पर भैंसालोटन स्थान में बैराज का निर्माण।
   - उद्देश्य - सिंचाई एवं विद्युत उत्पादन

(iii) सोन परियोजना - डेहरी में इंद्रपुरी बैराज का निर्माण
   - सिंचाई के लिए नहर एवं आंतरिक परिवहन के दृष्टिकोण से लाभदायक

प्र. विकास की संपूर्ण संभावनाओं के होते हुए भी बिहार भारत का एक पिछड़ा राज्य माना जाता है। स्पष्ट कीजिए।

Key to Answer

विकास की संभावना होते हुए भी बिहार पिछड़ा राज्य है। इसके पक्ष में तर्क एवं कारण दें।

उत्तर- भारत के पिछड़े राज्यों की गिनती में बिहार का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। बिहार लगभग हर दृष्टिकोण से अन्य राज्यों की अपेक्षा पिछड़ गया है। आर्थिक समृद्धि, सामाजिक विकास एवं समरूपता, शैक्षणिक स्थिति आदि दृष्टिकोण से बिहार की हालत दयनीय है। दूसरे राज्यों एवं महानगरों में बिहार एवं बिहारियों की छवि बहुत अच्छी नहीं मानी जाती। वास्तव में इनका कारण क्या है? क्या विकास के लिए हमारे पास संभावनाओं की कमी है? नहीं, वास्तव में समृद्ध प्राकृतिक साधनों एवं मेहनती तथा योग्य मानव संसाधनों के कारण हमारे पास विकास की अपार संभावनाएं हैं, लेकिन कुछ सामाजिक समस्याओं एवं राज्य सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति के अभाव में इनका समुचित उपयोग नहीं हो सका है।

बिहार में अनेक सामाजिक बुराइयां हैं, जिनमें जातिवाद प्रमुख है जो विकास को प्रभावित करती है। बिहार की राजनीति में जातिवाद निर्णायक है। यद्यपि पिछले दो विधानसभा चुनावों में जनता ने जाति की तुलना में विकास को चुना है, परन्तु स्थानीय स्तर पर जाति का अभी भी स्पष्ट प्रभाव है।

बिहार विभाजन के बाद शेष बिहार में खनिज संसाधनों का लगभग अभाव हो गया है परन्तु हमारे हिस्से एक उपजाऊ मैदानी भाग है जो कृषि क्षेत्र में उत्कृष्टता प्रदर्शित कर सकती है। हमारे पास मानव संसाधनों की प्रचुरता है। राज्य के मजदूरों ने अन्य राज्यों के विकास में योगदान दिया है। ये मजदूर अपने राज्य में ही काम मिलने से ज्यादा मेहनत से कार्य करेंगे। इससे इनकी भी समृद्धि एवं खुशहाली बढ़ेगी। उच्च शिक्षित लोगों ने भी बिहार की शान भारत के अन्य शहरों, महानगरों एवं विदेशों में बढ़ाई है। इनका उपयोग बिहार के विकास में किया जा सकता है। राज्यों में ज्ञान आधारित उद्योग का भी विकास किया जा सकता है जिसमें अन्य उद्योगों की तरह वृहद संसाधनों की आवश्यकता नहीं है।

बिहार उत्तर भारत के मैदानी भाग का एक उपजाऊ प्रदेश है तथा यहां की अर्थव्यवस्था लगभग कृषि आधारित है। परन्तु प्राकृतिक एवं गैर-प्राकृतिक समस्याओं के कारण कृषि का समुचित विकास नहीं

हो सका है। बाढ़, सूखा, जल-जमाव जैसी प्राकृतिक समस्याओं का स्थायी समाधान हम नहीं कर सके हैं। उसी प्रकार भू-सुधार संबंधी कानूनों को अभी तक ठीक से नहीं लागू किया गया है। इसमें अनेक सामाजिक एवं राजनीतिक बाधाएं हैं जिन्हें दूर करना होगा। भूमि हदबंदी कानून एवं काश्तकारी कानून को संशोधित कर लागू करने की आवश्यकता है, तभी कृषि का विकास संभव है एवं कृषि के विकास पर बिहार का विकास निर्भर है।

पर्याप्त खनिज संसाधनों के अभाव के बावजूद उद्योग लगाने के लिए आवश्यक अन्य तत्व बिहार में उपलब्ध हैं। यदि सरकारी स्तर पर सक्रियता दिखाई जाए तो बिहार में निवेश की भरपूर संभावना है। उद्योग के लिए आवश्यक भूमि, जल संसाधन, मेहनती एवं उच्च स्तरीय मानव संसाधन आदि उपलब्ध हैं। संतोष की बात है कि वर्तमान सरकार विकास के प्रति गंभीर है एवं सरकार द्वारा किए गए प्रयास सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न कर रहे हैं।

प्र. बिहार में उद्योगों के लिए संसाधन संभाव्यता, योजना तथा विकास का परीक्षण कीजिए।

उत्तर- झारखंड के अलग राज्य बनने के बाद अधिकतर औद्योगिक नगर तथा खनिज संसाधन झारखंड के हिस्से में पड़े एवं शेष बिहार के हिस्से पिछड़ी कृषि बची। यद्यपि बिहार में उपजाऊ जमीन एवं अन्य प्राकृतिक साधन उपलब्ध हैं जिससे कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया जा सकता है। राज्य में समतल भू-भाग उद्योग लगाने के लिए उपयुक्त दशा प्रदान करते हैं। कपड़ा, चीनी, जूट, वन आधारित उद्योग, उर्वरक, सीमेंट, चाय आदि उद्योगों के लिए पर्याप्त कच्चे माल की यहां उपलब्धता है। साथ ही यहां मानव संसाधन की प्रचुरता श्रम-शक्ति उपलब्ध कराते हैं। बिहार में परिवहन का पर्याप्त विकास हुआ है। यहां रेल लाइनों का जाल बिछा हुआ है तथा सड़कों का भी पर्याप्त विकास हुआ है।

बिहार में कपड़ा उद्योग प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है। यहां वस्त्र उत्पादन में हस्तकरघा उद्योग की प्रधान भूमिका महत्वपूर्ण है जिसका मुख्य केन्द्र भागलपुर, बांका, अरवल, गया, जहानाबाद, नवादा, पटना और औरंगाबाद है। बिहार में रेशम उद्योग के लिए भी पर्याप्त संभावना है। भागलपुर को 'रेशम का शहर' कहते हैं। इसके आस-पास रेशम उद्योग की इकाइयां अवस्थित हैं। राज्य जूट आधारित उद्योग के लिए भी प्रसिद्ध रहा है। पूर्णिया, कटिहार, किशनगंज, अररिया आदि जिलों में जूट उत्पादन हो रहे हैं। चीनी उद्योग के लिए यहां पर्याप्त गन्ने का उत्पादन संभव है परन्तु चीनी मीलों की रूग्णता के कारण गन्ना उत्पादन में कमी आई है। स्वतंत्रता पूर्व राज्य में चीनी उद्योग की स्थिति काफी अच्छी थी। उस समय बिहार को देश का 'चीनी का कटोरा' कहा जाता था। उसी प्रकार राज्य में वन आधारित उद्योग के विकास के लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध हैं, जैसे- कागज एवं गत्ता उद्योग, कत्था, बांस एवं बेंत, लाह, गोंद, शहद, मोम आदि। बिहार कृषि प्रधान राज्य होने के कारण उर्वरक उद्योग के लिए उपयुक्त है। यहां बरौनी में हिन्दुस्तान फर्टिलाइजर कार्पोरेशन की इकाई कार्यरत है लेकिन प्रबंधन की अक्षमता, विद्युत की कमी तथा तकनीकी कमजोरियों के कारण यह इकाई अपनी कुल उत्पादन क्षमता का मात्र 40% ही उत्पादन कर पाती है। रोहतास में पायराइट फास्फेट एण्ड केमिकल्स लि. (PPCL) अवस्थित है। यह कारखाना रोहतास एवं आसपास के क्षेत्र में विशाल पायराइट भंडार के उपयोग से फास्फेट उर्वरक का उत्पादन करता है। रोहतास जिले में ही चूना पत्थर के भंडार उपलब्ध हैं। यहां के डालमियानगर में एक बड़ा सीमेंट कारखाना स्थित है। इस तरह स्पष्ट है कि बिहार में औद्योगिक इकाइयां तो हैं, लेकिन इनमें से अधिकतर बंद और रूग्ण हैं। यदि सरकार दृढ़-इच्छाशक्ति के साथ काम करे तो रूग्ण पड़ी इकाइयों को पुनर्जीवित किया जा सकता है।

अत: बिहार में उद्योग के लिए संसाधनों की कमी नहीं है लेकिन समुचित ढांचागत सुविधाओं को

बढ़ाकर राज्य का विकास किया जा सकता है। वर्तमान सरकार इस दिशा में सकारात्मक कदम उठा रही है जिससे राज्य में स्थिति तुलनात्मक रूप से बेहतर हुई है। कई विद्युत परियोजनाओं पर कार्य चल रहा है, साथ ही राज्य में निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए उद्योगपतियों को आमंत्रित किया जा रहा है। निश्चित तौर पर इसका सकारात्मक असर पड़ेगा एवं बिहार का भविष्य उज्ज्वल होगा।

प्र. बिहार में समृद्ध प्राकृतिक साधनों के बावजूद औद्योगिक विकास की गति धीमी क्यों है? विवेचना कीजिए।

Key to Answer

समृद्ध प्राकृतिक साधन (मुख्यत: कृषि के लिए) के बावजूद औद्योगिक विकास में मंदी के विभिन्न कारणों की चर्चा करें।

उत्तर - बिहार में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता है। यह भारत के उपजाऊ उत्तरी मैदान का भाग है जो कृषिकार्य हेतु उत्तम मानी जाती है। यद्यपि हमारे पास खनिज संसाधनों की कमी है लेकिन मेहनती एवं कुशल मानव संसाधन ने इस कमी को किया है। यहां की कृषि एवं मानव संसाधन के समुचित उपयोग से कृषि आधारित उद्योग लगाए जा सकते हैं। साथ ही पूरा यहां की बड़ी जनसंख्या घरेलू बाजार भी उपलब्ध कराती है। बिहार की जलवायु कृषिकार्य के साथ ही कठिन श्रम करने हेतु उपयुक्त है। यहां जल संसाधनों की कमी नहीं है तथा इनका प्रयोग सिंचाई, बिजली उत्पदान, आंतरिक परिवहन, औद्योगिक एवं घरेलू उपयोग हेतु किया जा सकता है। तालाबों एवं जल जमाव वाले क्षेत्रों में मत्स्य पालन उद्योग फायदेमंद हो सकता है। बिहार कलकत्ता बंदरगाह से नजदीक है। इसका फायदा यहां के उद्योगों को मिल सकता है। इन सबके बिहार में औद्योगिक विकास काफी मंद है। इसके निम्नलिखित कारण हैं-

1. बिहार विभाजन के बाद औद्योगिक नगर एवं खनिज क्षेत्र झारखंड में चले गए, जबकि शेष हिस्से में मात्र कृषि का विकास भी उच्च स्तर का नहीं हो पाया है। यहां की कृषि अब भी पिछड़ी अवस्था में है।
2. यहां लघु एवं कुटीर उद्योगों की पर्याप्त संभावना है, परन्तु वित्त के अभाव में लघु कुटीर उद्योगों का भी पर्याप्त विकास नहीं हो पाया है। इसके लिए सरकारी सहायता के साथ ही स्वयं सहायता समूहों (SHGs) की आवश्यकता है।
3. उद्योगों में दूसरे राज्यों अथवा देशों से निवेश के लिए यहां माहौल नहीं है। कानून-व्यवस्था की स्थिति पिछले कुछ वर्षों तक अत्यंत खराब थी। साथ ही उद्योगों के लिए अन्य ढांचागत सुविधाओं का अभाव है।
4. वर्तमान सरकार औद्योगिक विकास को लेकर गंभीर है परन्तु पहले की सरकारें इस मामले में ज्यादा गंभीर नहीं थीं जिसका नतीजा यह हुआ कि नए उद्योगों का अभाव, साथ ही पुराने उद्योग-धंधों का विध्वंस।
5. उद्योग के लिए आवश्यक बिजली, कोयला आदि का बिहार में अभाव है। जल-विद्युत का उत्पादन एक विकल्प हो सकता है लेकिन इसके लिए अब तक गंभीर प्रयास नहीं किए गए हैं।
6. बिहार में नक्सलवाद एवं गुण्डागर्दी अपने चरम पर है। ये तत्व औद्योगिक विकास में बाधक हैं तथा औद्योगिक विकास के खिलाफ हिंसा का सहारा लेते हैं। ये सरकारी एवं निजी संपत्ति को नुकसान पहुंचाते रहते हैं। इन सबके कारण जहां नये उद्योगपति आने से डरते हैं, वहीं यहां के उद्योगपतियों का पलायन हो रहा है।
7. यहां उद्योगों के लिए कच्चे माल की कमी है।
8. औद्योगिक विकास में बिहार की सामाजिक व्यवस्था भी बाधक है। जाति-व्यवस्था के कारण सभी को विकास करने, व्यापार करने आदि का

समान अवसर उपलब्ध नहीं हो पाता। राजनीतिक दल भी जाति आधारित जीत हासिल कर विकास को किनारे कर देते हैं।

यद्यपि विगत कुछ वर्षों से सरकार की सक्रियता के कारण स्थिति में बदलाव आया है जिससे यह आशा की जा सकती है कि आने वाले कुछ वर्षों में बिहार औद्योगिक विकास दर्ज करेगा।

प्र. बिहार अपनी घरेलू, कृषि तथा औद्योगिक संबंधी आवश्यकताओं के लिए जल संसाधनों का उपयोग युक्तिसंगत ढंग से नहीं कर रहा है। समीक्षा कीजिए।

Key to Answer

बिहार के जल संसाधनों के उपयोग की क्षमता का कृषि तथा उद्योग के संदर्भ में समीक्षा (पक्ष-विपक्ष दोनों) करें।

उत्तर - बिहार में जल संसाधनों की प्रचुरता है। यहां सतही जलस्त्रोत जैसे- नदी, झील, जल-निमग्न क्षेत्र तथा भूगर्भीय जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। यहां वर्षा की स्थिति भी अच्छी है। वार्षिक वर्षा 105 सेमी. होती है जो मीठे पानी का एक बड़ा स्रोत है। इन सबके बावजूद हम अपने जल संसाधनों का समुचित प्रबंधन नहीं कर पाये हैं जिससे प्रकृति का यह वरदान बाढ़, सूखा, जल- जमाव आदि के रूप में अभिशाप बन गया है।

जल संसाधन का उपयोग पेयजल, घरेलू उपयोग, भवन निर्माण, विभिन्न उद्योगों, कृषि तथा पशुपालन, परिवहन आदि में होता है। जल संसाधनों की प्रचुरता के बावजूद हमने इसका दोहन पर्याप्त एवं वैज्ञानिक तरीके से नहीं किया है। राज्य के कई जिलों में भू-जल स्तर काफी नीचे चला गया है जिसे वर्षाजल का संचय कर रिचार्ज किया जा सकता है। जल संचय के विभिन्न तरीकों पर अभी तक ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया है। जबकि भू-जल स्तर के ज्यादा नीचे जाने से जहां कृषि लागत बढ़ रही है, वहीं यह भविष्य के लिए एक खतरनाक संकेत भी है। यद्यपि MNREGA के अंतर्गत वर्षा जल संचय के लिए तालाबों का निर्माण किया जा रहा है जो एक उत्साहवर्धक कदम है। इसे वृहत पैमाने पर अपनाया जा सकता है जिससे कृषि - सिंचाई की समस्या दूर हो जाएगी। ऐसे प्रयासों में गैर-सरकारी संगठनों अथवा व्यक्तियों को भी आगे आना होगा। महाराष्ट्र के रालेगांव सिद्धि में अन्ना हजारे द्वारा किया गया सफल जल प्रबंधन अनुकरणीय है। बिहार में नदियों का प्रयोग आंतरिक परिवहन के साधन के तौर पर किया जा सकता है। इससे भारी सामान के यातायात में सुगमता होगी। हमें उपलब्ध जल संसाधनों की शुद्धता पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। नदियों एवं अन्य जल स्रोतों के पानी को स्थानीय लोगों एवं औद्योगिक इकाइयों द्वारा प्रदूषित किया जा रहा है। कई स्थानों पर भू-जल प्रदूषण से ये उपयोग लायक नहीं रहते एवं भविष्य में इनके समाप्त होने का खतरा उत्पन्न हो जाता है। प्रदूषण के कारण दिल्ली की यमुना की स्थिति दयनीय हो गई है। इसके लिए जल - जागरूकता के साथ ही सरकारी स्तर पर गंभीर प्रयास की आवश्यकता है।

राज्य की कृषि वर्षा एवं अन्य प्राकृतिक साधनों पर निर्भर है लेकिन यदि इन प्राकृतिक साधनों का हम समुचित विकास करें तो हमारी कृषि की सिंचाई आवश्यकता बहुत हद तक पूरी हो जाएगी। नदियों से नहरों का निर्माण कर एवं नदियों को आपस में जोड़ने की योजनाओं पर अमल कर कृषि का विकास किया जा सकता है साथ ही बाढ़ एवं सूखा से भी बचा जा सकता है। बिहार में भूगर्भीय जल संसाधन का पूर्ण दोहन नहीं हो पाया है। कृषि विकास के लिए इनका समुचित प्रयोग आवश्यक है। यद्यपि इनके दोहन के साथ ही हमें 'जल - संचय' एवं 'भू-जल के रिचार्ज' को भी ध्यान में रखना होगा।

जल संसाधनों के उचित प्रयोग न कर पाने का ही नतीजा बाढ़ एवं जल जमाव की समस्या है। बाढ़ की समस्या बिहार के लिए अभिशाप है। प्रतिवर्ष 68.8 लाख हेक्टेयर भूमि बाढ़ से प्रभावित होती है जिससे भूमि पर जल जमाव के कारण जान-माल की अपार

क्षति होती है। नदियों पर जहां संभव हो, बहु-उद्देश्यीय परियोजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए जो कि अभी तक संभव न हो सका है। इससे एक तरफ जहां बाढ़ की समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है, वहीं कृषि के लिए नहरों एवं बिजली का उत्पादन किया जा सकता है। बिजली उत्पादन से राज्य के उद्योग-धंधों को बल मिलेगा। जल संसाधनों का प्रयोग उद्योगों के विकास के लिए भी किया जाना चाहिए। कृषि आधारित उद्योग एवं मत्स्य उद्योग स्थापित किए जा सकते हैं। मत्स्य उद्योग का विकास जल जमाव वाले क्षेत्र में भी किया जा सकता है, यद्यपि इनका विकास स्थानीय लोगों के द्वारा हो रहा है परन्तु सरकार को इनका विकास आधुनिक पद्धति से करना चाहिए।

अतः हम उपलब्ध जल संसाधनों का युक्तिसंगत तरीके से उपयोग नहीं कर पाये हैं, लेकिन इस दिशा में सरकारी एवं गैर-सरकारी स्तर पर अनेक कार्य किए जा रहे हैं।

प्र. जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का विवेचन कीजिए। भारत के उदाहरण दीजिए।

उत्तर-भारत में जनसंख्या का वितरण असमान है, उत्तर- पूर्वी राज्य अरुणाचल प्रदेश में जहां जनसंख्या घनत्व 17 प्रति वर्ग किमी. है, वहीं दिल्ली का जनसंख्या घनत्व 11320 प्रति वर्ग किमी. है। अतः जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों को मुख्यतः तीन शीर्षकों में विभक्त किया जाता है, यथा-

जनसंख्या वितरण को प्रभावित करने वाले कारक

- आर्थिक कारक
  - औद्योगिक क्षेत्र
  - नगरीकरण
- भौगोलिक कारक
  - स्थलाकृति
  - जलवायु
  - जल की उपलब्धता
  - मृदा
- सामाजिक व सांस्कृतिक औद्योगिक कारक
  - धार्मिक आधार
  - जातिगत आधार
  - सांस्कृतिक आधार

- **आर्थिक कारक (Economic factors)** - जो क्षेत्र खनिज संसाधनों से संपन्न हैं, वहां पर औद्योगिक क्रिया-कलापों में वृद्धि होती है, जिससे रोजगार का सृजन होता है। परिणामस्वरूप कुशल व अर्धकुशल श्रमिक इस क्षेत्र की ओर आकर्षित होते हैं और जनसंख्या घनत्व में वृद्धि करते हैं। हुगली - कोलकाता औद्योगिक प्रदेश तथा मुंबई-पुणे औद्योगिक प्रदेश भारत में इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

  इसके अलावा नगरीकरण भी जनसंख्या वितरण को प्रभावित करता है, क्योंकि नगरों में बेहतर शिक्षा, रोजगार के अवसर, स्वास्थ्य सुविधाएं, परिवहन संचार के साधन उपलब्ध होते हैं। यही कारण है कि दिल्ली, मुंबई, चेन्नई तथा कोलकाता आदि बड़े नगरों में जनसंख्या का संकेंद्रण अधिक पाया जाता है।

- **भौगोलिक कारक (Geographical factors)** – लोग कम ढाल व समतल मैदानी क्षेत्रों में अधिक रहना चाहते हैं, जिसका प्रमुख कारण इन क्षेत्रों में सड़क, कृषि व उद्योगों के लिए अनुकूल स्थितियां पाई जाती हैं। यही कारण है कि भारत का गंगा का मैदान, विश्व का सर्वाधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों में से एक है।

  इसके अतिरिक्त जलवायु की विषम दशाएं (उष्ण व शीत मरुस्थल) जनसंख्या को

प्रतिकर्षित करती हैं, यही कारण है कि थार के मरुस्थल में जनसंख्या घनत्व कम पाया जाता है। इसी प्रकार जल की उपलब्धता व मृदा जैसे भौगोलिक कारक भी जनसंख्या को प्रभावित करते हैं।

- **सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक (Social and cultural factors)**-विशेष धर्म के अनुयायी अपने धार्मिक केंद्रों के पास निवास करना चाहते हैं। इसी तरह सांस्कृतिक एकता भी जनसंख्या को आकर्षित करती है। भारत में इसका उदाहरण अमृतसर तथा हैदराबाद आदि नगर हैं।

इस प्रकार समग्र रूप से भारत में जनसंख्या के वितरण को अनेक कारक प्रभावित करते हैं।

प्र. भारत की जनसंख्या नीति 2000 की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालिए। जनसंख्या स्थिरीकरण के लिए कुछ उपाय सुझाइए।

उत्तर - राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 की घोषणा गर्भ निरोध, स्वास्थ्य संबंधी, आधारगत ढांचा, स्वास्थ्य कर्मचारियों और एकीकृत सेवा डिलीवरी की मांगों को पूरा करने के लक्ष्य को हासिल करने के लिए की गई थी।

इस नीति का उद्देश्य कुल प्रजनन दर को 2 बच्चे प्रति जोड़ा तक लाना है। साथ ही 2045 तक जनसंख्या को स्थिर करना।

विशेषताएं-

1. नीति में प्रेरक और प्रोत्साहन संबंधी 16 युक्तियां दी गई हैं, जिनमें पंचायतों और जिला परिषदों को छोटे परिवार को प्रोत्साहन करने पर पारितोषिक देना, बाल-विवाह विरोधी कानून और प्रसव-पूर्व गर्भ जांच तकनीकी कानून का कड़ाई कीकुर से पालन, दो बच्चों के प्रतिमान को प्रोत्साहन और नसबंदी की सुविधा को पारितोषिक और प्रोत्साहन के जरिए मजबूती प्रदान करना है।
2. प्रजनकता के विनियमन और गर्भ निरोधक के उपयोग के लिए सूचना व सेवाओं तक सार्वभौमिक पहुंच को सुनिश्चित करना।
3. लड़कियों की अधिक उम्र में विवाह को प्रोत्साहन देना।
4. 80 प्रतिशत संस्थागत प्रसव और 100 प्रतिशत प्रशिक्षित मनु किन्द्र व्यक्तियों द्वारा प्रसव।
5. साथ ही शिशु मृत्यु दर को घटाकर 1000 जन्म 30 से नीचे लाना, मातृ मृत्यु दर को प्रति एक लाख जीवित जन्म 100 से नीचे लाना, सभी जन्मों, मृत्युओं, गर्भधारण और विवाह का 100 प्रतिशत पंजीकरण करना और टीके से सभी रोकथाम होने योग्य बीमारियों के खिलाफ सार्वभौमिक प्रतिरक्षण प्राप्त करना।

जनसंख्या स्थिरीकरण के कुछ उपाय

- सरकार दो बच्चों की नीति का पालन करने वाले परिवारों को अपनी नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों में कुछ Advantages देने चाहिए।
- परिवार नियोजन से होने वाले लाभों को प्रचारित किया जाना चाहिए।

प्र. भारत में नगरीकरण की प्रवृत्ति का परीक्षण कीजिए तथा तीव्र गति से बढ़ते नगरीकरण से उत्पन्न सामाजिक परिणामों की व्याख्या कीजिए।

उत्तर - UNO की एक नवीनतम रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में दुनिया की आधी आबादी शहरों में रह रही है और 2050 तक भारत की आधी आबादी महानगरों और शहरों में रहने लगेगी। भारत में शहरीकरण तेजी से बढ़ रहा है।

आंकड़ों के मुताबिक, 2001 में भारत की 27.81 प्रतिशत आबादी शहरों में रहती थी, जो 2011 तक

31.16 प्रतिशत हो गई। भारत में शहरीकरण में लगातार वृद्धि हो रही है। जैसे- शहरी आबादी, जो-

- 1901 में 2 करोड़ 56 लाख थी;
- 1951 में 6 करोड़ 24 लाख थी;
- 1981 तक इस आबादी में 91.71 मिलियन की वृद्धि हुई। इसी तरह 1981-1991 के बीच यह आबादी 5 करोड़ 77 लाख बढ़ गई। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भारत में औद्योगीकरण से शहरी आबादी में आवश्यक वृद्धि हुई है। भले ही विकास धीमा हो।

नगरीकरण से उत्पन्न सामाजिक प्रभाव

1. सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन, इसमें व्यक्तिवाद, सामूहिकता की भावना में कमी, उपभोक्ता, नैतिक विश्वासों में कमी, स्वार्थ की भावना बढ़ रही है।
2. जीवन में कृत्रिमता, अर्थात् मनुष्य प्रकृति से कट गया है, इससे उसके सृजनात्मक विचार कुंठित हुए है और प्रकृति के साथ उसका संबंध कमजोर हुआ है।
3. ग्रामीण जीवन से पलायन बढ़ा है, इससे शहरों में दबाव बढ़ा है। मलिन बस्तियां इस प्रवास के उदाहरण हैं।
4. मनोरंजन का व्यावसायीकरण - ग्रामीण समाज में मनोरंजन का उद्देश्य कभी पैसा नहीं रहा है, लेकिन शहरों में मनोरंजन का उद्देश्य पैसा कमाना है।
5. महिलाओं की भूमिका में अंतर, महिला कार्यबल का औपचारीकरण हुआ, शिक्षा - राजनीति जैसे क्षेत्रों में इनकी भागीदारी बढ़ी।
6. सामाजिक संस्थाओं में बदलाव, जैसे न्यूक्लियर-परिवार की अवधारणा, Live in felation ship इत्यादि।
7. सेवा क्षेत्रों का विकास।

प्र. भारत में जनसंख्या विस्फोट के कारणों का उल्लेख कीजिए तथा इस समस्या से निपटने के लिए सुझाव दीजिए।

उत्तर- संयुक्त राष्ट्र की हालिया रिपोर्ट के अनुसार, भारत की जनसंख्या विश्व में सर्वाधिक हो गई है एवं यह आंकड़ा 1.4 बिलियन के स्तर को पार कर गया है। प्रधानमंत्री ने जनसंख्या विस्फोट की भयानक स्थिति को ध्यान में रखते हुए कहा कि जो भी नागरिक छोटे परिवार को प्राथमिकता देते हैं वो असली देश भक्त हैं।

भारत के संदर्भ में देखा जाए तो वर्ष 1951 से 1981 तक की स्थिति भारत के लिए जनसंख्या विस्फोट की स्थिति रही। इस दौरान दशकीय वृद्धि 24 25 प्रतिशत तक पहुंच गई।

जनसंख्या विस्फोट के कारण -

1. उच्च जन्म दर एवं निम्न मृत्यु दर के परिणामस्वरूप जनसंख्या में द्रुत गति से वृद्धि हुई।
2. **गरीबी** - परिवार की आय को बढ़ावा देने के लिए अधिक बच्चे पैदा करने की प्रवृत्ति की जनसंख्या वृद्धि में सहायक होती है।

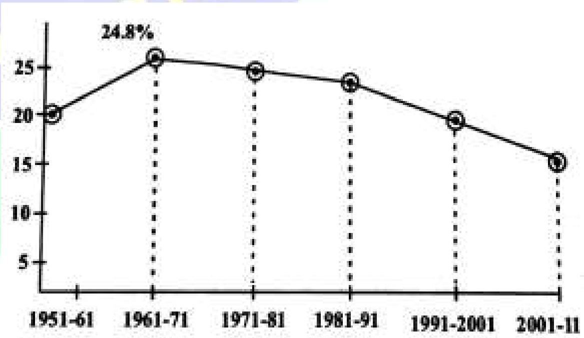

जनसंख्या में दशकीय वृद्धि

3. **अशिक्षा** - जागरूकता के अभाव में जनसंख्या वृद्धि। उदाहरण के लिए उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत की जनसंख्या दर में अंतर |

4. गलत धार्मिक शिक्षा तथा सामाजिक दबाव में शीघ्र विवाह की प्रवृत्ति जिसके कारण जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि।
5. यौन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव।
6. महामारियों का बेहतर प्रबंधन एवं अद्यतन चिकित्सकीय सुविधाएं।

समस्या का निदान

- गरीबी को कम करना तथा साक्षरता को बढ़ाना। इन क्षेत्रों में जनसंख्या नियंत्रण जैसी योजनाओं का बेहतर क्रियान्वयन।
- जनसंख्या नीति को वैज्ञानिक तरीके से लागू करना।
- सामाजिक व्यवहार में बदलाव हेतु गैर-सरकारी संगठनों की सहायता।
- यौन शिक्षा (Sex Education) को बढ़ावा देना।
- गर्भ निरोधकों के प्रति जागरूकता।
- राज्यों द्वारा जनसंख्या नियंत्रण नीति को लागू करना।

  उदाहरण - उत्तर प्रदेश जनसंख्या नियंत्रण नीति, 2021

सरकार को सभी हितधारकों के साथ मिलकर जमीनी स्तर पर मुद्दों को सुलझाना चाहिए ताकि जनसंख्या वृद्धि में नियंत्रण स्थापित किया जा सके।

प्र. महासागरों में ऊर्जा संसाधन तथा भारत के तटीय क्षेत्रों में उनकी संभावनाओं की समीक्षात्मक व्याख्या कीजिए।

उत्तर- महासागरों में ऊर्जा संसाधन के रूप है-

- ज्वार ऊर्जा,
- तरंग ऊर्जा,
- थर्मल ऊर्जा,
- कैथलेट्स,
- जीवाश्म ईंधन।

वस्तुतः नवीकरणीय ऊर्जा की प्राप्ति एवं पर्यावरण हितैषी ऊर्जा की मांगों ने महासागरीय ऊर्जा की ओर लोगों का ध्यान खींचा है। महासागरों में ऊर्जा क्षमता हमारी वर्तमान आवश्यकताओं से कहीं अधिक है।

भारत में सागरीय ऊर्जा की संभावनाएं अत्यधिक है; उदाहरण- तरंग ऊर्जा की कुल सैद्धांतिक क्षमता 40,000 मेगावॉट, वहीं OTEC ऊर्जा की 180,000 मेगावॉट है। वर्तमान में विझिंगम, कांडला, मुंबई हाई बेसिन, आंध्र तटीय इकाई इत्यादि समुद्री ऊर्जा प्राप्ति-स्थल के रूप में मुख्यतः चिह्नित हैं। भारत में मुंबई हाई- बेसिन और आंध्र तटीय क्षेत्र से जीवाश्म ईंधन प्राप्त किया जा रहा है, वहीं अन्य सागरीय ऊर्जाओं की प्राप्ति हेतु कांडला, विझिंगम, अंडमान-निकोबार में मॉडल इकाई बनाया गया है।

नवीकरणीय ऊर्जा लक्ष्यों के प्राप्ति हेतु भारत सरकार इस दिशा में प्रयास भी कर रही है। वस्तुतः भारतीय तटीय क्षेत्रों में संभावनाएं मौजूद हैं, जैसे- कच्छ की खाड़ी और खंभात की खाड़ी में ज्वारीय ऊर्जा की आदर्श दशाएं मौजूद हैं, लेकिन इन ऊर्जा संभावनाओं की प्राप्ति में आने वाली बाधाओं को राजीव रंजन सिंह समिति की रिपोर्ट के आधार पर समझा जा सकता हैं-

1. समिति ने समुद्री ऊर्जा के दोहन योग्य क्षमता के पुनर्मूल्यांकन पर जोर दिया है,
2. संयंत्रों की स्थापना की लागत संबंधी मुद्दा, समिति ने प. बंगाल व गुजरात में संयंत्र के बंद होने का हवाला देते हुए इस ऊर्जा प्राप्ति हेतु लागतों के पुनर्मूल्यांकन पर बल दिया है,
3. पर्यावरणीय प्रभाव और पारिस्थितिकी स्थिरता के संबंध में अनुमान लगाने के सुझाव,
4. शोध और विकास में निवेश बढ़ाने की अनुशंसा। वस्तुतः भारत में तटीय क्षेत्रों में इनकी क्षमताओं का होना सिद्ध है, लेकिन दोहन योग्य प्रौद्योगिकी और निवेश के अभाव के कारण

भारत अपनी इस ऊर्जा-संभाव्यता को पर्याप्त रूप से उपभोग नहीं कर पा रहा है।

प्र. लघु उद्योगों का क्या अर्थ है? लघु उद्योगों की भारतीय अर्थव्यवस्था में निर्यात एवं रोजगार की दृष्टि से क्या भूमिका है?

उत्तर- सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग विकास अधिनियम, 2006 के अनुसार लघु औद्योगिक इकाई उन उद्योगों को कहा जाता है जिनमें अधिकतम निवेश 5 करोड़ रु. का हो। ये उद्योग देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। हाल के वर्षों में यह क्षेत्र लगातार संपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र की तुलना में उच्च विकास दर दर्ज कर रहा है।

लघु उद्योगों में खादी, हथकरघा एवं ग्राम उद्योग, हस्तशिल्प, रेशम उद्योग आदि परंपरागत उद्योगों के साथ ही आधुनिक एवं परिमार्जित उत्पाद जैसे- टीवी सेट, इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण उपकरण एवं विभिन्न इंजीनियरिंग निर्माण शामिल हैं। वृहत उद्योगों के आवश्यक कल-पुर्जो का निर्माण आदि भी लघु उद्योगों के माध्यम से होता है।

लघु उद्योगों को भारी पैमाने पर बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। चूंकि काफी लोगों को इससे प्रत्यक्षत: रोजगार के साथ ही अर्थव्यवस्था को गति मिलती है, अतः सरकार इन उद्योगों के विकास के लिए "सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग विकास अधिनियम, 2006" के अंतर्गत इनके प्रोत्साहन एवं विकास के लिए प्रयासरत है। 2000 से 2005 की अवधि के लिए लघु उद्योग क्षेत्र में प्रौद्योगिकी उन्नयन के लिए कैपिटल सब्सिडी योजना लागू की थी।

लघु उद्योगों का रोजगार एवं निर्यात की दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण योगदान है। देश में 2002-03 के आंकड़ों के अनुसार 23.5 लाख पंजीकृत एवं 3.7 लाख अपंजीकृत लघु औद्योगिक इकाइयां हैं जिससे लगभग 3.23 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इसके अलावा लाखों लोग इन उद्योगों से प्रत्यक्ष ढंग से रोजगार प्राप्त कर रहे हैं, जैसे - कृषि से जुड़े लघु उद्योग कृषि एवं कृषकों की आमदनी के स्रोत हैं। इन उद्योगों की स्थापना चूंकि छोटे शहरों में होती है, अतः स्थानीय बाजारों का भी विकास होता है। साथ ही महिलाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध हो पाते हैं। छोटे व्यापारी अथवा पढ़े-लिखे बेरोजगार भी सरकारी सहायता से ऐसे उद्योग लगाते हैं जिससे जहां लोगों को रोजगार मिलता है, वहीं उद्योगों का विकेन्द्रीकरण होता है। ये बड़ी कंपनियों अथवा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बाजार में एकाधिकार को कम करता है। विकास का प्रवाह छोटे शहरों एवं कस्बों की तरफ होता है। लघु उद्योग निर्यात की दृष्टि से भारतीय अर्थव्यवस्था का मजबूत आधार है। 2010-11 आर्थिक सर्वेक्षण के आंकड़ों के अनुसार हमारे कुल निर्यात में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम (MSME) का 40% योगदान है। इसमें हैण्डलूम उत्पाद का महत्वपूर्ण योगदान है। खादी एवं ग्रामोद्योग का निर्यात (2004-05) में 39.08 करोड़ रु. रहा। आंकड़ों के आधार पर कहें तो लघु उद्योग के उत्पादों का निर्यात पहले की अपेक्षा बढ़ा है। चूंकि इससे व्यापक हित जूड़े हैं, अतः इसके विकास एवं इसे बाजार के अनुरूप तथा प्रतियोगी बनाने के लिए सरकार को गंभीर प्रयास करने होंगे।

प्र. औद्योगिक ढांचे में लघु उद्योग क्षेत्र के महत्व की व्याख्या कीजिए।

Key to Answer

अर्थव्यवस्था के विकास में लघु उद्योग क्षेत्र का महत्व बताएं।

उत्तर - लघु औद्योगिक इकाई उन उद्योगों को कहा जाता है जिनमें अधिकतम 5 करोड़ रुपये के निवेश हों, यद्यपि 1950 में यह सीमा 5 लाख रुपये थी। ये उद्योग देश की अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। यह अनुमान किया जाता है कि मूल्य के अर्थ में यह क्षेत्र निर्माण की दृष्टि

से 39% एवं देश के कुल निर्यात के 33% हिस्से के लिए जिम्मेदार है। हाल के वर्षों में यह क्षेत्र लगातार संपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र की तुलना में उच्च विकास दर दर्ज करा रहा है। इस क्षेत्र का वृहद लाभ यह है कि इसकी रोजगार क्षमता न्यूनतम पूंजी लागत पर है। यह क्षेत्र 31.2 मिलियन व्यक्तियों को रोजगार देता है और इस क्षेत्र में मजदूरों की गहनता वृहद उद्योगों की तुलना में करीब 4 गुना ज्यादा है।

लघु उद्योग में खादी, हथकरघा एवं ग्राम उद्योग, हस्तशिल्प, रेशम उद्योग आदि परंपरागत उद्योगों के साथ ही आधुनिक एवं परिमार्जित वस्तुएं जैसे- टीवी सेट, इलेक्ट्रानिक नियंत्रण उपकरण एवं विभिन्न इंजीनियरिंग निर्माण आदि शामिल हैं। बड़े उद्योगों के लिए आवश्यक कल पुर्जों का निर्माण आदि भी लघु उद्योगों के माध्यम से होता है।

लघु उद्योगों को भारी पैमाने पर बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ता है। चूंकि एक बड़ी आबादी इस क्षेत्र से प्रत्यक्षतः रोजगार के लिए जुड़ी हुई है, अतः सरकार इन उद्योगों के संरक्षण के लिए उपाय करती है लेकिन लघु उद्योगों के लिए आरक्षित वस्तुओं की संख्या चरणबद्ध तरीके से घटाई जा रही है। फिर भी भारतीय औद्यागिक ढांचे में इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान है जिन्हें निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है -

1. यह लघु उद्योग उद्यमियों की पौधशाला है जो व्यक्तिपरक सृजनात्मकता और नव-परिवर्तनों से प्रेरित होती है।
2. यह क्षेत्र रोजगार की दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। लगभग 3.12 करोड़ लोग (2006-07 के अनुसार) प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से लघु उद्योगों में रोजगार प्राप्त किए हुए हैं।
3. आर्थिक सर्वेक्षण (2010-11) के अनुसार सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम (MSME) का देश के GDP में 8% का योगदान है जिसमें 45% विनिर्मित उत्पादन और 40% के निर्यात शामिल हैं।
4. लघु उद्योगों की तीसरी राष्ट्रव्यापी गणना (2002-03) के अनुसार देश में 23.5 लाख पंजीकृत एवं 3.7 लाख अपंजीकृत लघु उद्योग की इकाइयां हैं।
5. लघु उद्योगों द्वारा स्थानीय पूंजी एवं श्रम का कुशलतापूर्वक उपयोग संभव हो पाया है।
6. लघु उद्योग औद्योगिक विकेन्द्रीकरण में सहायक है।

अतः लघु उद्योग हमारी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है लेकिन धीरे-धीरे इनके लिए आरक्षित श्रेणी के उत्पादों को घटाया जा रहा है एवं इन उत्पादों के निर्माण में देश की बड़ी कंपनियों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों को छूट दी जा रही है। अक्टूबर 2008 तक सूक्ष्म और लघु उद्यम क्षेत्रों में विनिर्माण के आरक्षित मदों की संख्या घटकर 21 रह गई है। साथ ही लघु उद्योग वित्त और साख समस्या, कच्चे माल की समस्या, मशीनों और नये उपकरणों की समस्या, विपणन की समस्या आदि से जूझ रहे हैं। इनके लिए लघु उद्योगों के प्रति उदार रवैये की आवश्यकता है।

Key to Remember

- लघु उद्योग में निवेश की अधिकतम सीमा - 5 करोड़ रु.
- महत्व-3.12 करोड़ लोगों का रोजगार प्रदाता (2006-07)
- MSME (सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग) का GDP में 8% योगदान, जिनमें विनिर्मित उत्पाद - 45%, निर्यात 40% (आर्थिक सर्वेक्षण, 2010-11)
- औद्योगिक विकेन्द्रीकरण में सहायक
- देश में 23.5 लाख पंजीकृत एवं 3.7 लाख अपंजीकृत लघु उद्योग की इकाइयां कार्यरत।

कृषि

प्र. "कृषि विविधता एवं जैविक कृषि भारत में खाद्य संरक्षण (Food Security) के अच्छे विकल्प हैं।" बिहार के विशेष संदर्भ में इसकी आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।

उत्तर- पहली बार जनसंख्या विस्फोट तथा खाद्य सुरक्षा का मुद्दा रॉबर्ट माल्थस द्वारा उठाया गया। इसकी चर्चा अपनी पुस्तक में करते हुए उन्होंने कहा कि विश्व जनसंख्या की वृद्धि ज्यामितीय श्रेणी (Geometrical Progression) में होती है, जबकि जीविका के साधनों की वृद्धि अंकगणितीय श्रेणी (Arithmetical Progression) में।

1986 की विश्व विकास रिपोर्ट ने खाद्य सुरक्षा को एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया जहां सभी को, सभी समय - पर्याप्त खाद्य एक सक्रिय स्वास्थ्यकर जीवन के लिए उपलब्ध हो। खाद्य तथा कृषि संगठन (FAO) ने 1986 में खाद्य सुरक्षा को एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया, जहां यह सुनिश्चित किया जा सकेगा कि सभी को सभी समय उनकी आवश्यकता अनुसार मूलभूत खाद्य दोनों, भौतिक तथा आर्थिक रूप में प्राप्य हों।

खाद्य सुरक्षा के संबंध उपर्युक्त परिभाषा से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं-

1. खाद्य सुरक्षा के लिए समग्र जनसंख्या के खाद्य की भौतिक उपलब्धि आवश्यक है।
2. सभी लोगों के पास पर्याप्त क्रयशक्ति हो ताकि वे अपनी जरूरत के लिए खाद्य पदार्थ खरीद सकें।
3. स्वस्थय मानव जीवन के लिए उपलब्ध खाद्य मात्रा एवं गुणवत्ता दोनों में पर्याप्त रूप में होना चाहिए जिससे वे पोषण संबंधी जरूरतों को पूरा कर सकें।
4. समय के साथ विकास के प्रत्येक चरण में खाद्य की बढ़ती मांग तथा रुचि के बदलते स्वरूप के अनुसार खाद्य उपलब्धता पर ध्यान देना जरूरी है।

खाद्य सुरक्षा के उपर्युक्त बिंदुओं को देखते हुए ऐसा कहा जा सकता है कि कृषि विविधता एवं जैविक कृषि बिहार सहित पूरे भारत में खाद्य सुरक्षा के बेहतर विकल्प साबित हो सकते हैं।

कृषि विविधता एवं जैविक कृषि

कृषि विविधता से आशय है खेत के उत्पादक संसाधनों, जैसे- भूमि, पूंजी, श्रम आदि को विविध नवीन गतिविधियों में लगाना। नवीन गतिविधियां, नई फसल या पशुधन उत्पादन एवं मूल्यवर्द्धनकारी क्रियाओं से संबंधित हो सकती है, जैसे-फल, फूल, सब्जी, मसाले, मशरूम, चारा, नीम, पाम तथा एलोवेरा आदि की खेती, मुर्गीपालन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन तथा डेयरी फार्मिंग आदि। कृषि के विविधीकरण से कृषकों की आय में वृद्धि होगी एवं ग्राम स्तर पर रोजगार के अवसर बढ़ेंगे। साथ ही पोषक तत्वों से युक्त भोजन की उपलब्धता बढ़ेगी। भोजन के खपत के बदलते स्वरूप तथा बदलती रुचि के अनुरूप खाद्य पदार्थों की उपलब्धता बढ़ेगी जो खाद्य सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

जैविक कृषि खेती करने की एक ऐसी पद्धति है. जिसके तहत अधिक उपज प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी प्रकार का रसायन उपयोग में नहीं लाया जाता है। इसमें रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर पत्तियों, गोबर तथा पेड़-पौधों से प्राप्त तथा दूसरे पदार्थों से निर्मित उर्वरकों का उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त फसलों को कीड़े-मकोड़ों से बचाने के लिए पेड़ों एवं जड़ी-बुटियों से तैयार कीटनाशक ही प्रयुक्त होते हैं। जैविक कृषि इसलिए भी जरूरी है कि भूमि एवं जलवायु प्रदूषण ने आहार-श्रृंखला को प्रदूषित कर दिया है। ऐसे में गुणवत्ता युक्त एवं प्रदूषण मुक्त भोजन की उपलब्धता के लिए जैविक कृषि अपनाना जरूरी हो गया है।

पिछले कुछ वर्षों में बिहार में कृषि विविधता एवं जैविक कृषि पर सरकार द्वारा ध्यान दिया जा रहा है। इस संबंध में बिहार सरकार ने शोध एवं अनुसंधान, अनुदानों, बुनियादी सुविधाओं की उपलब्धता पर विशेष जोर दिया है। बिहार एक कृषि

प्रधान प्रदेश है। ऐसे में यहां के लिए खाद्य सुरक्षा के लिए उपर्युक्त विकल्प और भी आवश्यक हो जाते हैं।

कृषि विविधीकरण एवं जैविक कृषि की सीमाएं

- मूल्यों में उतार-चढ़ाव एवं मौसम की प्रतिकूलता किसानों को बुरी तरह प्रभावित कर सकता है।
- निर्यात मांग एवं घरेलू मांग में कमी या परिवर्तन किसानों के लिए कष्टकारी हो सकता है।
- बिजली, सड़क एवं सिंचाई जैसे बुनियादी सुविधाओं का अभाव एवं आवश्यक पूंजी की कमी बहुत बड़ी बाधा है।
- बिहार जैसे बाढ़ एवं सूखा प्रभावित राज्य में इसकी सफलता संदिग्ध है।
- लोगों में इस प्रकार की कृषि के लिए जागरूकता का अभाव है।
- इसमें खाद्यान्न उत्पादन में कमी होने की आशंका है।
- इस क्षेत्र में पर्याप्त शोध एवं अनुसंधान का अभाव है।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि कृषि विविधता एवं जैविक कृषि भारत के खाद्य सुरक्षा का एक बेहतर विकल्प है। लेकिन इसकी कुछ अपनी सीमाएं हैं जिन्हें दूर कर खाद्य-सुरक्षा को सुरक्षित एवं सुनिश्चित बनाया जा सकता है।

प्र. "हरित क्रांति ने भारत में अनाज उत्पादन को बढ़ाया है परंतु इसने अनेक पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं।" इसकी व्याख्या उदाहरण सहित कीजिए।

उत्तर- भारत में छठे दशक के मध्य में HYV बीजों एवं रासायनिक खादों व नई तकनीकों के प्रयोग से कृषि उत्पादन में तीव्रता से वृद्धि हुई जिसे 'हरित क्रांति' नाम दिया गया है। हरित क्रांति के पहले चरण का लाभ पंजाब, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडु जैसे समृद्ध राज्यों एवं गेहूं पैदा करने वाले क्षेत्रों को ही मिला। लेकिन इसके दूसरे चरण के फैलाव से देश के कई राज्यों एवं गेहूं के अलावा अन्य खाद्यान्न फसलों को भी लाभ मिला। भारत खाद्यान्न की दृष्टि से न सिर्फ आत्मनिर्भर हुआ, बल्कि हम कृषि उत्पादों के निर्यात में भी सक्षम हुए। लेकिन, हरित क्रांति ने अनेक पर्यावरणीय समस्याओं को भी जन्म दिया है जिसे विभिन्न बिंदुओं से स्पष्ट किया जा सकता है-

1. कृषियोग्य भूमि के अत्यधिक दोहन से भूमि की उत्पादन क्षमता का ह्रास हुआ है। एक ही भूमि पर वर्ष में दो फसल प्राप्त करने से भूमि अपनी उर्वरता धीरे-धीरे खोती जा रही है।
2. HYV बीजों एवं रासायनिक उर्वरक के प्रयोग में अत्यधिक जल की आवश्यकता होती है। फलतः हरित क्रांति वाले क्षेत्रों में भू-जल स्तर तेजी से नीचे जा रहा है।
3. रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, खरपतवारनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से पर्यावरण तेजी से प्रदूषित होता जा रहा है।
4. पर्यावरण प्रदूषण के कारण खाद्य पदार्थों एवं भू-जल में विप का स्तर (Toxic level) बढ़ता जा रहा है।

पर्यावरण में होने वाले ये परिवर्तन चिंताजनक हैं। आज स्थिति ये है कि हम हरित क्रांति के दौर में शुरू किए गए उर्वरकों, कीटनाशकों आदि के प्रयोग के बिना कृषिकार्य नहीं सकते, जबकि हम इसके दुष्परिणामों से अवगत हो चुके हैं। यह हरित क्रांति का ही परिणाम है कि अत्यधिक मशीनीकरण हुआ है एवं इसका पर्यावरण पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

Key to Remember

हरित क्रांति की पर्यावरणीय समस्याएं -

- अत्यधिक दोहन से भूमि की उर्वरता में कमी।
- अधिक जल की आवश्यकता के फलस्वरूप भूमिगत जल-स्तर का नीचे आ जाना।

- उर्वरकों, कीटनाशकों आदि के प्रयोग से पर्यावरण प्रदूषण।
- खाद्य पदार्थों में विष-स्तर (Toxic level) का बढ़ना।

प्र.. उदारीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय कृषि में कौन-कौन सी महत्वपूर्ण प्रवृत्तियां उभर कर आयी हैं?

उत्तर- भारत में उदारीकरण का प्रारंभ 1991 में भारत सरकार द्वारा अपनाई गई नई आर्थिक नीति के साथ ही माना जाता है। उदारीकरण के कारण देश की आर्थिक स्थिति अच्छी हो गई एवं सभी क्षेत्रों में विकास हुआ। कृषि में भी कुछ सुधार हुए हैं, जैसे कृषि के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की उपलब्धता, कृषि उत्पाद बढ़ाने के लिए नए कृषि उपकरणों का उपयोग, उन्नत बीजों की उपलब्धता आदि। लेकिन कृषि की ये उपलब्धियां हरित क्रांति के दौर में हुए सुधार की तुलना में नहीं के बराबर हैं। ये सब अधिकतर बहुराष्ट्रीय कंपनियों के फायदे से ज्यादा कुछ नहीं हैं। इन सुधार कार्यों से वास्तव में कृषि को कोई लाभ नहीं मिल पाया है और कृषि की संवृद्धि दर कम होती जा रही है।

सुधार अवधि में कृषि-क्षेत्र में सार्वजनिक व्यय विशेषकर आधारिक संरचना अर्थात सिंचाई, बिजली, सड़क निर्माण, बाजार संपर्कों और शोध-प्रसार आदि में काफी कमी आई है। साथ ही उर्वरक सब्सिडी में कमी ने भी उत्पादन लागतों को बढ़ा दिया है। इसका छोटे एवं सीमांत किसानों पर बहुत ही गंभीर प्रभाव पड़ा है। शुल्क में कटौती, न्यूनतम समर्थन मूल्यों पर परिमाणात्मक प्रतिबंध हटाए जाने के कारण इस क्षेत्रक की नीतियों में कई परिवर्तन हुए। इसके कारण भारत के किसानों को विदेशी स्पर्धा का भी सामना करना पड़ा है, जिसका उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

दूसरी तरफ उत्पादन व्यवस्था निर्यातोन्मुखी हो रही है। आंतरिक उपयोग की खाद्यान्न फसलों के स्थान पर निर्यात के लिए नकदी फसलों पर बल दिया जा रहा है। इससे देश में खाद्यान्नों की कीमतों पर दबाव बढ़ रहा है।

प्र. स्वतंत्रता के बाद भारतीय कृषि की मुख्य प्रवृत्तियों (Trends) की विवेचना करें।

Key to Answer

'भारतीय कृषि की मुख्य प्रवृत्तियों की विवेचना, 'यहां प्रवृत्तियों (Trends) का अर्थ भारतीय कृषि की 'दिशा' से है।

उत्तर - प्रारंभ से ही कृषि हमारी अर्थव्यवस्था का मूल आधार एवं अधिकांश भारतीयों की जीविका का प्रमुख स्रोत रहा है। आज भी हमारे देश के GDP में कृषि एवं सहायक क्षेत्र का योगदान लगभग 15% है, जबकि लगभग 58% आबादी अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। आज भारतीय कृषि अनेक कमियों के बावजूद स्वतंत्रता प्राप्ति के समय की तुलना में विकसित अवस्था में है। लेकिन इस अवस्था को प्राप्त करने में भारतीय कृषि अनेक सुधारों की प्रक्रिया से गुजरी है। यदि स्वतंत्रता पूर्व की बात करें तो अंग्रेजों की औपनिवेशिक नीतियों के कारण देश में औद्योगिक विकास की गति एकदम धीमी रही जिससे कृषि पर जनसंख्या का भार अत्यधिक था। जमींदारी प्रथा एवं इसी प्रकार की अन्य व्यवस्थाओं के कारण कृषि की हालत बुरी थी। अतः जब स्वतंत्रता प्राप्ति हुई तो सर्वप्रथम कृषि-सुधार संबंधी नीति पर विचार किया गया। इस उद्देश्य से प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-1956) में कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गई।

कृषि सुधार के लिए कृषि के ढांचागत सुधार की सर्वप्रथम आवश्यकता थी। भू-धारण पद्धति में जमींदार - जागीरदार वर्ग आदि का वर्चस्व था। ये खेतों में कोई सुधार किए बिना मात्र लगान की वसूली किया करते थे। इसी प्रकार के अन्य सुधारों हेतु सरकार द्वारा मुख्यतः तीन कार्य किए गए-

1. **जोतों के स्वामित्व में परिवर्तन-** स्वतंत्रता के एक वर्ष बाद ही देश में बिचौलियों के उन्मूलन तथा वास्तविक कृषकों को ही भूमि का स्वामी

बनाने जैसे कदम उठाये गए। इसी दिशा में भूमि की अधिकतम स्वामित्व सीमा का निर्धारण एक दूसरी नीति थी। इस सुधार से जहां वास्तविक किसानों के अधिकारों की रक्षा हुई, वहीं कृषि उत्पादकता में भी वृद्धि हुई।

2. **काश्तकारी सुधार-** अनेक राज्यों में काश्तकारों के स्वामित्व अधिकार को प्रदान करने या काश्तकारों द्वारा मुआवजा भरने पर स्वामित्व अधिकार को प्राप्त करने संबंधी वैधानिक प्रावधान किए गए। इसके तहत भू-स्वामी को मिलने वाली लगान का नियमन भी किया गया।
3. **कृषि का पुनर्गठन-** इसके अंतर्गत भूमि का पुनर्वितरण, चकबंदी तथा सहकारी कृषि पर बल दिया गया है।

इन ढांचागत सुधारों के बाद भी भारतीय कृषि में अपेक्षानुरूप विकास नहीं हुआ। छठे दशक के मध्य में अमेरिकी वैज्ञानिक डॉ. नोरमान ई. बोरलॉग एवं भारतीय वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथ के योगदान के फलस्वरूप भारत में हरित क्रांति हुईं। हरित क्रांति का तात्पर्य ऊंची उपज वाले बीजों (High Yielding Varieties Seeds - HYVs) एवं रासायनिक खादों व नई तकनीक के प्रयोग के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में तीव्र वृद्धि से है। यद्यपि हरित क्रांति के इस पहले चरण में HYV बीजों का प्रयोग पंजाब, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु जैसे समृद्ध राज्यों तक ही सीमित रहा, इसके अतिरिक्त HYV बीजों का लाभ केवल गेहूं पैदा करने वाले क्षेत्रों को ही मिल पाया। हरित क्रांति के द्वितीय चरण (1970 के दशक के मध्य से 1980 के दशक के मध्य तक) में HYV बीजों की प्रौद्योगिकी का विस्तार कई राज्यों तक पहुंचा जिससे कई फसलों को लाभ हुआ। अतः हरित क्रांति प्रौद्योगिकी के प्रसार से भारत को खाद्यान उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त हुई।

कृषि की वर्तमान अवस्था पहले की अपेक्षा बेहतर हुई है परंतु अभी भी भारतीय कृषि एवं भारतीय किसान समस्याओं में उलझे हुए हैं। इस कारण सरकार कृषि विकास के लिए अनेक योजनाएं चला रही है। जैसे- किसानों को उचित दरों पर ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए सहकारी ऋण व्यवस्था, नाबार्ड व क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना आदि। राष्ट्रीय बीज मिशन, किसान कॉल सेंटर, कृषि व्यावसाय केन्द्रों की स्थापना, राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना, राष्ट्रीय जैविक कृषि परियोजना आदि भारतीय कृषि के विकास के लिए महत्वपूर्ण योजनाएं एवं कदम हैं। इससे भारतीय कृषि आधुनिक एवं नवीन प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख होगी|

Key to Remember

- वर्तमान में GDP में कृषि एवं सहायक क्षेत्र का योगदान - 15% (लगभग)
- 58% आबादी रोजगार के लिए कृषि पर आश्रित है। (लगभग)
- प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि को उच्च प्राथमिकता

स्वतंत्रता के बाद कृषि में किए गए कुछ सुधार-

- जोतों के स्वामित्व में परिवर्तन
- कृषि का पुनर्गठन
- काश्तकारी सुधार

डॉ. बोरलॉग + डॉ. स्वामीनाथन के योगदान से 'हरित क्रांति' का प्रारंभ

- **प्रथम चरण (1960-70) -** केवल गेहूं एवं कुछ राज्यों को फायदा मिला।
- **द्वितीय चरण (1970-80) -** ज्यादा फसलों एवं राज्यों को फायदा

वर्तमान में कृषि एवं कृषकों के लिए योजनाएं

- राष्ट्रीय बीज मिशन
- किसान कॉल सेंटर
- कृषि व्यावसाय केन्द्रों की स्थापना
- राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना
- राष्ट्रीय जैविक कृषि परियोजना

प्र. भारत में वन देश के आर्थिक विकास में किस प्रकार योगदान करते हैं?

उत्तर - वन संपदा की दृष्टि से भारत काफी संपन्न है। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार भारत का विश्व में दसवां और एशिया में चौथा स्थान है। अब तक भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण संस्थान ने पेड़-पौधों की 46 हजार से अधिक प्रजातियों का पता लगाया है।

वन हमारे देश के आर्थिक विकास में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं। वनों का अप्रत्यक्ष योगदान उन पर अनेक उद्योगों का निर्भर होना है, जैसे- देश का प्लाईवुड उद्योग, काष्ठ कोयला उद्योग, इमारती लकड़ी उद्योग आदि भारतीय वनों के विभिन्न प्रजातियों पर निर्भर है। सखुआ, सागवान, शीशम, देवदार आदि इमारती लकड़ियां औद्योगिक दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार कागज, दियासलाई, कत्था, रेशम, लाह, बीड़ी, पत्तल, खिलौना, औषधि उद्योगों के लिए कच्चा माल वनों से ही प्राप्त होता रहा है। आज भारत की अनेक आयुर्वेद कंपनियां विदेशों में भी अपनी दवाईयां निर्यात कर रही है, जैसे- डॉबर, झंडू, वैद्यनाथ आदि। ये दवाईयां विदेशी मुद्रा प्राप्त करने के बड़े स्रोत हैं। पलास व कुसुम पौधों पर लाह कीटों एवं शहतूत पौधों पर रेशम कीटों का पालन किया जाता है। इसी प्रकार वन पशुओं के लिए चारा भी उपलब्ध कराते हैं। भारत में पशुपालन के विकास में वनों का महत्वपूर्ण योगदान है। ग्रामीण क्षेत्रों में ईंधन के लिए अभी भी वनों पर सर्वाधिक निर्भरता है। लकड़ियों से निर्मित काष्ठ कोयले को ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। वनों से संबद्ध उद्योगों में लाखों लोगों को रोजगार मिला हुआ है जो अर्थव्यवस्था के विकास में सहायक है एवं राजस्व का एक बड़ा स्त्रोत है। वर्तमान में GDP का लगभग 2% वनों से ही प्राप्त हो रहा है।

वनों का आर्थिक विकास में अप्रत्यक्ष योगदान भी है। वन पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वन वायुमंडल में ऑक्सीजन की उपलब्धता बनाए रखने के साथ ही साथ विषैली गैसों के स्तर को कम करने में सहायक हैं। यह मृदा अपरदन को रोकने में सहायक हैं। भूमिगत जल-स्तर तथा मृदा की उर्वरता को बनाए रखने में भी वन काफी सहायक हैं। ये सभी चीजें आर्थिक क्रियाकलाप से सीधे-सीधे जुड़े हुए हैं। अतः वन देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्र. भारत को भौतिक प्रदेशों में विभक्त कर मानचित्र सहित उनका वर्णन कीजिए।

उत्तर- भारत के भौतिक प्रदेश- (i) हिमालय पर्वत श्रृंखला, (ii) उत्तरी मैदान, (iii) प्रायद्वीपीय पठार, (iv) भारतीय मरुस्थल, (v) तटीय मैदान, (vi) द्वीप

1. **हिमालय पर्वत श्रृंखला-** भारत की उत्तरी सीमा पर विस्तृत विश्व की सबसे ऊंची पर्वत श्रेणी हिमालय भूगर्भीय रूप से युवा एवं बनावट के दृष्टिकोण से वलित है। ये पर्वत श्रृंखला पश्चिम-पूर्व दिशा में सिंधु से लेकर ब्रह्मपुत्र तक फैली है। हिमालय को मुख्यतः तीन भागों में बांटा जा सकता है-

    (a) **महान या आंतरिक हिमालय या हिमाद्रि-** यह सबसे अधिक सत्त श्रृंखला है जिसमें 6000 मीटर की औसत ऊंचाई वाले सर्वाधिक शिखर हैं। हिमालय का यह भाग क्रोड ग्रेनाइट का बना है। यह शृंखला हमेशा बर्फ से ढंकी रहती है तथा इसमें बहुत सी हिमानियों का प्रवाह होता है।

    (b) **लघु या मध्य हिमालय-**लघु हिमालय का विस्तार महान हिमालय के दक्षिण में है। इसे हिमालय श्रेणी भी कहते हैं। इनकी ऊंचाई 3,700 मीटर से 4,500 मीटर के बीच तथा औसत चौड़ाई 50 किमी. है। पीरपंजाल श्रृंखला इसकी सबसे लंबी तथा सबसे महत्वपूर्ण श्रृंखला है। इस क्षेत्र को पहाड़ी नगरों के लिए जाना जाता है।

    (c) **शिवालिक श्रेणी -** हिमालय की सबसे बाहरी श्रृंखला को शिवालिक कहा जाता है। इनकी चौड़ाई 10 से 50 किमी. तथा ऊंचाई

900 से 1000 मीटर के बीच है। ये श्रृंखलाएं उत्तर में स्थित मुख्य हिमालय की श्रृंखलाओं से नदियों द्वारा लायी गयी असंपीड़ित असवादों से बनी हैं।

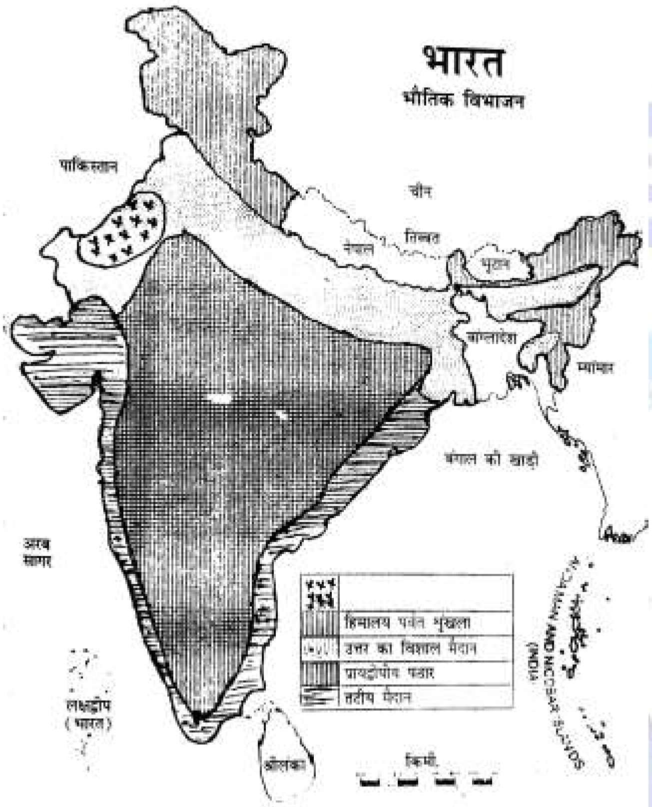

2. **उत्तरी मैदान-** उत्तरी मैदान तीन प्रमुख नदी प्रणालियों-सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र तथा इनकी सहायक नदियों के जलोढ़ मृदा से बना है। लाखों वर्षों में हिमालय के गिरिपाद में स्थित बहुत बड़े बेसिन (द्रोणी) में जलोढ़ों का निक्षेप हुआ, जिससे इस उपजाऊ मैदान का निर्माण हुआ। इसका विस्तार 7 लाख वर्ग किमी. क्षेत्र में है। यह सघन जनसंख्या वाला भौगोलिक क्षेत्र है। मृदा आवरण, पर्याप्त पानी की उपलब्धता एवं अनुकूल जलवायु के कारण कृषि की दृष्टि से यह भारत का अत्यधिक उत्पादक क्षेत्र है।
3. **प्रायद्वीपीय पठार-** प्रायद्वीपीय पठार पुराने क्रिस्टलीय, आग्नेय तथा रूपांतरित शैलों से बना है। यह गोंडवाना भूमि के टूटने एवं अपवाह के कारण बना था तथा यही कारण है कि यह प्राचीनतम भू-भाग का एक हिस्सा है। इस पठाती भाग में चौड़ी तथा छिछली घाटियां एवं गोलाकार पहाड़ियां हैं। इस पठार के दो मुख्य भाग हैं- मध्य उच्चभूमि तथा दक्कन का पठार। प्रायद्वीपीय पठार की एक विशेषता यहां पायी जाने वाली काली मृदा है, जिसे 'दक्कन ट्रैप' के नाम से भी जाना जाता है। अरावली की पहाड़ियां प्रायद्वीपीय पठार के पश्चिमी एवं उत्तर-पश्चिमी किनारे पर स्थित है।
4. **भारतीय मरुस्थल-** अरावली पहाड़ी के पश्चिमी किनारे पर थार का मरुस्थल स्थित है। यह बालू के टिब्बों से ढका एक तरंगित मैदान है। इस क्षेत्र में प्रति वर्ष 150 मिमी. से भी कम वर्षा होती है, अतः यहां वनस्पति बहुत कम है। वर्षा ऋतु में ही कुछ नदियां दिखती हैं और उसके बाद वे बालू में ही विलीन हो जाती हैं। लूनी इस क्षेत्र की सबसे बड़ी नदी है।
5. **तटीय मैदान-** प्रायद्वीपीय पठार के किनारों पर संकीर्ण तटीय पट्टियों का विस्तार है। यह पश्चिम में अरब सागर से लेकर पूर्व में बंगाल की खाड़ी तक विस्तृत है। पश्चिमी तट, पश्चिमी घाट तथा अरब सागर के बीच स्थित एक संकीर्ण मैदान है। यह मैदान तीन भाग में बंटा है- कोंकण का मैदान (मुंबई तथा गोवा), कन्नड़ का मैदान एवं मालाबार तट। बंगाल की खाड़ी के साथ विस्तृत मैदान चौड़ा एवं समतल है। उत्तरी भाग में इसे उत्तरी सरकार तथा दक्षिणी भाग में कोरोमंडल तट कहा जाता है।
6. **द्वीप समूह-** भारत में दो द्वीपों का समूह-लक्षद्वीप और अंडमान एवं निकोबार द्वीप स्थित है। केरल के मालाबार तट के पास लक्षद्वीप स्थित है। द्वीपों का यह समूह छोटे प्रवाल द्वीपों से बना है जिसका कुल क्षेत्रफल 32 वर्ग किमी. है। बंगाल की खाड़ी में उत्तर से दक्षिण के तरफ फैले द्वीपों की श्रृंखला को अंडमान एवं निकोबार द्वीप कहते हैं। ये द्वीप विषुवत वृत्त के समीप स्थित हैं एवं यहां की जलवायु विषुवतीय है तथा यह घने जंगलों से आच्छादित है। भारत का एकमात्र सक्रिय ज्वालामुखी इसी समूह के बैरन द्वीप पर स्थित है।

Key to Remember

भारत के भौतिक प्रदेश (6)-

1. **हिमालय पर्वत श्रृंखला**

   भूगर्भीय रूप से युवा एवं बनावट से वलित पर्वत हिमालय को तीन भागों में बांटा जा सकता है-

   (क) महान या आंतरिक हिमालय या हिमाद्रि-

   (ख) लघु या मध्य हिमालय

   (ग) शिवालिक श्रेणी

2. **उत्तरी मैदान**
   - 7 लाख वर्ग किमी. में फैले तथा जलोढ़ मृदा से बने इस मैदान का निर्माण सिंधु, गंगा, ब्रह्मपुत्र एवं सहायक नदियों से हुआ है।

3. **प्रायद्वीपीय पठार**
   - यह पुराने क्रिस्टलीय, आग्नेय तथा रूपांतरित शैलों से बना है
   - दो भाग हैं- मध्य उच्चभूमि एवं दक्कन का पठार

4. **भारतीय मरुस्थल**
   - अरावली की पश्चिमी किनारे पर थार मरुस्थल
   - वार्षिक वर्षा 150 मिमी. से भी कम
   - लूनी सबसे बड़ी नदी

5. **तटीय मैदान**
   - पूर्वी घाट- उत्तरी सरकार, कोरोमंडल तट
   - पश्चिमी घाट- कोंकण का मैदान, कन्नड़ का मैदान, मालाबार तट

6. **द्वीप समूह**
   - लक्षद्वीप
   - अंडमान एवं निकोबार द्वीप

प्र. भारत में नदी-जल के बंटवारे को लेकर अन्तर्राज्यीय विवादों के कारणों एवं परिणामों की विवेचना सोदाहरण करें। क्या इस समस्या का समाधान हो सकता है?

उत्तर- भारत में नदियों की बहुलता तथा जल संसाधन की पर्याप्तता है, परन्तु इसके साथ ही जल संसाधन की उपलब्धता में काफी विषमता भी है। जल का उपयोग पहले की अपेक्षा बढ़ा है। सामान्य कार्यों के अतिरिक्त आज हरित क्रांति के बाद कृषि में पानी की आवश्यकता पहले से बढ़ी है। विभिन्न राज्य नहरों का निर्माण कर कृषि को जल उपलब्ध करवाना चाह रहे हैं, साथ ही नदियों के जल का प्रयोग जल-विद्युत उत्पादन के लिए भी किया जा रहा है। भारत में जल संसाधन राज्य-सूची का विषय है। भारत की अधिकतर नदियां एकाधिक राज्यों से होकर गुजरती हैं। ऐसे राज्यों को त्पचंतपद जंजमे कहा जाता है। इन सभी राज्यों को नदी मार्ग के अनुपात में जल उपयोग करने का अधिकार होता है। परन्तु कई बार किसी जल-विद्युत परियोजना, नहरों के निर्माण आदि के कारण राज्यों में विवाद पैदा हो जाता है, क्योंकि ऐसी स्थिति में दूसरे राज्यों को संबद्ध नदी का कम जल प्राप्त होता है। भारत में इन्हीं परिस्थितियों के कारण नदी जल विवाद पैदा होता है। कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल राज्यों के मध्य कावेरी नदी के जल को लेकर विवाद है। उसी प्रकार महाराष्ट्र, कर्नाटक, तथा आन्ध्र प्रदेश राज्यों के मध्य कृष्णा नदी के जल को लेकर विवाद की स्थिति है।

भारत में नदी-जल के अंतर्राज्यीय विवादों के परिणामस्वरूप विकास कार्य प्रभावित हो रहे हैं एवं इनके जल के समुचित उपयोग से अनेक जल विद्युत परियोजनाएं एवं कृषि के लिए नहरों का जितना निर्माण हो सकता था, नहीं हो पाया है।

समाधान

1. नदी-जल के बंटवारे की समस्या समाधान के लिए सर्वप्रथम इन विवादों को राजनीति से दूर करना होगा।
2. राजनीतिक पार्टियां अपने लाभ के लिए इन विवादों को जिंदा रखना चाहती हैं। इसके लिए विभिन्न नदियों के लिए आयोग बने जिसके सदस्य गैर-राजनीतिक संबद्ध राज्यों के बुद्धिजीवी एवं इसी प्रकार के केन्द्रीय प्रतिनिधि हों।
3. आयोग के निष्पक्ष निर्णय को सभी राज्यों की सरकारें मान्यता दें।

4. इसके साथ ही इस समस्या के समाधान के लिए एक दूसरा प्रभावकारी तरीका हिमालय की नदियों एवं प्रायद्वीपीय नदियों के आपस में जोड़ना हो सकता है। इससे जल की कमी कुछ हद तक दूर हो जाएगी।

प्र. भारत के प्रमुख मृदा प्रदेशों की विशेषताओं तथा महत्वपूर्ण फसलों के लिए उनकी 'उपयुक्तता की विवेचना कीजिए।

उत्तर- भारत को मुख्यतः छह मृदा प्रदेशों में बांटा गया है- (1) जलोढ़ मृदा-प्रदेश, (2) काली मृदा-प्रदेश, (3) लाल और पीली मृदा-प्रदेश, (4) लैटेराइट मृदा-प्रदेश, (5) शुष्क मृदा- प्रदेश, (6) वन मृदा-प्रदेश।

1. **जलोढ़ मृदा-प्रदेश-** जलोढ़ मृदाएं भारत के उत्तरी मैदान और नदी घाटियों के विस्तृत भागों में पाई जाती हैं। ये मृदाएं देश के कुल क्षेत्रफल के लगभग 40% भाग को ढंके हुए हैं। ये निक्षेपण मृदाएं हैं जिन्हें नदियों ने वाहित तथा निक्षेपित किया है। जलोढ़ मृदाएं गठन में बलुई दोमट से चिकनी मिट्टी की प्रकृति वाली पाई जाती हैं। सामान्यः इनमें पोटाश की मात्रा अधिक और फॉस्फोरस की मात्रा कम पाई जाती है। निम्न तथा मध्य गंगा के मैदान और ब्रह्मपुत्र घाटी में ये मृदाएं अधिक दोमटी और मृण्मय हैं। पश्चिम से पूर्व की ओर इनमें बालू की मात्रा घटती जाती है। इस मिट्टी में उत्तरी भारत में सिंचाई के माध्यम से गन्ना, गेहूं, चावल, जूट, तम्बाकू, तिलहनी फसलों तथा सब्जियों का उत्पादन किया जाता है।
2. **काली मृदा- प्रदेश-** काली मृदाएं दक्कन के पठार के अधिकतर भाग में पाई जाती है। इसमें महाराष्ट्र के कुछ भाग, गुजरात, आंध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु के कुछ भाग शामिल हैं। इन मृदाओं को रैगर तथा कपास वाली काली मिट्टी भी कहा जाता है। नमी की धीमे अवशोषण की प्रवृत्ति जैसी विशेषता के कारण काली मृदा में एक लंबी अवधि तक नमी बनी रहती है। रासायनिक दृष्टि से काली मृदाओं में चूना, लौह, मैग्नीशिया, ऐलुमिना के तत्व काफी मात्रा में पाए जाते हैं। इनमें फॉस्फोरस, नाइट्रोजन और जैव पदार्थों की कमी होती है। काली मिट्टी वाले प्रदेश कपास की खेती के लिए सबसे उपयुक्त हैं।
3. **लाल और पीली मृदा- प्रदेश -** लाल-पीली मृदा का विस्तार छोटानागपुर पठार, उड़ीसा, पूर्वी मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश व तमिलनाडु में हैं। इस मृदा का लाल रंग रवेदार तथा कायांतरित चट्टानों में लोहे के व्यापक विसरण के कारण होता है। जलयोजित होने के कारण यह पीली दिखाई देती है। महीन कणों वाली लाल-पीली मृदाएं सामान्यतः उर्वर होती हैं। इसके विपरीत मोटे कणों वाली उच्च भूमियों की मृदाएं अनुर्वर होती हैं। इनमें सामान्यतः नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और ह्यूमस की कमी होती है। यह प्रदेश रागी, तम्बाकू, सब्जियों व चावल की खेती के लिए उपयुक्त है।
4. **लैटेराइट मृदा- प्रदेश -** लैटेराइट एक लैटिन शब्द 'लेटर' से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ ईट होता है। लैटेराइट मृदाएं उच्च तापमान और भारी वर्षा के क्षेत्रों में विकसित होती हैं। उच्च तापमानों में आसानी से पनपने वाले जीवाणु ह्यूमस की मात्रा को तेजी से नष्ट कर देते हैं। इन मृदाओं में जैव पदार्थ नाइट्रोजन, फॉस्फेट और कैल्शियम की कमी होती है तथा लौह ऑक्साइड और पोटाश की अधिकता होती है। परिणमस्वरूप लैटेराइट मृदाएं कृषि के लिए पर्याप्त उपजाऊ नहीं हैं। फसलों को उपजाऊ बनाने के लिए इन मृदाओं में खाद और उर्वरकों की भारी मात्रा डालनी पड़ती है। तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश और केरल में काजू जैसे वृक्षों वाली फसलों की खेती के लिए लाल लैटेराइट मृदाएं अधिक उपयुक्त हैं। ये कर्नाटक, केरल,

तमिलनाडु, मध्य प्रदेश तथा उड़ीसा और असम के पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाती हैं।

5. **शुष्क मृदा- प्रदेश** - शुष्क मृदाएं विशिष्ट शुष्क स्थलाकृति वाले पश्चिमी राजस्थान में अभिलाक्षणिक रूप से विकसित हुई हैं। इसकी संरचना बलुई और प्रकृति लवणीय होती है। शुष्क जलवायु, उच्च तापमान और तीव्र गति से वाष्पीकरण के कारण इन मृदाओं में नमी और ह्यूमस कम होते हैं। इनमें नाइट्रोजन अपर्याप्त और फॉस्फेट सामान्य मात्रा में होती है। ये अनुर्वर हैं, क्योंकि इनमें ह्यूमस और जैव पदार्थ कम मात्रा में पाए जाते हैं।

6. **वन मृदा- प्रदेश-** वन मृदा पर्याप्त वर्षा वाले वन क्षेत्रों में बनती है। पर्यावरण में परिवर्तन के अनुसार इन मृदाओं का गठन और संरचना बदलती रहती है। घाटियों में ये दोमट प्रकृति वाली होती हैं। वन मृदा हिमालय क्षेत्र में पाई जाती है। यह मृदा फल, मसाले, कॉफी, चाय की खेती के लिए उपयुक्त है।

Key to Remember

भारत के मृदा- प्रदेश (6)-

(i) जलोढ़ मृदा-प्रदेश-
- क्षेत्र- उत्तरी मैदान, नदी घाटियों के विस्तृत भाग में (40%)
- रासायनिक संगठन- पोटाश की मात्रा अधिक एवं फास्फोरस की मात्रा कम
- फसल- गन्ना, गेहूं, चावल, जूट, तम्बाकू, तिलहन

(ii) काली मृदा-प्रदेश-
- क्षेत्र- दक्कन का पठार (महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु के कुछ प्रदेश)
- रासायनिक संगठन- चूना, लौह, मैग्नीशिया, ऐलुमिना की उच्च मात्रा, फॉस्फोरस, नाइट्रोजन, जैव पदार्थों की कमी
- फसल- कपास

(iii) लाल और पीली मृदा- प्रदेश-
- क्षेत्र- छोटानागपुर पठार, उड़ीसा, पूर्वी मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु
- रासायनिक संगठन- लोहे की उच्च मात्रा, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, एवं ह्यूमस की कमी
- फसल- रागी, तंबाकू, सब्जियां, चावल

(iv) लैटेराइट मृदा-प्रदेश-
- क्षेत्र-कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, असम के पहाड़ी क्षेत्र
- रासायनिक संगठन- लौह-ऑक्साइड एवं पोटाश की अधिकता, जैव पदार्थ, नाइट्रोजन, फॉस्फेट, कैल्शियम की कमी
- फसल- काजू

(v) शुष्क मृदा-प्रदेश-
- क्षेत्र पश्चिमी राजस्थान
- रासायनिक संगठन- संरचना बलुई, प्रकृति लवणीय, नाइट्रोजन की कमी, फॉस्फेट सामान्य
- फसल अनुर्वर

(vi) वन मृदा-प्रदेश-
- क्षेत्र- हिमालयी क्षेत्र
- रासायनिक संगठन - पर्यावरण परिवर्तन के कारण मृदा संगठन में भिन्नता।
- फसल-फल, मसाले, कॉफी, चाय

प्र. प्रायद्वीपीय भारत की संरचना तथा विकास (Evolution) की विवेचना कीजिए।

उत्तर- गंगा के विशाल मैदान के दक्षिण से ले कर कन्याकुमारी तक त्रिभुजाकार आकृति में लगभग 16 लाख वर्ग किमी. क्षेत्र पर प्रायद्वीपीय पठारी भाग फैला है। यह देश का सर्वाधिक क्षेत्रफल वाला तथा प्राचीन भौतिक प्रदेश है। इस पर प्रवाहित होने वाली नदियों ने इसको कई छोटे-छोटे पठारों में विभक्त कर दिया है। उत्तर-पश्चिम में दिल्ली कटक (अरावली का विस्तार), पूर्व में राजमहल की पहाड़ियां, पश्चिम में गिर की पहाड़ियां और दक्षिण में इलायची (कर्डेमम) की पहाड़ियां प्रायद्वीपीय पठार की सीमाएं निर्धारित करती हैं। उत्तर-पूर्व में शिलांग तथा कार्बी-ऐंगलोंग पठार भी इसी भू-भाग का विस्तार हैं। प्रायद्वीपीय भारत अनेक पठारों से मिलकर बना है, जैसे- हजारीबाग का पठार, का पठार, रांची का पठार, मालवा का पठार, कोयम्बटूर का पठार और कर्नाटक का पठार। यह भारत के प्राचीनतम और स्थिर भू-भागों में से एक है। सामान्य तौर पर प्रायद्वीप की ऊंचाई पश्चिम से पूर्व की ओर कम होती चली जाती है, जिसका प्रमाण यहां की नदियों के बहाव की दिशा से भी मिलता है। इस पठार के पश्चिमी और उत्तर-पश्चिमी भाग में मुख्य रूप से काली मिट्टी पाई जाती है।

प्रायद्वीपीय पठार के अनेक हिस्से भू-उत्थान व निमज्जन, भ्रंश तथा विभंग निर्माण प्रक्रिया के अनेक पुनरावृत्ति दौर से गुजरे हैं। अपनी पुनरावृत्ति भूकंपीय क्रियाओं की क्षेत्रीय विभिन्नता के कारण ही प्रायद्वीपीय पठार पर धरातलीय विविधताएं पाई जाती हैं। इस पठार के उत्तरी-पश्चिमी भाग में नदी खड्ड और महाखड्ड इसके धरातल को जटिल बनाते हैं। चंबल, भिन्ड और मुरैना खड्ड इसके उदाहरण हैं।

मुख्य उच्चावच लक्षणों के अनुसार प्रायद्वीपीय पठार को तीन भागों में बांटा गया है- (1) दक्कन का पठार, (2) मध्य उच्च भूभाग, (3) उत्तरी-पूर्वी पठार।

प्र. प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत के आधार पर हिमालय की उत्पत्ति की व्याख्या कीजिए।

उत्तर - प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत के अनुसार पृथ्वी की ऊपरी पर्पटी सात बड़ी एवं कुछ छोटी प्लेटों से बनी है। प्लेटों की गति के कारण प्लेटों के अंदर एवं ऊपर की ओर स्थित महाद्वीपीय शैलों में दबाव उत्पन्न होता है। इसके परिणामस्वरूप वलन, भ्रंशीकरण तथा ज्वालामुखीय क्रियाएं होती हैं। सामान्य तौर पर इन प्लेटों की गतियों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है-

1. कुछ प्लेटें एक-दूसरे के करीब आती हैं और अभिसरित परिसीमा का निर्माण करती हैं।
2. कुछ प्लेट एक-दूसरे के करीब आती हैं, तब या तो वे टकराकर टूट सकती हैं या एक प्लेट फिसल कर दूसरी प्लेट के नीचे जा सकती हैं।
3. कभी-कभी वे एक-दूसरे के साथ क्षैतिज दिशा में भी गति कर सकती हैं और रूपांतर परिसीमा का निर्माण करती हैं। इन प्लेटों में लाखों वर्षों से हो रही गति के कारण महाद्वीपों की स्थिति तथा आकार में परिवर्तन आया है।

प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत के आधार पर हिमालय की उत्पत्ति- यह सबसे प्राचीन भू-भाग गोंडवाना भूमि का एक हिस्सा था। गोंडवाना भू-भाग के विशाल क्षेत्र में भारत, आस्ट्रेलिया, दक्षिण अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका के क्षेत्र शामिल थे। संवहनीय धाराओं ने भू-पर्पटी को अनेक टुकड़ों में विभाजित कर दिया और इस प्रकार भारत-आस्ट्रेलिया की प्लेट गोंडवाना भूमि से अलग होने के बाद उत्तर दिशा की ओर प्रवाहित होने लगी। उत्तर दिशा की ओर प्रवाह के फलस्वरूप ये प्लेट अपने से अधिक विशाल प्लेट यूरेशियन प्लेट से टकरायी। इस टकराव के कारण इन दोनों प्लेटों के बीच स्थित 'टेथिस' भू-अभिनति के अवसादी चट्टान, वलित होकर हिमालय तथा पश्चिम एशिया की पर्वतीय श्रृंखला के रूप में विकसित हो गये।

प्र. भारत में मृदा अपरदन के प्रमुख भौतिक एवं सांस्कृतिक कारण बताइये।

Key to Answer

मृदा-अपरदन के भौतिक कारण (प्राकृतिक कारण) एवं सांस्कृतिक कारण (मानवीय कारण) बताएं।

उत्तर- मृदा के आवरण का विनाश, मृदा अपरदन कहलाता है। बहते जल और पवनों की अपरदनात्मक प्रक्रियाएं तथा मृदा निर्माणकारी प्रक्रियाएं साथ-साथ घटित हो रही होती हैं। सामान्यतः इन दोनों प्रक्रियाओं में एक संतुलन बना रहता है लेकिन कई बार प्राकृतिक अथवा मानवीय कारकों से यह संतुलन बिगड़ जाता है जिससे मृदा के अपरदन की दर बढ़ जाती है।

मृदा-अपरदन के लिए मानवीय गतिविधियां काफी हद तक उत्तरदायी हैं। जनसंख्या बढ़ने के साथ भूमि की मांग बढ़ने लगती है। मानव द्वारा बस्तियों, कृषि, पशुचारण तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वन तथा अन्य प्राकृतिक वनस्पति साफ कर दी जाती है। इन वनविहीन भूमि पर वर्षा की बूंदें सीधे पड़ती हैं जिससे भूमि की परत का क्षय प्रारंभ हो जाता है। इसी प्रकार पशुचारण से घास एवं अन्य वनस्पति समाप्त हो जाती है और जिससे भूमि धीरे-धीरे मरुस्थल में बदलने लगता है एवं उसका पवन द्वारा अपरदन प्रारंभ हो जाता है। ऐसी भूमि पर वर्षा में भी कमी हो जाती है। कृषि के विभिन्न तरीकों के कारण भी मृदा अपरदन को बढ़ावा मिलता है। जैसे कुछ आदिवासियों द्वारा खेती की एक ऐसी विधि अपनाई जाती है जिसमें एक जगह के जंगलों को साफ कर खेती की जाती है एवं मिट्टी की उर्वरा कम हो जाने पर नए स्थान को खेती के लिए चुना जाता है। इस प्रकार निरंतर वनों के कटने से मृदा अपरदन को बढ़ावा मिलता है। इसी तरह आजकल पहाड़ों को भी साफ कर खेती की जा रही है अथवा कुछ जगहों में आवासों का निर्माण किया जा रहा है। इससे मृदा अपरदन को बढ़ावा मिलता है।

मृदा अपरदन के कुछ प्राकृतिक कारण भी हैं जो मानवीय गतिविधियों के कारण मृदा अपरदन के लिए उत्तरदायी हैं। इनमें पवन और जल मृदा अपरदन के दो शक्तिशाली कारक हैं। पवन द्वारा अपरदन शुष्क और अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में महत्वपूर्ण रूप से होता है। भारी वर्षा और खड़ी ढालों वाले प्रदेशों में बहते जल द्वारा किया गया अपरदन महत्वपूर्ण है। जल अपरदन अपेक्षाकृत अधिक गंभीर समस्या है और यह भारत के विस्तृत क्षेत्रों में हो रहा है। जल अपरदन दो रूपों में होता है- परत अपरदन और अवनालिका अपरदन। परत अपरदन समतल भूमियों पर मूसलाधार वर्षा के बाद होता है और इसमें मृदा का हटना आसानी से दिखाई भी नहीं देता, किन्तु यह अधिक हानिकारक है, क्योंकि इससे मिट्टी की सूक्ष्म और अधिक उर्वर ऊपरी परत हट जाती है। अवनालिका अपरदन सामान्यतः तीव्र ढालों पर होती है।

Key to Remember

मृदा अपरदन के कारण

- **भौतिक कारण (प्राकृतिक कारण)**
  - पवन द्वारा अपरदन
  - जल द्वारा अपरदन
- **सांस्कृतिक कारण (मानवीय कारण)**
  - जनसंख्या वृद्धि
  - जंगलों का सफाया
  - पशुचारण
  - कृषि के कुछ तरीके
  - खनन कार्य इत्यादि

प्र. भारत में 2011 की जनगणना के अस्थायी (Provisional) नतीजों ने भारत की घटती हुई जनसंख्या दर एवं लिंग अनुपात को प्रदर्शित किया है। यह किस प्रकार से भारत में प्रादेशिक नियोजन को प्रभावित करेगा?

उत्तर- नियोजन का साधन जनसंख्या होती है, क्योंकि किसी भी क्षेत्र, प्रदेश, राज्य या देश की जनसंख्या वहां का मानव संसाधन होता है। इस

जनसंख्या के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए नियोजन की प्रक्रिया अपनाई जाती है।

भारत के 2011 के जनगणना के अनंतिम आंकड़ों के अनुसार जनसंख्या वृद्धि दर में कमी दर्ज की गई है। 2001 की जनगणना में जनसंख्या की वृद्धि दर 21.54% थी जो 2011 की जनगणना के अनुसार 17.64% पर आ गई। यह स्थ बेहतर स्थिति की ओर संकेत करता है। लेकिन जनसंख्या घनत्व में वृद्धि तथा बीमारू राज्यों में जनसंख्या वृद्धि दर में कमी के बावजूद जनसंख्या की स्थिति विस्फोटक बनी हुई है।

2001 की जनगणना के अनुसार जनघनत्व 324 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. था जो 2011 में बढ़कर 382 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी हो गया है। उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में जनसंख्या की वृद्धि दर अभी भी 20% से अधिक है। भारतीय जनसंख्या में युवा एवं कार्यबल आबादी की दृष्टि से भारत जनांकिकीय लाभांश की स्थिति में है, लेकिन अगर इस आबादी का सही ढंग से नियोजन नहीं होता है तो जनांकिकीय लाभांश जनांकिकीय शाप सिद्ध हो सकता है।

जनांकिकीय लाभांश की स्थिति बनाने के लिए बीमारू राज्य एवं देश के अन्य वैसे राज्यों जहां जनसंख्या वृद्धि दर अभी भी विस्फोटक है, वहां इसे नियंत्रित करना होगा तथा कौशल विकास एवं रोजगार अवसरों के सृजन पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। जनसंख्या वृद्धि की समस्या का एकमात्र समाधान विकास है। अतः सामाजिक-आर्थिक विकास, समावेशी विकास, कृषि में सरकारी निवेश में वृद्धि, लघु एवं कुटीर उद्योग पर बल, कौशल विकास, साक्षरता व स्वास्थ्य में वृद्धि, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का सफल कार्यान्वयन, रोजगार कार्यक्रमों का प्रभावपूर्ण ढंग से कार्यान्वयन, पंचायती राज का सशक्तिकरण, माइक्रो लेवल प्लानिंग तथा भौगोलिक क्षेत्रों की समस्याओं एवं जरूरतों के अनुरूप नियोजन आदि जैसे अपेक्षित उपाय के द्वारा जनांकिकीय लक्ष्य एवं जनांकिकीय लाभांश को प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही इससे ग्रामीण जनसंख्या का शहर की ओर पलायन भी रूकेगा। अभी भी ग्रामीण आबादी का शहरों की ओर पलायन काफी तीव्र गति से हो रहा है, जिससे शहरों में स्लम बस्तियों में वृद्धि हो रही है तथा बुनियादी सुविधा चरमरा रही है।

2011 की जनगणना में लिंगानुपात में वृद्धि दर्ज की गई है। 2001 में जहां यह 933 थी, अब 940 हो गई है। लेकिन बाल लिंगानुपात 927 से घटकर 914 हो गई है, जो चिंतनीय है। लिंगानुपात कम-से-कम 950 होनी चाहिए। अधिकांश उत्तरी राज्यों में लिंगानुपात की स्थिति चिंताजनक है। पंजाब, हरियाणा, चंडीगढ़ तथा दिल्ली आदि में लिंगानुपात 900 से भी कम है। दक्षिण के राज्यों एवं जनजातीय क्षेत्रों में लिंगानुपात की स्थिति संतोषजनक है।

बाल लिंगानुपात में कमी मादा भ्रूण हत्या की ओर बढ़ती प्रवृत्ति तथा व्यापक लैंगिक असमानता का परिचायक है। कम लिंगानुपात वाले राज्यों पर विशेष जोर देते हुए नियोजन को लिंग सचेतन (Gender Sensitive) बनाना होगा। पीसीपीएनडीटी (PCPNDT-प्री कंसेप्शन एण्ड प्री नेटल डाइग्नॉस्टिक टेक्नीक्स) बोर्ड की समय-समय पर बैठकों का आयोजन और पीएनडीटी अधिनियम (PNDT Act) को कड़ाई से लागू करना होगा। प्रशासन एवं पुलिस व्यवस्था Gender Sensitive बनाना होगा। बालिकाओं के मामले में यौन हिंसा, देह-व्यापार, बालश्रम के चलन को रोकना होगा। मातृत्व-शिशु मृत्यु दर को कम करने के लिए संबद्ध क्षेत्र की आधारिक संरचना को सुदृढ़ करना होगा। स्त्री-शिक्षा, वैज्ञानिक शिक्षा, पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की प्रभावी भागीदारी, नगर नियोजन में उनकी सशक्त भूमिका, लैंगिक समानता के प्रति जागरूकता, प्रशासन, रोजगार के अवसरों, राजनीति में महिलाओं की भूमिका में वृद्धि तथा महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने वाले कार्यक्रमों पर जोर देकर लिंगानुपात की स्थिति में सुधार किया जा सकता है तथा बाल लिंगानुपात को बढ़ाया जा सकता है।

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में प्रादेशिक नियोजन में आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक विकास के पहलुओं पर ध्यान देकर जनसंख्या की वृद्धि दर तथा लिंगानुपात की स्थिति के संतोषजनक स्तर को प्राप्त किया जा सकता है।

प्र. आप कहां तक सहमत हैं कि जनसंख्या का अधिक घनत्व भारत में गरीबी का मुख्य कारण है?

उत्तर- भारत की 15वीं जनगणना (2011) के अनुसार देश की जनसंख्या 121 करोड़ है जो पिछले जनगणना (2001) 17.64% ज्यादा है। हमारी अर्थव्यवस्था विकासशील है एवं तीव्र आर्थिक विकास दर के बावजूद यहां की बहुसंख्यक जनसंख्या गरीब और बेरोजगार है, क्योंकि भारत के अधिकतर क्षेत्रों का विकास हो नहीं पाया है। सरकार की अनेक विकास योजनाओं के बावजूद विकास की गति आगे बढ़ नहीं पा रही है, तो इसके कई अन्य कारणों में बढ़ती जनसंख्या भी एक प्रमुख कारण है।

हमारे पास सीमित संसाधन हैं लेकिन दिन -व-दिन यदि जनसंख्या बढ़ती रही तो प्रति व्यक्ति संसाधनों का उपयोग घटेगा। प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता की कमी होती चली जाएगी। साथ ही बढ़ती जनसंख्या के लिए रोजगार के साधन जुटाना एक बड़ी समस्या है। ऐसे में बेरोजगारों की संख्या बढ़ेगी अथवा कृषि जैसे क्षेत्रों में अदृश्य बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होगी। बेरोजगारी की समस्या दूर करने में सरकार को रोजगार सृजन के लिए काफी धन व्यय करना पड़ता है इससे विकास कार्य प्रभावित होते हैं। वर्तमान में चलने वाली सरकार की एक बड़ी योजना डछत्म्ळ। का मूल ध्येय रोजगार उपलब्ध कराना है। यदि इतना धन किसी विकास कार्य में खर्च किया जाए तो गांवों एवं शहरों की तस्वीर बदल सकती है। जनसंख्या वृद्धि से अनुत्पादक उपभोक्ता का भार अर्थव्यवस्था पर बढ़ता है। ये अनुत्पादक उपभोक्ता जनसंख्या का वैसा भाग है जो उत्पादन कार्य में भाग नहीं लेता, जैसे- बच्चे, बूढ़े, महिलाएं, रोगी आदि जनसंख्या के साथ ही इनकी संख्या भी बढ़ती है जिससे अर्थव्यवस्था पर दबाव बढ़ना स्वाभाविक है।

सरकार अनेक योजनाओं के माध्यम से गरीबी हटाने, रोजगार का सृजन करने और ग्रामीण एवं शहरी अवसंरचना का निर्माण करने का प्रयास कर रही है, लेकिन ये कारगर साबित नहीं हो पाती, क्योंकि इतनी विशाल जनसंख्या के लिए ये योजनाएं कम पड़ जाती हैं। विशाल जनसंख्या के कारण विभिन्न सरकारी सेवाओं का स्तर निम्न हो जाता है। जैसे-सरकारी स्कूलों में बच्चों की संख्या काफी ज्यादा होने से शिक्षक प्रत्येक बच्चे पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाता। उसी प्रकार सरकारी अस्पतालों में भी अस्पताल उच्चस्तरीय चिकित्सा सेवाओं को उपलब्ध करवाने में सफल नहीं हो पाते। इनका असर मानव संसाधन के विकास एवं अंततः हमारे अर्थव्यवस्था के विकास पर पड़ता है। अतः जनसंख्या वृद्धि विकास में बाधक है।

प्र. स्वतंत्रता बाद भारत की जनसंख्या के वृद्धि प्रतिरूप की प्रादेशिक विविधता का विवरण दीजिए तथा आर्थिक विषमता पर उनके प्रभाव को दर्शाइए।

उत्तर - स्वतंत्रता के बाद हुए जनगणना (1951) के अनुसार भारत की जनसंख्या 36.10 करोड़ थी जो 1961 में 21.64% की वृद्धि के साथ 43.92 करोड़ हो गई। वर्तमान में (2011) भारत की जनसंख्या 121 करोड़ है लेकिन जनसंख्या वृद्धि के ये आंकड़े भारत के सभी प्रदेशों में एक समान नहीं रहे। कहीं वृद्धि दर काफी ज्यादा रहे, तो कई राज्यों में सामान्य वृद्धि हुई। इनका इन राज्यों के आर्थिक विकास पर प्रभाव पड़ा जो प्रदेशों के मध्य आर्थिक विषमता का एक कारण है।

यदि 1981 के बाद के तीन दशकों की जनगणना आंकड़ों को देखें तो भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की

जनसंख्या वृद्धि काफी ज्यादा हुई हैं। नगालैण्ड में इन तीन दशकों में क्रमशः वृद्धि दर 56.08%, 64.41% -0.47% रहीं। सिक्किम में 28.47%, 32.98%, 12.36% अरुणाचल प्रदेश में 36.83%, 26.21%, 25.92%।

उत्तर भारत के मैदानी भाग के राज्यों की वृद्धि दर इन तीन दशकों में भारत के औसत से सामान्यतः अधिक रही हैं जैसे- बिहार में क्रमशः 23.38%, 28.43%, 25.07%, उत्तर प्रदेश में 25.55%, 25.74%, 20.09%, मध्य प्रदेश में 27.24% 24.34%, 20.30% वृद्धि दर रही है।

दक्षिण भारत के राज्यों की इन तीन दशकों के जनसंख्या वृद्धि दर को देखें तो यह सामान्यतः कम रही हैं, जैसे- केरल में क्रमशः 14.32%, 9.42%, 4.86%, तमिलनाडु में क्रमशः 15.39%, 11.19%, 15.60% वृद्धि दर रही है। भारत की राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में इस दौरान 51.45%, 46.31%, 20.96% जनसंख्या वृद्धि दर रही है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों के आंकड़ों के एक सामान्य अध्ययन से यह बात सामने आ रही है कि सामन्यतः उत्तर-पूर्व के राज्यों एवं उत्तर के मैदानी भाग के राज्यों की जनसंख्या की वृद्धि दर तेज है। इनकी आर्थिक स्थिति में स्वतंत्रता के बाद काफी परिवर्तन नहीं आया है। ये राज्य सामान्यतः गरीब हैं तथा यहां की बहुसंख्यक जनसंख्या बेरोजगारी एवं अर्द्धबेरोजगारी की अवस्था में है। अब यदि हम दक्षिण भारत के राज्यों को देखें तो इनकी जनसंख्या वृद्धि दर कम है। खासकर सर्वाधिक साक्षर राज्य केरल की जनसंख्या वृद्धि दर काफी कम है लेकिन ये राज्य ज्यादा विकसित हैं। यहां लोग बेरोजगारी की अवस्था में नहीं के बराबर हैं। अतः जनसंख्या वृद्धि दर में विविधता आर्थिक विषमता से सीधे-सीधे जुड़ा हुआ है।

प्र. विगत कई वर्षों से बाढ़ एवं सूखे की स्थिति ने बिहार के उन्नयन एवं समृद्धि को लगातार प्रभावित किया है। इस प्रकार के दुर्घटना प्रबंधन में विज्ञान एवं अभियांत्रिकी की भूमिका की विशिष्ट उदाहरण के साथ विवेचना कीजिए।

उत्तर- 'बिहार में बाढ़' और 'बिहार का शोक-कोसी' जैसे भयाक्रांतक कहावतों से उत्तरी बिहार के लोगों को हर साल जूझने की नियति बन गई है। एक कृषि प्रधान देश में बिहार मुख्य रूप से कृषि पर आश्रित राज्य है। खासकर 2000 में बिहार के दक्षिणी हिस्से को काट कर झारखंड के रूप में एक अलग राज्य बनाए जाने के बाद ज्यादातर उद्योग-धंधे झारखंड में चले गए। बिहार के बंटवारे से बिहार में जो जमीन बची उसका 2/3 भाग बाढ़ से प्रभावित रहता है जबकि लगभग 20% क्षेत्र सूखाग्रस्त है। हिमालय की तलहटी में बसे उत्तरी बिहार की मिट्टी बहुत उपजाऊ है लेकिन हर साल 2/3 भूभाग पर आने वाली बाढ़ सिर्फ फसलों को ही तबाह नहीं करती बल्कि यहां की जिंदगी को भी झकझोर जाती है। नदियों के तटबंध टूटने से फसलों को भारी नुकसान होता है। बाढ़ प्रबंधन सुधार सहायता केंद्र (FMISC) का मानना है कि पिछले 40 वर्षों है के दौरान उत्तरी बिहार के मैदानी इलाकों में सबसे ज्यादा बाढ़ दर्ज की गई है। साल 1978, 1987, 1998, 2004 और 2007, 2008, 2011, 2013, 2015, 2017 और 2019 में बिहार सबसे ज्यादा बाढ़ से प्रभावित रहा है। बिहार के मधुबनी, दरभंगा, सीतामढ़ी, शिवहर, सहरसा, सुपौल, पूर्णिया, अररिया, मधेपुरा, कटिहार, समस्तीपुर, मुजफ्फरपुर, बेतिया, मोतिहारी और बेगूसराय जैसे जिले अक्सर बाढ़ से सबसे ज्यादा प्रभावित रहते हैं। दूसरी तरफ दक्षिणी बिहार में जहां सूखे की समस्या है वहां नहरों की कमी और बरसाती नदियों के पानी का सही नियमन नहीं होने की वजह से कृषि नहीं हो पाती है। राज्य का करीब 1/4 भाग में ही नहरों से सिंचाई होती है। समूचे बिहार में नहरों का जाल बिछाकर सिंचाई की उचित व्यवस्था के साथ ही नकदी और कम समय में तैयार होने वाली फसलों का उत्पादन किया जाए, जिससे किसानों की मेहनत सूखे या बाढ़ के पानी में न बहने पाए। विशेषज्ञ मानते हैं कि इस इलाके में जल संपदा

की कोई कमी नहीं है, हर साल मानसून के तीन महीने में इतना पानी बारिश और बाढ़ की वजह से आ जाता है कि अगर इसका प्रबंधन ठीक से किया जाए तो इस इलाके में कभी जल संकट की स्थिति नहीं बनेगी और बाढ़ का खतरा भी कम हो जायेगा।

बिहार में नदियों का जाल बिछा हुआ है। उत्तरी बिहार में बहने वाली अधिकतर नदियों में वर्षभर जल रहता है। बाढ़ समस्या उत्तरी बिहार की सबसे बड़ी और गम्भीर समस्या है इस प्राकृतिक आपदा से करोड़ों रुपये की फसलों एवं मवेशियों तथा कृषि का नुकसान होता है। उत्तरी बिहार की सबसे बड़ी समस्या है - गंगा के उत्तरी मैदान में बाढ़ के कारण हिमालय से बहने वाली अनेक नदियां, जिसमें घाघरा, बागमती, कोसी, महानन्दा आदि प्रमुख हैं।

बाढ़ अनुश्रवण तथा प्रबंधन के चरणः बाढ़ अनुश्रवण प्रक्रिया में बाढ़ - पूर्व की स्थिति, बाढ़ के दौरान की स्थिति, उसके बाद की सभी स्थितियों को शामिल करना जरूरी है। बिहार में जल प्रबन्धन पर ध्यान देते हुए राष्ट्रीय सिंचाई नीति बनाये जाना जरुरी है। बेसिन पर आधारित मास्टर प्लान तैयार करना तथा निर्माणाधीन सिंचाई परियोजनाओं की प्राथमिकता का निर्धारण करना भी आवश्यक है।

बाढ़ पूर्व की गतिविधियां

- उन नदी-स्थलों को चिह्नित करना जहाँ बाढ़ के कारण मानव जीवन तथा उसकी आर्थिक गतिविधियां निरन्तर बाधित होती हो।
- प्रत्येक चयनित नदी-स्थल पर बाढ़ के पानी के जमे रहने की अवधि तथा स्थल को चिन्हित करना।
- बाढ़ की अवधि तथा समय का निर्धारण।
- बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों की वस्तुओं के आर्थिक महत्व का निर्धारण।
- बाढ़ के एक नियत स्तर पर क्षति - संभाव्यता का निर्धाण तथा पूर्वानुमान करना।
- मानवीय अवस्थिति, वास, निर्माण, संरचना के महत्व के दृष्टिकोण से जलस्तर के खतरों के प्रति सतर्कता बरतना।

बाढ़ के दौरान अपेक्षित गतिविधियां

- मौसम विज्ञान संबंधी हाइड्रो-मीटिओरोलॉजिकल नेटवर्क कार्यान्वयन को सुनिश्चित किया जाना चाहिए ताकि प्रबंधन के सभी स्तरों पर ससमय सूचना-संचार जारी हो सके।
- उपग्रहीय चित्रों का उपयोग कर बाढ़ ग्रस्त तथा अन्य तरह से आक्रांत भू-भाग का मानचित्रण करना।

बाढ़-पश्चात् अपेक्षित गतिविधियां

- बाढ़ की वजह से हुई क्षति का जमीनी, हवाई तथा उपग्रहीय सर्वेक्षण कार्य करना।
- सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण तथा उनका मानचित्रण करना।
- भावी बाढ़ से होने वाली क्षति को रोकने के उपायों को सुझाना।

बाढ़ से पहले की गतिविधियों के लिए

- जी.आई.एस. बाढ़ के पहले की गतिविधियों तथा बाढ़ आपदा एवं जोखिम निर्धारण के लिए उपयोगी है। यह वस्तुतः बड़े पैमाने पर आंकड़ा प्रबंधन में काम में आता है।
- बाढ़ के दौरान गतिविधियों के तहत इवैकुएशन रूटों की योजना बनाना ताकि आकस्मिक कार्यों के लिए एक संचालन केन्द्र की रूपरेखा बनाई जाय ताकि बाढ़ चेतावनी पद्धति की रूपरेखा सभी सम्बद्ध आँकड़ों समेत तैयार की जा सके। बाढ़ राहत के आलोक में भी जी.पी.एस. अर्थात् ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम के साथ मिलकर

जी.आई.एस. काफी उपयोगी सिद्ध होता है ताकि खोज एवं बचाव कार्यक्रमों के तहत पहुँच से बाहर के क्षेत्रों में आक्रान्त जनजीवन की समस्या का समाधान किया जा सके। बाढ़ पश्चात् गतिविधियों में क्षति - सूचनाओं के संग्रहण, जनसंख्या - आँकड़ों का संकलन तथा संरचना निर्माण हेतु स्थल-मूल्यांकन में भी जी.आई.एस. पद्धति उपयोगी है।

बिहार में बाढ़ प्रबंधन आधारित जी.आई.एस. के साथ प्रयोगः बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग के अनुसार भारत में, बिहार सर्वाधिक बाढ़ प्रवण क्षेत्र है। जिसमें उत्तर बिहार की 76% आबादी निरन्तर बाढ़ से आक्रान्त है। नेपाल से सटे बिहार का मैदानी भाग हिमालय से निकलने वाली नदियों का जलग्रहण क्षेत्र है। हिमालय के नेपाल - क्षेत्र में भारी वर्षा के कारण घाघरा, बूढ़ी गंडक, बागमती, भूतही बलान, कमला, कोशी तथा महानन्दा में जल प्रवाह बढ़ जाता है, जिसका असर मैदानी हिस्से पर पड़ता है। आज आपदा से निपटने के अभियान से अधिक जरूरत है- आपदा की तैयारियों में सुधार की। इसके लिए संस्थागत संरचना में बहुआयामी सूचना तंत्र का विकास अन्यतम आवश्यक है ताकि पूर्वानुमान तथा भविष्यवाणियों के आधार पर त्वरित कार्रवाई की जा सके। इसके लिए अत्याधुनिक तकनीक के तहत उपग्रह संवेदी-तंत्र, ज्योग्राफिक इंफॉर्मेशन सिस्टम, इंटरनेट आदि संस्थापित किए जाने चाहिए। फ्लड मैनेजमेंट इंफॉर्मेशन सिस्टम सेल (FMISC) अर्थात् बाढ़ प्रबंधन पद्धति कोषांग की स्थापना से बिहार के बाढ़ प्रवण क्षेत्रों में प्रबंधन तथा नियंत्रण हेतु प्रभावी सहायता मिली है।

बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग (FMISC): विभाग के अन्तर्गत बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग (FMISC) विश्व बैंक संपोषित संरचना है। इसे चार चरणों में विकसित किए जाने की योजना है। प्रथम चरण का कार्य प्रक्रियाधीन है। तदनुसार उत्तर बिहार के सर्वाधिक बाढ़ प्रवण क्षेत्र जो कि पश्चिम में बूढ़ी गंडक नदी से पूरब में कोशी नदी तक के बीच स्थित पूर्वी चम्पारण, मुजफ्फरपुर, बेगूसराय, समस्तीपुर, दरभंगा, सीतामढ़ी, शिवहर, मधुबनी, सुपौल, सहरसा तथा खगड़िया को समाहित किए हुए लगभग 26000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में विस्तारित है।

बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति अर्थात् एफ.एम.आई.एस. मानचित्रों तथा प्रतिवेदनों के स्वरूप में विभिन्न तरह की सूचनाएँ प्रसारित करता है। इसके तहत फ्लड बुलेटिन, मंथली ई-बुलेटिन, बाढ़ के कारण ग्राम स्तर तक के प्रभावित भौगोलिक भू-भाग के आँकड़ें, ग्राम स्तर तक के बाढ़ मानचित्र, आई.एम.डी. द्वारा जारी बाढ़ पूर्वानुमान, नेपाल क्षेत्र में वर्षापात के आंकड़े, बाढ़-तीव्रता के मानचित्र, बाढ़ आवृत्ति तथा अवधि के मानचित्र संबंधी सूचनाएं बिहार सरकार के एफ. एम.आई.एस.सी. के वेबसाइट पर जारी करते रहना चाहिए है। इसका वेबसाइट एड्रेस इस प्रकार है- http:// fmis.bin.nic.in/प्रमुख सरकारी तंत्र अर्थात् मुख्यमंत्री से लेकर बाढ़ प्रबंधन से जुड़े सभी इकाईयों को उपलब्ध उक्त सूचनाएं बाढ़ प्रबंधन तथा राहत हेतु कारगर रणनीति अपनाने के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होती है।

बिहार में सूखे की समस्या एवं निदानः बिहार का मध्य भाग पटना, नालन्दा, जहानाबाद, औरंगाबाद, गया, नवादा तथा मुंगेर में अक्सर 100 सेमी. से कम वर्षा होती है जिससे इन इलाकों में सूखाग्रस्त होने की सम्भावना बनी रहती है। गंगा के दक्षिणी मैदान की भूमि ढालयुक्त और पथरीली है, वहां की मिट्टी भी छिछली है जिससे भूमिगत जल नहीं जा पाता और जल तेजी से बह जाता है। इस क्षेत्र में वनों की अतिशय कटाई से मिट्टी की नमी में कमी हो गई है जिससे कृषि प्रभावित होती है। बिहार में दक्षिणी बिहार के कैमूर, रोहतास, गया, औरंगाबाद, नवादा, मुंगेर, जमुई, शेखपुरा, लखीसराय, भागलपुर, पटना, नालन्दा और जहानाबाद के कुछ इलाके एवं टाल क्षेत्र सूखा पीड़ित हैं। बिहार का 20% क्षेत्र सूखाग्रस्त है। दक्षिणी मैदान में बरसाती नदियां सोन, पुनपुन,

हरीहर, किऊल आदि मुख्य हैं। लेकिन ये पर्याप्त सिंचाई के साधन नहीं बन पाते। बिहार में कृषि सिंचाई हेतु पहले परम्परागत सिंचाई जैसे तालाबों नदियों आदि द्वारा सिंचाई की जाती थी लेकिन अब सिंचाई के अन्य माध्यमों जैसे बोरिंग, ट्यूवेल, नलकूपों एवं नहरों द्वारा सिंचाई से यहां का भू-जल स्तर में कमी आई है। राज्य में लगातार गिरते भू-जल स्तर की वजह से सूखे की समस्या गंभीर रूप लेती जा रही है।

इन समस्याओं के समाधान हेतु सरकार द्वारा बनाई गयी राष्ट्रीय जल नीति के अनुसार बाढ़ एवं सूखे को प्रबंधित किया जा सकता है जिससे सरकार द्वारा पूर्व तैयारी, जैसे विकल्पों के साथ ही प्राकृतिक जल विकास प्रणाली को दुरूस्त करने हेतु आधुनिक मशीनों के प्रयोग एवं जल विकास की सही दिशा एवं स्थिति का पता लगाने हेतु भारतीय उपग्रहों का प्रयोग किया जाना चाहिए। सूखे से निपटने के लिए विभिन्न कृषि कार्य नीतियों को विकसित कर मृदा एवं जल में सुधार के लिए स्थानीय, अनुसंधान एवं वैज्ञानिक संस्थाओं से प्राप्त वैज्ञानिक जानकारी से जल और भूमि आदि के प्रबंधन की व्यवस्था की जा सकती है।

भौगोलिक सूचना पद्धति अर्थात् जी.आई.एस. आपदा प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण उपकरण है। दरअसल, आपदा के प्रभावी प्रबंधन हेतु सूचना काफी मायने रखती है। आपदा प्रबंधन से जुड़े व्यक्यिों के लिए सही समय पर सही सूचना का होना नितांत आवश्यक है। बाढ़, भूकम्प, तूफान, भू-स्खलन, दावानल, अकाल जैसी किसी भी आपदा के सन्दर्भ में हर तरह की सूचनाओं के लिए मानचित्र तथा भौतिक स्थितियों का ज्ञान आवश्यक है। सामान्य तौर पर जी.आई. एस. आपदा प्रबंधन में उसकी तैयारी, उससे निपटने, संभलने तथा उसके समाधान आदि के लिए उपयोगी है।

बिहार में सूखाग्रस्त क्षेत्र होने के कारण

- मानसून की अनिश्चितता एवं परिवर्तनशीलता।
- दक्षिणी बिहार की अधिकतर नदियों का बरसाती होना।
- जल प्रबन्धन में जल संग्रहण पर ध्यान केन्द्रीत नहीं करना।
- जल प्रबन्धन और बांध बनाकर जल संग्रह की इच्छा शक्ति का अभाव।

सूखा से निपटने के लिए उपाय

- अधिक से अधिक वनीकरण को प्रोत्साहन देना चाहिए।
- दक्षिण बिहार की नदियों पर बांध बनाने चाहिए।
- जल प्रबन्धन के अन्तर्गत जल भण्डारण, बेसीन लिस्टिंग या क्रम में तालाब बनाना।
- भूमिगत जल को कम-से-कम उपयोग में लाना तथा उसके निकट जलाशय बनाना।

प्र. वर्तमान परिदृश्य में, देश के प्रमुख मुद्दे हैं: "बढ़ती हुई जनसंख्या, उच्च स्वास्थ्य जोखिम घटते हुए प्राकृतिक संसाधन और घटती जा रही कृषि भूमि"। इन चारों क्षेत्रों में से प्रत्येक के लिए कम-से-कम चार वैज्ञानिक प्रयासों की चर्चा कीजिए, जिन्हें आप लागू करना चाहेंगे।

उत्तर- वर्तमान समय में भारत दुनिया का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला देश है जहाँ दुनिया की आबादी का लगभग पाँचवा हिस्सा रहता है। यह विश्व की जनसंख्या का 17.5% भाग है।

विश्व जनसंख्या अनुमान के अनुसार (2019) में भारत की जनसंख्या लगभग 1.35 अरब है। ब्रिटेन के अर्थशास्त्री थामस माल्थस ने 1798 में अपनी एक पुस्तक " एन एसे ऑन द प्रिसिपल ऑफ पॉपुलेशन" के माध्यम से जनसंख्या का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। जिसमें उन्होंने जनाधिक्य की समस्या के समाधान के दो उपाय बताए हैं- पहला प्राकृतिक या नैसर्गिक उपाय और दूसरा कृत्रिम उपाय।

1. **प्राकृतिक उपाय -** जैसे बाढ़, सूखा, महामारी, भूकंप, युद्ध आदि जनसंख्या नियंत्रण के प्राकृतिक उपाय हैं जिन्हें प्रकृति अपनाती है।
2. **कृत्रिम उपाय -** जैसे विवाह की आयु का निर्धारण, महिलाओं के अधिकारों में वृद्धि, शिक्षा का प्रसार, गोद लेने को बढ़ावा, स्वं नियंत्रण, परिवार नियोजन, जनता को जागरूक करना, प्रोत्साहन, महिलाओं को रोजगार के अवसर प्रदान करना आदि।

जनसंख्या नियंत्रण के उपाय

1. **शिक्षा-** यह माना जाता है कि शिक्षा लोगों को सशक्त बनाती है। अगर महिलाओं को शिक्षित करने पर जोर दिया जाये तो महिला अपने पूरे परिवार को शिक्षित कर जनसंख्या नियंत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इससे न केवल महिलाएं शिक्षित होंगी बल्कि रोजगार प्राप्त कर सशक्तिकरण से निर्णय - निर्माण में उन्हें जगह भी मिलेगी।
2. **विवाह की आयु का निर्धारण -** आज भारत की औसत आयु (जीवन प्रत्याशा) लगभग 69.27 वर्ष है। आज कई अनुसंधानों से ये साबित हुई है कि कम उम्र में विवाह से माँ और बच्चे दोनों को स्वास्थ्य का खतरा होता है। इसके समाधान स्वरूप विवाह की न्यूनतम उम्र को बढ़ाकर हम लोगों के स्वास्थ्य में सुधार तथा जनसंख्या नियंत्रण के लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं।
3. **लैंगिक शिक्षा -** यौन स्वास्थ्य से जुड़े सामाजिक कलंक को दूर कर तथा स्कूली शिक्षा में लैंगिक शिक्षा को बिना हिचकिचाहट के पाठयक्रम में शामिल करें।

हालांकि बढ़ती जनसंख्या अपने आप में एक समस्या है। परन्तु कई अन्य समस्याओं के जन्म का कारक भी है। जैसे-

1. इससे उच्च स्वास्थ्य जोखिम का खतरा बढ़ता है।
2. जनसंख्या बढ़ने से प्राकृतिक संस्थानों पर दबाब पड़ता है।
3. कृषि भूमि एक सीमित संसाधन है तथा अधिक जनसंख्या से इस पर भी अधिक दबाव व अन्य पर्यावरणीय सीमाओं के कारण इसका ह्रास होता है।

इन सभी जनसंख्या वृद्धि जनित समस्याओं के निम्नलिखित उपाय हो सकते हैं-

1. **उच्च स्वास्थ्य जोखिम और समाधान-** भारत के आर्थिक विकास में स्वास्थ्य की भूमिका को देखते हुए हमारे दृष्टिकोण में एक बदलाव की जरूरत है। इसके लिए निम्नलिखित सुझावों द्वारा उच्च स्वास्थ्य जोखिम को कम किया जा सकता है-
   - स्वास्थ्य के क्षेत्र में अधिक निवेश करना और बीमारी की रोकथाम को सर्वोच्च प्राथमिकता देना|
   - स्वास्थ्य सेवा वितरण की प्रक्रिया में सुधार के लिए स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत करना। समुदाय की आवश्यकता के लिए स्वास्थ्य सेवाओं को उत्तरदायी बनाने के लिए मौजूदा सरकारी कामकाज में सुधार करना तथा निजी स्वास्थ्य सेवाओं पर समुदाय के हित में नियंत्रण को (निर्देशित) मजबूत करना। अच्छे स्वास्थ्य का अधिकार मनुष्य के जीवन के अधि कार में समाहित है (सुप्रीम कोर्ट) अतः सरकार को कानून के माध्यम से अच्छे स्वास्थ्य की गारंटी देनी होगी।
   - देश भर की बिमारियों का डाटा इकट्ठा कर स्वास्थ्य नीति का निर्माण करना जिससे समय पर बिमारीयों की निगरानी की जा सके और महामारी का रूप लेने से पहले उसे रोका जा सके। स्वास्थ्य सेवाओं में सभी वर्गों को उत्कृष्ट सेवाओं की उपलब्धता

कराना ताकि स्वास्थ्य के क्षेत्र में समानता स्थापित की जा सके।

- सार्वजनिक स्वास्थ्य को बदलने के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी की सहायता से दूर दराज के क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराना, जैसे- टेलिमेडिसीन, आसा कार्यकर्ताओं द्वारा मोबाईल का उपयोग कर रियल टाईम आधार पर केन्द्रीय सर्वर को जानकारी देना, इसके साथ ही स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को मोबाईल एपलीकेशन की सहायता से प्रशिक्षण देना आदि। अतः सरकार को सामाजिक न्याय की जिम्मेदारी लेकर सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को एक रोल मॉडल के तौर पर स्थापित करना चाहिए और निजी स्वास्थ्य सेवाओं को निर्देशित कर जनमानस को स्वास्थ्य के उच्च जोखिम से बचाया जाना चाहिए है।

2. **घटते हुए प्राकृतिक संसाधन और समाधान-** प्राकृतिक संसाधन एक ऐसी प्राकृतिक और मानवीय सम्पदा है जिसका उपयोग हम अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करते हैं, जैसे- चुम्बकीय, गुरुत्वीय, विद्युतीय गुण वाले संसाधन तथा पृथ्वी में सूर्य के प्रकाश, वायुमंडल, जल, थल (सभी खनिजों सहित) के साथ-साथ फल, सब्जी और पशुओं के जीवन से प्राप्त पदार्थ आदि प्राकृतिक संसाधनों की सूची में शामिल हैं। इनके बचाव के लिए निम्न कदम उठाये जा सकते हैं-

- वनों की कटाई को नियंत्रित करना क्योंकि इसके द्वारा न केवल मनुष्य को भोजन की प्राप्ति होती है बल्कि इससे हमें भूजल का स्तर भी उच्चा बनाए रखने में मदद मिलती है इसके साथ ही यह भूमि क्षरण की समस्या को भी कम करता है। इस समस्या के लिए REDD और REDD + जैसे कई कार्यक्रम संयुक्त राष्ट्र के द्वारा चलाए जा रहे हैं।
- खनिज तेल, और उससे उत्पन्न अन्य उत्पादों की खपत को कम करना - पैट्रोलियम तेल तथा उसकी रिफाईनींग की प्रक्रिया में बने पदार्थ पर्यावरण निम्नीकरण के कारण बनते हैं। इसके लिए अक्षय ऊर्जा को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। भारत सरकार द्वारा 2022 तक 40% कुल बिजली खपत का अक्षय ऊर्जा के माध्यम से प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया है।
- ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोतों का अधिक अन्वेषण और उपयोग।
- आर्द्र भूमि तथा तटीय पारिस्थितिक तंत्र की रक्षा करना, मैंगरोव को लगाकर व उन्हें संरक्षण देकर इससे एक ओर चक्रवातों से तटीय क्षेत्र की रक्षा होती है तो दूसरी ओर जैव विविधता के संरक्षण में भी सहायक होते हैं।
- इसके अलावा जनता में जागरूकता फैलाकर तथा 4R सिद्धान्त को अपना कर संसाधनो को क्षरण से बचाया जा सकता है। 4R का मतलब है-रि- ड्यूस, रि-युज, रि-साईकल और रि-स्टोर।

3. **घटती कृषि भूमि - समस्या और समाधान-** भारत मे कृषि भूमि के ह्रास के प्राकृतिक व मानवीय दोनों कारण हैं में बढ़कर परन्तु इसमें मानवीय कारण अधिक हैं। 1970-71 में 71 मिलियन कृषि जोतों की संख्या थी जो 2015-16 145 मिलियन हो गई परन्तु औसत जोत का आकार 2.28 हेक्टेयर से घटकर 15-16 में 1.08 हेक्टेयर रह गया। इसके कारण निम्नलिखित हैं-

- कृषि भूमि का पैतृक सम्पत्ति के रूप में बंटवारा।
- कृषि भूमि का शहरीकरण के विस्तार में उपयोग।

- कई प्राकृतिक कारण भी हैं जैसे बाढ़, भूस्खलन, रेगिस्तान का विस्तार तथा जल द्वारा मृदा क्षरण आदि।

इस समस्या के समाधान के लिए निम्नलिखित कदम अपनाए जा सकते है-

1. किसान केन्द्रीत कृषि विकास सुनिश्चित करने के लिए अच्छी गुणवत्ता और कुशलता के लिए समेकन के प्रयास किए जाने चाहिए।
2. सहकारी कृषि एक ऐसी विधि है जिसमें किसान आपसी लाभ के लिए कृषि के कुछ क्षेत्रों में अपने संसाधनों को जमा करते हैं। इसके लिए किसानों को सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों द्वारा जागरूक करने में सहायता करनी चाहिए।
3. भारत में एक मजबूत और प्रभावी पंचायती राज प्रणाली है जो विकासात्मक परियोजनाओं के लिए एक संस्थागत मंच है जहां पंचायतों द्वारा इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जा सकती है।
4. हमें विकास और पर्यावरण के बीच तालमेल बनाना पड़ेगा क्योंकि शहरीकरण का विस्तार पर्यावरण को ताक पर रखकर नहीं किया जा सकता।

इसके साथ ही हमें प्राकृतिक आपदाओं के प्रभाव को कम करने लिए कई कदम उठाने की जरूरत है। जैसे- नदी जोड़ो परियोजना आदि तथा कृषि भूमि का विस्तार कर हम इस समस्या का समाधान निकाल सकते हैं, जैसे- बंजर भूमि को तकनीकी के माध्यम से सुधारकर तथा सिंचित क्षेत्र को बढ़ाकर।

प्र. बिहार लगातार बाढ़ तथा सूखे की प्राकृतिक आपदाओं का सामना करता रहता है। आपदाओं के पूर्वानुमान तथा प्रबंधन में, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की क्या भूमिका हो सकती है? अपने उत्तर को प्रायोगिक उदाहरणों द्वारा समझाइए।

उत्तर - बिहार में लगातार, बाढ़ एवं सूखे से संबंधित प्राकृतिक आपदाओं से घिरे रहने की सबसे महत्वपूर्ण वजह है इसकी भौगोलिक स्थिति। इसकी भौगोलिक स्थिति के कारण ही बिहार बाढ़ एवं सूखे दोनों से प्रभावित रहता है। नेपाल से निकलने वाली नदियों में ज्यादा पानी आने से तथा उत्तराखण्ड में हुई अधिक वर्षा से गंगा से अधिक पानी आने से बाढ़ जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

बिहार से कृषि सिंचाई हेतु पहले परम्परागत सिंचाई जैसे तालाबों नदियों आदि द्वारा सिंचाई की जाती थी लेकिन अब सिंचाई के अन्य माध्यमों जैसे बोरिंग, ट्यूवेल, नलकूपों एवं नहरों द्वारा सिंचाई से यहां का भू-जल स्तर में कमी आई है। राज्य में लगातार गिरते भू-जल स्तर की वजह से सूखे की समस्या गम्भीर रूप लेती जा रही है।

इन समस्याओं के समाधान हेतु सरकार द्वारा बनाई गयी राष्ट्रीय जल नीति के अनुसार बाढ़ एवं सूखे को प्रबंधित किया जा सकता है जिससे सरकार द्वारा पूर्व तैयारी, जैसे विकल्पों के साथ ही प्राकृतिक जल विकास प्रणाली को दुरूस्त करने हेतु आधुनिक मशीनों के प्रयोग एवं जल विकास की सही दिशा एवं स्थिति का पता लगाने हेतु भारतीय उपग्रहों का प्रयोग किया जाना चाहिए। सूखे से निपटने के लिए विभिन्न कृषि कार्य नीतियों को विकसित कर मृदा एवं जल में सुधार के लिए स्थानीय, अनुसंधान एवं वैज्ञानिक संस्थाओं से प्राप्त वैज्ञानिक जानकारी से जल और भूमि आदि के प्रबंधन की व्यवस्था की जा सकती है।

भौगोलिक सूचना पद्धति अर्थात् जी.आई.एस. आपदा प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण उपकरण है। दरअसल, आपदा के प्रभावी प्रबंधन हेतु सूचना काफी मायने रखती है। आपदा प्रबंधन से जुड़े व्यक्तियों के लिए सही समय पर सही सूचना का होना नितांत आवश्यक है। बाढ़, भूकम्प, तूफान, भू-

स्खलन, दावानल, अकाल जैसी किसी भी आपदा के सन्दर्भ में हर तरह की सूचनाओं के लिए मानचित्र तथा भौतिक स्थितियों का ज्ञान आवश्यक है। सामान्य तौर पर जी.आई.एस. आपदा प्रबंधन में उसकी तैयारी, उससे निपटने, संभलने तथा उसके समाधान आदि के लिए उपयोगी है।

बाढ़ अनुश्रवण तथा प्रबंधन के चरण

बाढ़ अनुश्रवण प्रक्रिया में बाढ़ - पूर्व की स्थिति, बाढ़ के दौरान की स्थिति, उसके बाद की सभी स्थितियों को शामिल करना जरूरी है।

बाढ़ पूर्व की गतिविधियां

- उन नदी-स्थलों को चिन्हित करना जहाँ बाढ़ के कारण मानव जीवन तथा उसकी आर्थिक चेष्टाएँ निरन्तर बाधित हों।
- प्रत्येक चयनित नदी - स्थल पर बाढ़ के पानी के जमे रहने की अवधि तथा स्थल को चिन्हित करना।
- बाढ़ की अवधि तथा समय का निर्धारण।
- बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों की वस्तुओं के आर्थिक महत्व का निर्धारण।
- बाढ़ के एक नियत स्तर पर क्षति - संभाव्यता का निर्धाण तथा पूर्वानुमान करना।
- मानवीय अवस्थिति, वास, निर्माण, संरचना के महत्व के दृष्टिकोण से जलस्तर के खतरों के प्रति संचेतना।

बाढ़ के दौरान अपेक्षित गतिविधियां

- मौसम विज्ञान संबंधी हाइड्रो-मीटिओरोलॉजिकल नेटवर्क कार्यान्वयन को सुनिश्चित किया जाना चाहिए ताकि प्रबंधन के सभी स्तरों पर सूचना - संचार जारी रह सके।
- उपग्रह-छवियों का उपयोग कर बाढ़ ग्रस्त तथा अन्य तरह से आक्रांत भू-भाग का मानचित्रण करना।

बाढ़-पश्चात् अपेक्षित गतिविधियां

- बाढ़ की वजह से हुई क्षति का जमीनी, हवाई तथा उपग्रहीय सर्वेक्षण-कार्य करना।
- सर्वेक्षण से प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण तथा उनका मानचित्रण करना।
- बाढ़ से हुई छति का आकलन करना।
- भावी बाढ़ से होने वाली क्षति को रोकने के उपायों को सुझाना।

बाढ़ से पहले की गतिविधियों के लिए

- जी.आई.एस. बाढ़ के पहले की गतिविधियों तथा बाढ़ आपदा एवं जोखिम निर्धारण के लिए उपयोगी है। यह वस्तुतः बड़े पैमाने पर आंकड़ा प्रबंधन के काम में आता है।
- बाढ़ के दौरान गतिविधियों के तहत इवैकुएशन रूटों की योजना बनाना ताकि आकस्मिक कार्यों के लिए एक संचालन केन्द्र की रूपरेखा बनाई जा सके तथा बाढ़ चेतावनी पद्धति की रूपरेखा सभी सम्बद्ध आँकड़ों समेत तैयार की जा सके। बाढ़ राहत के आलोक में भी जी.पी.एस. अर्थात् ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम के साथ मिलकर जी.आई.एस. काफी उपयोगी सिद्ध होता है ताकि खोज एवं बचाव कार्यक्रमों के तहत पहुँच से बाहर के क्षेत्रों में आक्रान्त जनजीवन की समस्या का समाधान किया जा सके। बाढ़ पश्चात् गतिविधियों में क्षति - सूचनाओं के संग्रहण, जनसंख्या - आँकड़ों का संकलन तथा संरचना-निर्माण हेतु स्थल-मूल्यांकन में भी जी.आई.एस. पद्धति उपयोगी है।

बिहार में बाढ़ प्रबंधन आधारित जी.आई.एस. के साथ प्रयोग- बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग भारत में, बिहार सर्वाधिक बाढ़ प्रवण क्षेत्र है। जिसमें उत्तर बिहार की 76% आबादी निरन्तर बाढ़ से आक्रान्त है। नेपाल से सटे बिहार का मैदानी भाग हिमालय से निकलने वाली नदियों का जलग्रहण क्षेत्र है। हिमालय के नेपाल - क्षेत्र में भारी वर्षा के कारण घाघरा, बूढ़ी गंडक, बागमती, भूतही बलान, कमला, कोशी तथा महानन्दा में जल प्रवाह बढ़ जाता है, जिसका असर मैदानी हिस्से पर पड़ता है। इस क्षेत्र में गत तीन से चार दशकों में आबादी तेजी से बढ़ी है तथा जनजीवन पर बाढ़ के आक्रामक प्रभाव से क्षति में तीव्र वृद्धि दृष्टिगोचर हुई है।

आपदा के प्रति निपटने के अभियान से अधिक जरूरत है आपदा-तैयारियों में सुधार की। इसके लिए संस्थागत संरचना में बहुआयामी सूचना तंत्र का विकास अन्यतम आवश्यक है ताकि पूर्वानुमान तथा भविष्यवाणियों के आध र पर त्वरित कार्रवाई की जा सके। इसके लिए अत्याधुनिक तकनीक के तहत उपग्रह संवेदी - तंत्र, ज्योग्राफिक इंफॉर्मेशन सिस्टम, इंटरनेट आदि संस्थापित किए जाने चाहिए। फ्लड मैनेजमेंट इंफॉर्मेशन सिस्टम सेल (FMISC) अर्थात् बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग की स्थापना से बिहार के बाढ़ प्रवण क्षेत्रों में प्रबंधन तथा नियंत्रण हेतु प्रभावी सहायता प्राप्त हुई है।

बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग (FMISC)- विभाग के अन्तर्गत बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति कोषांग (FMISC) विश्व बैंक संपोषित संरचना है। इसे चार चरणों में विकसित किये जाने की योजना है। प्रथम चरण का कार्य प्रक्रियाधीन है।

तदनुसार उत्तर बिहार के सर्वाधिक बाढ़ प्रवण क्षेत्र जो कि पश्चिम में बूढ़ी गंडक नदी से पूरब में कोशी नदी तक के बीच स्थित पूर्वी चम्पारण, मुजफ्फरपुर, बेगूसराय, समस्तीपुर, दरभंगा, सीतामढ़ी, शिवहर, मधुबनी, सुपौल, सहरसा तथा खगड़िया को समाहित किए हुए लगभग 26000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में विस्तारित है। का

बाढ़ प्रबंधन सूचना पद्धति अर्थात् एफ.एम.आई.एस. मानचित्रों तथा प्रतिवेदनों के स्वरूप में विविध तरह की सूचनाएँ प्रसारित करता है। इसके तहत फ्लड बुलेटिन, मंथली ई-बुलेटिन, बाढ़ के कारण ग्राम स्तर तक के प्रभावित भौगोलिक भू-भाग के आँकड़ें, ग्राम स्तर तक के बाढ़ मानचित्र, आई.एम.डी. द्वारा जारी बाढ़ पूर्वानुमान, नेपाल क्षेत्र में वर्षापात आँकड़े, बाढ़ - तीव्रता के मानचित्र, बाढ़ आवृत्ति तथा अवधि के मानचित्र संबंधी सूचनाएँ बिहार सरकार के एफ. एम. आई.एस.सी. के वेबसाइट पर जारी कीं जाती है। इसका वेबसाइट एड्रेस इस प्रकार है- http://fmis.bin.nic.in/ प्रमुख सरकारी तंत्र अर्थात् मुख्यमंत्री से लेकर बाढ़ प्रबंधन से जुड़े सभी इकाईयों को उपलब्ध उक्त सूचनाएँ बाढ़ प्रबंधन तथा राहत हेतु कारगर रणनीति अपनाने के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होती है।

प्र. भारत में नदियों का सुदृढ़ जाल होने के बाद भी कई ऐसे क्षेत्र हैं, जो जलापूर्ति और विशेष रूप से पेयजल की कमी से जूझ रहे हैं। इस समस्या के समाधान हेतु जल प्रबंधन में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका की सोदाहरण विविचना कीजिए।

Key to Answer

- भारत के सुदृढ़ नदियों के जाल की उपलब्धता के सन्दर्भ में संक्षिप्त जानकारी दें।
- तत्पश्चात् जलापूर्ति एवं विशेष रूप से पेयजल की समस्या से जूझने की व्याख्या करें।
- इस समस्या के समाधान में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की क्या भूमिका है, इसे स्पष्ट करें।

उत्तर - भारत में नदियों का सुदृढ़ जाल होने के कारण भी पिछले कुछ दशकों से देश में जल संकट भारत के लिए बड़ी समस्या है। इन दिनों भारत के

अनेक राज्यों, जैसे- दक्षिण भारत में तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र इत्यादि में व्यापक पेयजल एवं सूखे जैसी आपदा देखी जा रही है। इसके कारण वहां के किसान आत्महत्या कर रहे हैं, तो वहीं चेन्नई में पेयजल के अभाव में जनता त्राहिमाम कर रही है। सोचने वाली बात तो यह है कि भारत में वर्षा तो पर्याप्त होती ही है इसके साथ भारत में नदियों का एक बहुत बड़ा जाल भी विद्यमान है। क्योंकि मोटे तौर पर देखा जाए तो दक्षिण भारत में जहां नर्मदा, ताप्ती, कृष्णा, गोदावरी आदि जैसी विशाल नदियों का जाल है तो वहीं उत्तर भारत में गंगा-यमुना, चम्बल, घाघरा, सोन, सिन्धु, झेलम, चेनाब आदि नदियां तो पूर्व में ब्रह्मपुत्र जैसे विशालकाय एवं लम्बी नदी मौजूद है। फिर यहां पेयजल एवं सूखे जैसी जल संकट का आ जाना अपने आप में एक चिन्ता का विषय है। यही कारण है कि इन दिनों जल संरक्षण शोधकर्ताओं के लिए एक मुख्य विषय बन गया है।

भारत में जल संकट की स्थिति

आबादी के लिहाज से विश्व का दूसरा सबसे बड़ा आबादी वाला देश भारत जल संकट से जूझ रहा है। यहां जल संकट का रूप विकराल हो चुका है। न सिर्फ शहरी क्षेत्रों में बल्कि ग्रामीण अंचलों में भी जल संकट बढ़ा है। वर्तमान में 20 करोड़ भारतीयों को शुद्ध पेयजल उपलब्ध नहीं हो पाता है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, गुजरात, राजस्थान, केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक जैसे राज्यों में जहां पानी की कमी बढ़ी है, तो वहीं राज्यों के मध्य पानी से जुड़े विवाद भी गहराये हैं। भूगर्भीय जल का अत्याधिक दोहन होने के कारण धरती की कोख सूख रही है। जहां मीठे जल की प्रतिशतता में कमी हुई है, तो वहीं जल की लवणीयता बढ़ने से भी जल संकट की समस्या विकराल हुई है।

जल संकट के कुछ महत्वपूर्ण कारण

- भूगर्भीय जल का अनियंत्रित दोहन,
- भूगर्भीय जल पर हमारी बढ़ती निर्भरता,
- पारम्परिक जल स्रोतों एवं तकनीकों की उपेक्षा,
- जल संरक्षण और प्रबंधन की उन्नत एवं उपयोगी तकनीकों का अभाव,
- जल शिक्षा का अभाव,
- भारतीय संविधान में जल के मुद्दे का राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में रखा जाना इत्यादि।

जल संकट के समाधान में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका

जल जीवन का आधार है और हमें अगर जीवन को बचाना है तो जल संरक्षण एवं जल संचय के उपाय करने होंगे। जल की उपलब्धता घट रही है एवं मांग को लेकर मारामारी बढ़ रही है। ऐसे में जल संकट का सही समाधान खोजना हर मनुष्य का दायित्व है। यही हमारी राष्ट्रीय जिम्मेदारी भी है। ऐसे में तकनीकों का उपयोग अपरिहार्य हो जाता है। जिसके सन्दर्भ में निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं-

- सिंचाई कार्यों के लिए स्प्रिंकलर और ड्रिप सिंचाई जैसे पानी की कम खपत वाली प्रौद्योगिकियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- जल संकट से निपटने के लिए हमें वर्षाजल भण्डारण पर विशेष ध्यान देना होगा। वाष्पन या प्रवाह द्वारा जल खत्म होने से पूर्व सतह या उपसतह पर इसका संग्रह करने की तकनीक (वर्षा जल भण्डारण) को बढ़ावा देना होगा।
- हमें ऐसी विधियां एवं तकनीक विकसित करनी होगी, जिनसे लवणीय एवं खारे पानी को मीठा बनाकर उपयोग में लाया जा सके। इस कार्य हेतु रिवर्स ऑस्मोसिस की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होगी।
- नलकूपों द्वारा रिचार्जिंग तकनीक का उपयोग।

- सरफेस रन ऑफ हार्वेस्टिंग- शहरी क्षेत्रों में पानी बहकर बेकार हो जाता है। इस बहते जल को एकत्र कर कई माध्यम से धरती के जलवाही स्तर को रिचार्ज किया जाता है।
- रूफ टॉप रेनवाटर हार्वेस्टिंग तकनीक के उपयोग के द्वारा वर्षा का पानी जहां गिरता है, वहीं उसे एकत्र कर लिया जाता है। इस रूफ-टॉप रेनवाटर हार्वेस्टिंग में घर की छत ही कैचमेण्ट क्षेत्र का काम करती है।

वास्तव में जल आज की जरुरत ही नहीं हमारे जीवन के लिए अपरिहार्य है, अतः जल संकट से निपटने हेतु जल प्रबंधन आवश्यक है। हम वर्षा जल का पूर्ण संचय करें। यह ध्यान रखना होगा कि बारिश की एक बूंद भी व्यर्थ न जाए। इसके लिए रेन वाटर हार्वेस्टिंग एक अच्छा माध्यम हो सकता है। आवश्यकता है, इसे और विकसित एवं प्रोत्साहित करने की। इसके प्रति जनजागृति एवं जागरुकता को भी बढ़ाना आवश्यक है।

प्र. वर्तमान सरकार विभिन्न राज्यों में स्मार्ट शहर विकसित करने के लिए प्रयासरत है। स्मार्ट शहरों के बारे में आपकी क्या परिकल्पनाएं हैं? आदर्श स्मार्ट शहर के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

Key to Answer

- स्मार्ट सिटी मिशन का उल्लेख करें
- इसके उद्देश्यों को स्पष्ट करें
- स्मार्ट शहरों के बारे में अपनी परिकल्पनाएं (विचार) का उल्लेख करें।
- आदर्श स्मार्ट शहर के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका की चर्चा करें।

उत्तर - स्मार्ट शहर एक ऐसा शहरी क्षेत्र है, जोकि अत्याधुनिक एवं टिकाऊ बुनियादी ढाँचे, अचल सम्पत्ति, संचार और बाजार व्यवहार्यता के मामले में उन्नत होता है। स्मार्ट शहर में शहर सूचना प्रौद्योगिकी सिद्धान्त के बुनियादी ढांचे एवं आवश्यक सेवाओं की आपूर्ति पर निर्भर होता है। एक आदर्श स्मार्ट शहर में पर्याप्त पानी की आपूर्ति, निश्चित विद्युत की आपूर्ति, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन सहित स्वच्छता, कुशल शहरी गतिशीलता और सार्वजनिक परिवहन, किफायती आवास, विशेष रूप से गरीबों के लिए सुदृढ़ आई.टी. कनेक्टिविटी और डिजिटलीकरण, सुशासन, विशेष रूप से ई-गवर्नेश और परिक भागीदारी, टिकाऊ पर्यावरण, नागरिकों की सुरक्षा एवं संरक्षा तथा विशेष रूप से महिलाओं, बच्चों एवं बुजुर्गों की सुरक्षा और स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसी बुनियादी सुविधाओं का होना आवश्यक है।

इन्हीं सब सुविधाओं का प्रायोजन एवं व्यवस्था कर भारत सरकार स्मार्ट शहर विकसित करने के लिए प्रयासरत है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते रखते हुए सरकार ने 2015 में स्मार्ट सिटी मिशन की शुरुआत की है जिसका उद्देश्य 2022 तक 100 शहरों को स्मार्ट शहरों के रूप में परिवर्तित करना है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ऐसा पहली बार हुआ है कि शहरी विकास मंत्रालय कार्यक्रम में निधियन के लिए एवं शहरों का चयन करने के लिए चुनौती अथवा प्रतिस्पर्धा विधि का उपयोग कर रहा है। तथा साथ ही क्षेत्र आधारित विकास की कार्यनीति का उपयोग कर रहा है। यह 'प्रतिस्पर्धा और सहकारी संघवाद' के भाव को दर्शाता है।

स्मार्ट शहरों की प्रासंगिकता

शहर वर्तमान में विकास के इंजन के रूप में जाने जाते हैं। शहर सकल घरेलू उत्पाद में 60% योगदान करते हैं। अनियोजित शहरी फैलाव और मलिन बस्तियों की बदतर स्थिति तथा सेवा, अवैध निर्माण के बावजूद शहरीकरण का आर्थिक महत्व है। इसने शहरों को अत्यधिक प्रदूषित, अस्वास्थ्यकर और प्राकृतिक व जैविक सभी रूपों से असुरक्षित किया है। विफल क्षेत्रीय योजना ने हर साल लाखों लोगों का पलायन, पहले से चरमराई हुई आधारभूत संरचना और सेवा पर बोझ पैदा कर दिया है। 2050 तक 50% आबादी शहर में रहेगी जिसे समायोजित करने के लिए 500 नये शहरों की आवश्यकता है। अतः

शहरीकरण की चुनौतियों पर अगर ध्यान नहीं दिया जाए तो जिस सपने से लोग शहरों की तरफ भाग रहे हैं, वह एक बेहद दुःखदायी सपना हो जाएगा। किसकी कि

इस प्रकार स्मार्ट शहर योजना शहरीकरण की समस्या को एक स्मार्ट समाधान प्रदान करती है। यह योजना शहरों में बुनियादी सुविधाओं एवं आधारभूत संरचना को साफ सभ्य और टिकाऊपन प्रदान करता है।

आज शहरीकरण और इससे उत्पन्न समस्या देश के लिए बड़ी चुनौती है। शहरों की आबादी लगातार बढ़ती जा है। जिसके कारण आवास, परिवहन, पेयजल आपूर्ति सम्बंधी समस्याएं उत्पन्न होती हैं। ऐसे में स्मार्ट शहर (Smart City) जैसी पहल अत्यन्त उपयोगी एवं सार्थक हो सकती है। इसके प्रावधान के अलावा हमें कुछ जरूरी मसलों की तरफ भी ध्यान देने की आवश्यकता है। शहरी अवसंरचना स्मार्ट शहर विकास की एक बड़ी चुनौती है। अगले 5 वर्षों के दौरान (2017-2022) इन निर्धारित शहरों को विश्वस्तरीय अवसंरचना और अच्छा वातावरण देने के लिए 3 लाख करोड़ रुपये खर्च किये जायेंगे। जिसके लिए आई.टी. सम्पर्क एवं ई-गवर्नेंस जैसे प्रौद्योगिकियों के जरिये बुनियादी सुविधाओं और नगर भागीदारी को सुनिश्चित कर स्मार्ट शहरों का विकास किया जा सकता है।

स्मार्ट शहर के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका

- स्मार्ट शहर के नगर संरचना का डिजाइन बनाने में भवन प्रौद्योगिकी का सहारा लिया जा सकता है। इस प्रौद्योगिकी की सहायता से ऐसे भवन का निर्माण किया जा सकता है जो ऊर्जा दक्ष एवं ध्वनि सह हों।
- विज्ञान प्रोद्योगिकी की सहायता से सार्वजनिक भवनों की छतों पर सौर ऊर्जा से संबंधित संयंत्र लगाए जा सकते हैं, ऐसे संयंत्र उस भवन की समस्त ऊर्जा की आवश्यकता को पूर्ण कर सकते हैं।
- प्रौद्योगिकी की सहायता से नगरीय ड्रेनेज को दुरुस्त किया जा सकता है। साथ ही वर्षा जल संचय द्वारा जल की आवश्यकता की पूर्ति भी हो सकती है।
- विज्ञान प्रौद्योगिकी द्वारा सार्वजनिक वाहनों को प्रदूषण मुक्त बनाया जा सकता है। जैसे बैटरी रिक्शा या सौर रिक्शा का विकास। प्रौद्योगिकी के द्वारा स्मार्ट शहरों में भूमिगत या ऊपरी मेट्रों लाइनों का विकास किया जा सकता है।
- स्मार्ट शहरों में वायु को प्रदूषण मुक्त करने के लिए धूल एवं धुआं सोखने वाले यंत्र को स्थापित किया जा सकता है।
- स्मार्ट शहरों में लोगों की सुरक्षा हेतु सार्वजनिक स्थानों पर सीसीटीवी कैमरा लगाया जा सकता है। पुलिस बल को जीपीएस के माध्यम से जोड़ कर पुलिस को और अधिक दक्ष बनाया जा सकता है।

उदाहरण के तौर पर देखा जाए तो दिल्ली जैसे शहर में ई-रिक्शा जैसे प्रौद्योगिकी की शुरुआत ने अच्छी पहल की है। इसके साथ-साथ दिल्ली एवं मुम्बई मेट्रो ने भी भारी मात्रा में परिवहन एवं प्रदूषण के क्षेत्र में मदद किया है।

अतः कहा जा सकता है कि स्मार्ट शहर विकास की पहल में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर इस विकास क्रम को बहुत ही सुसंगठित एवं समायोजित तरीके से लागू किया जा सकता है। जिससे कि स्मार्ट सिटी का स्मार्ट समाधान हो सके।

प्र. ग्लोबल वॉर्मिंग क्या है? ग्लोबल वॉर्मिंग से होने वाले प्रभाव को कम करने के लिए किए जाने वाले प्रयासों में भारत का क्या योगदान है? "निकट भविष्य में पूरा विश्व, इस ग्रह के मानव के द्वारा की जाने वाली गलतियों के कारण, पानी

में डूब जायेगा।" उक्त कथन पर अपने विचार स्पष्ट करें।

Key to Answer

ग्लोबल वॉर्मिंग की घटना को स्पष्ट करते हुए इसके प्रभावों कम करने के लिए भारतीय योगदान का उल्लेख करें। ग्लोबल वॉर्मिंग के कारण सागरों एवं महासागरों के बढ़ते स्तर से उत्पन्न होने वाले दुष्प्रभावों का उल्लेख करें।

उत्तर- पृथ्वी के औसत तापमान में होने वाली वृद्धि को ग्लोबल वार्मिंग कहते हैं। तापमान में होने वाली यह वृद्धि प्राकृतिक एवं मानव जनित दोनों रूपों में है। तापमान में प्राकृतिक वृद्धि एक स्वभाविक वृद्धि है जो विभिन्न भौगोलिक प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप होती है। वहीं तापमान में मानव जनित कारकों से होने वाली वृद्धि सम्पूर्ण पृथ्वी के जीवों के लिए हानिकारक है।

मानव जनित कारकों के कारण अनेक ग्रीन हाउस गैसें जैसे CO, मेथेन, SF6, CFC, HFC, नाइट्रोजन के ऑक्साइड आदि पृथ्वी के वायुमंडल में एकत्रित होकर एक परत का निर्माण कर लेते हैं तथा पृथ्वी की उष्मा को वायुमंडल से बाहर जाने से रोक देती है जिस कारण पृथ्वी पर ग्रीन हाउस प्रभाव (Green House Effect) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और तापमान में वृद्धि होने लगती है।

ग्लोबल वार्मिंग के अनेक कारण हैं- यातायात के साधनों, बिजली संयंत्रों तथा औद्योगिक कारखानों से भारी मात्रा में CO, और अन्य घातक गैसे उत्सर्जित होती है जो ग्लोबल वार्मिंग में वृद्धि करती है। वन कार्बन सिंक (Sink) के रूप में कार्य करते हैं। लेकिन मनुष्य खेती के लिए तथा शहरी और बुनियादी ढांचे के विकास के लिए दुनिया भर में वनस्पति के विशाल क्षेत्रों को साफ करते हैं तो पेड़ पौधों की कमी के कारण कार्बन वायुमंडल में वापस CO, के रूप में उत्सर्जन हो जाता है, जो ग्लोबल वार्मिंग में योगदान देता है। रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, का कृषि में उपयोग तथा रेफ्रीजरेटर, AC, कुलिंग मशीनों का उपयोग आदि के कारण नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा क्लोरो-फ्लोरो आदि ग्रीन हाउस गैसें तापमान में वृद्धि कर रही है।

ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव

- दुनिया भर में समुद्र के स्तर में वृद्धिः वैज्ञानिकों ने अंटार्कटिका और ग्रीनलैंड में दो बड़े पैमाने पर बर्फ शीटों की पिघलने के कारण दुनिया भर के समुद्री स्तरों में वृद्धि की भविष्यवाणी की है, खासकर अमेरिका के पूर्वी तट पर हालांकि, दुनिया भर के कई देशों में समुद्र के बढ़ते स्तरों के प्रभाव का अनुभव होगा, जो लाखों लोगों को विस्थापित कर सकता है।
- तेज तूफानों की आवृत्ति में वृद्धिः तूफान और चक्रवात जैसे तूफानों की गंभीरता बढ़ रही है। वैज्ञानिकों का कहना है कि ग्लोबल वार्मिंग दुनिया भर के सबसे चरम तूफानों की तीव्रता में काफी वृद्धि करेगी।
- **प्रजातियों का विलुप्त होना:** एक प्रकाशित शोध के अनुसार, 2050 तक, बढ़ते तापमान से दस लाख से अधिक प्रजातियाँ विलुप्त हो सकती है। फिर क्योंकि हम पृथ्वी पर प्रजातियों की विविध आबादी के बिना अस्तित्व में नहीं रह सकते हैं, इसलिए यह मनुष्यों के लिए डरावनी खबर है।
- **मूंगा चट्टानों का गायब होना:** WWF के कोरल रीफ्स पर एक रिपोर्ट में कहा गया है कि तापमान वृद्धि और महासागर अम्लीकरण और इसके प्रभावों के कारण कोरल आबादी 2100 तक कम हो जाएगी। समुद्र के तापमान में छोटे लेकिन लंबे समय तक उगने वाले कोरल का "ब्लीचिंग " महासागर पारिस्थितिक तंत्र के लिए एक गंभीर खतरा है। दुनिया भर में बर्फ पिघल रही है। विशेष रूप से आर्कटिक सागर की बर्फ पिघल रही है और यह बर्फ चादर की तरह पश्चिम अंटार्कटिका और ग्रीनलैंड को ढक रही

है। शोधकर्ताओं का कहना है कि इसकी वजह से अंटार्कटिका की पेंगुइन की संख्या में काफी कमी आई है।

- यदि सदी के अंत तक या इससे आगे ग्लोबल वार्मिंग जारी रहती है, तो उम्मीद की जाती है कि समुद्र का जलस्तर 7 से 23 इंच (18 से 59 सेंटीमीटर) तक बढ़ जाएगा। इसके अलावा यदि ध्रुवीय क्षेत्रों में बर्फ का पिघलना जारी रहता है, तो इससे भी समुद्र का जलस्तर 4 से 8 इंच (10 से 20 सेंटीमीटर) तक और बढ़ जाएगा। इससे बाढ़ और सूखे जैसी घटनाओं में भी इजाफा हो सकता है और हरिकेन जैसे अन्य तूफान और अधिक जोरदार और प्रभावशाली हो जाएंगे। इससे मच्छरों द्वारा फैलने वाली मलेरिया जैसी व्यापक बीमारियों में वृद्धि हो सकती है और ताजे पानी की उपलब्धता में काफी कमी आएगी।
- इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) की रिपोर्ट के अनुसार भारत समेत दुनियाभर में भविष्य में गरीबी, खाद्यान्न की कीमत में वृद्धि होगी, साथ ही मलेरिया और डायरिया की बीमारी का प्रकोप बढ़ेगा।
- जलवायु परिवर्तन अनुमानों के अनुसार, भारत के कोलकाता और पाकिस्तान के कराची को हीटवेव से सबसे ज्यादा खतरा है।
- रिपोर्ट के मुताबिक, वैश्विक तापमान के कारण भोजन, जल जनित और मच्छरों से होने वाली बीमारियों का प्रकोप बढ़ेगा। गरीब इलाकों में कम उत्पादक क्षेत्र खतरे में और इजाफा करेंगे।

ग्लोबल वार्मिंग के प्रभावों को कम करने हेतु भारत का योगदान

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय मिशन- जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) को औपचारिक रूप से 30 के लिए राष्ट्रीय मिशन, सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन, राष्ट्रीय जल मिशन, सुस्थिर हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय जून 2008 को लागू किया गया। इस कार्य योजना में आठ मिशन निर्धारित किए गए है- राष्ट्रीय सौर मिशन, विकसित ऊर्जा दक्षता मिशन, हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन, सुस्थिर कृषि हेतु राष्ट्रीय मिशन, जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक ज्ञान पर राष्ट्रीय मिशन।

भारत का अभीष्ट राष्ट्रीय निर्धारित योगदान (INDC)- भारत ने दिसम्बर में पेरिस में होने वाले जलवायु परिवर्तन सम्मेलन के लिए 2030 तक अपने कार्बन गैसों उत्सर्जन को 2005 के स्तर से 33-35 प्रतिशत तक घटाने की महत्वाकांक्षी प्रतिवद्धता की घोषणा कर दी।

भारत की योजना के संबंध में आईएनडीसी दस्तावेज में कहा गया कि अब तक अपनाए गए रास्ते के उलट आर्थिक विकास के स्तर के अनुरूप जलवायु अनुकूल और स्वच्छ मार्ग के अनुसरण, 2030 तक 2005 के स्तर के मुकाबले उत्सर्जन गहनता को सकल घरेलू उत्पाद के मुकाबले 33-35 प्रतिशत करने, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की मदद से 2030 तक गैर-जीवाश्म ऊर्जा संसाधनों पर आधारित संयंत्रों से करीब 40 प्रतिशत बिजली उत्पादन का लक्ष्य प्राप्त करने और हरित जलवायु कोष (जीसीएफ) समेत कम लागत वाले अंतर्राष्ट्रीय वित्त के प्रावधान हैं।

भारत सरकार ने 2030 तक 375 गेगावाट सौर ऊर्जा के उत्पादन का लक्ष्य रखा है। यदि यह लक्ष्य प्राप्त हो जाता है तो संभव है कि भारत का कार्बन उत्सर्जन कम हो जाए। इसके अलावा अक्षय ऊर्जा का उपयोग बढ़ाया जाएगा। 2030 तक 2.5 से तीन अरब टन कार्बन डाईऑक्साइड सोखने की क्षमता विकसित की जाएगी।

"निकट भविष्य में पूरा विश्व, इस ग्रह के मानव के द्वारा की जाने वाली गलतियों के कारण, पानी में डूब जाएगा।" हिमनदों एवं ध्रुवीय बर्फीली

चोटियों के पिघलने से समुद्र में जल की मात्रा बढ़ेगी। इसके अलावा तापमान बढ़ने से भी समुद्री जल में फैलाव होगा जिससे समुद्री जलस्तर में वृद्धि होगी। इन सबके परिणामस्वरूप छोटे द्वीप एवं समुद्रतटीय क्षेत्र जलमग्न हो जाएंगे। विश्व के अनेक देश ऐसे हैं जिनके तट सागरों या महासागरों से मिलते हैं। समुद्री जल स्तर के बढ़ने के कारण इनके तटीय क्षेत्र जलमग्न हो सकते हैं। ऐसे देशों में भारत, बांग्लादेश, श्रीलंका, चीन, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, फिजी आदि हैं।

मालदीव एवं तुवालु ऐसे दो द्वीप राष्ट्र हैं, जो कि समुद्री जलस्तर के बढ़ने से प्रभावित होंगे। मालद्वीव, मौरीशस, लक्षद्वीप का बड़ा भूभाग पानी में डूब चुका है। हवाई और आस्ट्रेलिया के करीब प्रशांत महासागर में बसे पौलनेशियन द्वीपदेश टूवालू पर उस के डूबने का खतरा मंडरा रहा है। हालांकि, अकेले टूवालू ही नहीं, दुनिया के बहुत सारे द्वीप देश और द्वीपों के डूबने या मटियामेट हो जाने का खतरा दिनोंदिन गहराता जा रहा है। फिलहाल 40 देशों में समुद्र का जलस्तर बढ़ने से हजारों की संख्या में लोग बेघर हो चुके हैं। बंगाल की खाड़ी में स्थित न्यूमूर भी पूरी तरह जलमग्न हो चुका है। इस के अलावा भारत का पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश डेल्टाई क्षेत्र हैं जो समुद्र की सतह से बहुत कम ऊंचाई पर बसे हुए हैं।

प्रशांत महासागर के माइक्रोनेशिया, मेलानेशिया के द्वीप सब से अधिक खतरे में हैं। अकेले माइक्रोनेशिया में किरीबाती मार्शल द्वीपसमूह और नौरू संप्रभु देश हैं। दुनिया के सब से छोटे द्वीपदेश में नौरू भी एक ऐसा ही द्वीपदेश है जो टूवालू से भी छोटा द्वीपदेश है। ऐसा ही एक द्वीप समूह है कार्टरिट, जो दक्षिण-पश्चिम प्रशांत महासागर में बसा है।

इसी तरह प्रशांत महासागर में स्थित किरीबाती गणराज्य पर जलस्तर का खतरा मंडरा रहा है। इसी तरह कोरल सागर, अराफुरा सागर और कारपेनटारिया खाड़ी में टौरेस स्ट्रेट के 274 द्वीपों में से बहुत सारे पहले ही डूब चुके हैं। जो बचे हैं उन में बसे घरों में ज्वार के समय समुद्र का पानी घुस जाता है। खारे पानी से खेती तबाह हो चुकी है। यहां की विस्थापित आबादी तरावा के द्वीप में पनाह ले रही है लेकिन यह कोई स्थायी इंतजाम नहीं है। प्रशांत महासागर का सोलोमन द्वीप समूह भी सुरक्षित नहीं है। वर्ष 1900 से ले कर अब तक दुनिया में समुद्र जलस्तर औसतन 19 सैंटीमीटर बढ़ा है। अनुमान है कि इस शताब्दी के अंत तक यह जलस्तर 26 सैंटीमीटर से ले कर 83 सैंटीमीटर के बीच बढ़ने वाला है। 2050 तक और 2 करोड़ लोग विस्थापित होंगे।

Key to Remember

- ग्लोबल वार्मिंग घटना का स्पष्टीकरण
- ग्लोबल वार्मिंग को रोकने के भारतीय उपाय
- ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव
- दिए गए कथन का स्पष्टीकरण

प्र. भारत के लिए प्रदूषण गंभीर खतरा बन गया है। इसके कारणों की पहचान कीजिए एवं इंगित कीजिए कि शासन द्वारा कौन से अनिवार्य कदम उठाए जाने चाहिए एवं जनता द्वारा कौन-से स्वैच्छिक कदम उठाए जाने चाहिए?

Key to Answer

प्रदूषण को परिभाषित करते हुए प्रदूषण को बढ़ाने वाले कारकों का उल्लेख करें। सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न परियोजनाओं का विश्लेषणात्मक विवरण दें। जनभागीदारी को बढ़ाने हेतु सुझाव दें।

उत्तर - प्रदूषण एक ऐसा अभिशाप है जो कृत्रिम व प्राकृतिक दोनों तरीकों से हो सकता है। प्रदूषण के लिए मुख्यतः मानवीय कारक जिम्मेदार हैं, क्योंकि प्रकृति अपने द्वारा उत्पन्न प्रदूषण को संतुलित कर लेती है। वर्तमान समय में विश्व विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों से ग्रस्त है। विश्व के साथ ही भारत में भी

प्रदूषण अपने खतरनाक स्तर से ऊपर हो चुका है। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या व आर्थिक विकास के कारण भारत में प्रदूषण के साथ-साथ कई पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। इसके पीछे मुख्य रूप से शहरीकरण, औद्योगिकरण में अनियंत्रित वृद्धि, बड़े पैमाने पर कृषि का विस्तार तथा तीव्रीकरण एवं जंगलों का तेजी से नष्ट होना है। यह अनुमान है कि 2030 तक भारत दुनिया का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश बन जाएगा। बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव काफी बढ़ जाएगा। भारत में प्रतिवर्ष जितने लोग आतंकवाद के कारण मृत्यु को प्राप्त होते हैं उससे, दोगुने प्रदूषण के कारण अपनी जान से हाथ धो बैठते हैं।

प्रदूषण की इस भयावहता के पीछे कई कारक जिम्मेदार हैं जो निम्न प्रकार हैं-

- ऊर्जा उत्पादन में कोयले का सर्वाधिक प्रयोग
- ऊर्जा के प्राथमिक स्रोतों के रूप में जलने वाली लकड़ी एवं पशुधन से प्राप्त जैव ईंधन का उपयोग
- भूमिगत संसाधनों का अत्यधिक दोहन
- संगठित कचरे एवं अपशिष्ट के उचित निस्तारण की सेवाओं में कमी
- मल-जल उपचार संचालन में कमी
- बाढ़ नियंत्रण एवं मानूसन जल निकासी की व्यवस्था में कमी
- नदियों में मल एवं कूड़ा-कचरा वाहित करना
- शादी या उत्सव के दौरान उच्च ध्वनि यंत्रों का प्रयोग, गाड़ियों के हॉर्न, पटाखों आदि का प्रयोग रेडियोएक्टिव रिसाव, रसायन लेपित धार्मिक मूर्तियों का नदी-सरोवरों में विसर्जन
- गाड़ियों से निकले धुएं, फैक्टरियों आदि से वायु, जल एवं मृदा प्रदूषण
- हाल ही के कुछ सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि अरब के रेगिस्तान भी भारत में प्रदूषण के कारण हैं।

प्रदूषण रोकने के लिए शासन द्वारा उठाए जाने वाले अनिवार्य कदम

- प्लास्टिक पर पूर्णत: प्रतिबंध
- विभिन्न प्रकार के अपशिष्टों का उचित निस्तारण
- पर्यावरणीय नियमों की दृढ़तापूर्वक लागू करना एवं उल्लंघन करने वाले पर दण्ड का प्रावधान
- ज्यादा से ज्यादा वृक्षारोपण पर बल, सड़कों एवं रेल पटरियों के किनारे हरित पट्टियों का निर्माण
- कम्पनियों एवं उद्योगों के अपशिष्ट निस्तारण एवं पर्यावरणीय उल्लंघन से संबंधित कड़े निर्देश
- जल की बर्बादी रोकना एवं जल संग्रहण पर कार्य
- यातायात प्रबंधन में पर्यावरणीय नियमों की अनदेखी पर कड़े प्रावधान एवं पब्लिक यातायात
- अक्षय ऊर्जा उत्पादन पर जोर तथा कार्बन उत्सर्जन कम करना
- पर्यावरणीय खतरों के प्रति जनता को ज्यादा से ज्यादा जागरूक बनाना
- जल संचयन तथा भूमिगत जल संचयन को बढ़ावा

जनता द्वारा स्वैच्छिक रूप से उठाए जाने वाले कदम

- जैव कचरा एवं प्लास्टिक कचरा दोनों को अलग-अलग कूड़ेदान में डालें।
- प्लास्टिक का कम से कम प्रयोग करें और कोशिश करें कि इस्तेमाल हुई प्लास्टिक को रिसाइकिल केन्द्र तक पहुंचाएं।

- ग्रीन हाउस गैस उत्पन्न करने वाले उपकरणों का कम से कम उपयोग करें।
- ज्यादा से ज्यादा वृक्षारोपण करें।
- वर्षाजल का संचयन करें व जल की बर्बादी न करें।
- निजी वाहन की जगह सार्वजनिक वाहन का प्रयोग करें।
- सार्वजनिक स्थलों पर स्वच्छता का ध्यान रखें।
- अपने पड़ोसियों एवं सगे-संबंधियों को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाएं।
- शौचालयों का प्रयोग।

भारत के पर्यावरण वैज्ञानिकों का मानना है कि भारत के वायु प्रदूषण, मृदा अपरदन आदि प्रदूषणों से काफी हद तक राहत के लिए भारत के कुल भूमि के 33 प्रतिशत पर वनाच्छादन आवश्यक है। परन्तु, वर्तमान परिदृश्य में लगभग 24 प्रतिशत (भारत वन रिपोर्ट-2017) भूमि वनाच्छादित है। ध्वनि प्रदूषण को रोकने के लिए सरकार ने ध्वनि की तीव्रता व समय निर्धारित कर दी है। इस प्रकार के अन्य कदम सरकार द्वारा उठाए जा रहे हैं परन्तु वर्तमान में जिस तेजी से प्रदूषण बढ़ रहा है, उसके हिसाब से सरकार द्वारा उठाए गए कदम काफी नहीं हैं। इसके लिए बड़ी संख्या में जनभागीदारी की भी आवश्यकता है।

प्र. अन्य देशों की तुलना में, भारत अलवण जल संसाधनों से सुसंपन्न है। समालोचनापूर्वक परीक्षण कीजिए कि क्या कारण है कि भारत इसके बावजूद जलाभाव से ग्रसित है? वैज्ञानिक प्रबंधन तथा तकनीकी का इस समस्या के निदान में क्या योगदान हो सकता है? व्याख्या कीजिए।

Key to Answer

अलवणीय जल के संदर्भ में भारत की स्थिति की चर्चा करें। उन कारणों को भी बताएं जिनके कारण मीठे पानी की समस्या से जूझना पड़ रहा है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी इस समस्या को किस हद तक कम कर सकती है? चर्चा कीजिए।

उत्तर- भूमंडल पर उपलब्ध समग्र जल संसाधनों का 97.5% भाग समुद्रों में खारे जल के रूप में उपलब्ध है, जबकि केवल 2.5% भाग ही मीठा पानी है। उसका भी 2/3 हिस्सा हिमनद और ध्रुवीय क्षेत्रों में हिम चादरों और हिम टोपियों के रूप में जमा है। शेष पिघला हुआ मीठा पानी मुख्यतः जल के रूप में पाया जाता है। भारत अपनी प्राकृतिक बनावट के अनुसार अन्य देशों की तुलना में प्राकृतिक संसाधन संपन्न देश है।

हिमालय की स्थिति- उत्तर में हिमालय सदा बर्फ से घिरा रहता है। हिमालय के हिमनद से निकलने वाली सदानीरा नदियां अपने साथ प्रचुर मात्रा में मीठे जल का अपवहन करती हैं। इन नदियों के जल का उपयोग सिंचाई एवं रि-साइक्लिंग के द्वारा पेयजल के रूप में उपयोग किया जाता है।

मानसूनी वर्षा- भारत में मानसून अपने साथ प्रचुर मात्रा में समुद्री जल को लाकर संपूर्ण क्षेत्र पर वर्षा करता है। इन समुद्री जल का रिस कर धरातल में समा जाने से धरातलीय पानी का स्रोत ऊंचा बना रहता है जिनसे उत्तर भारत में पानी की किल्लत नहीं होती। राजस्थान एवं दिल्ली समेत पश्चिमी भारत में पानी की कमी का मूल कारण है- वर्षा की कम मात्रा व सदानीरा नदियों की कमी।

तीन तरफ से समुद्र की अवस्थिति

भारत के लिए यह वरदान से कम नहीं है कि उसके तीन तरफ समुद्र हैं। इन समुद्रों से वर्षा के लिए प्रचुर मात्रा में जल ग्रहण क्षेत्र मिल जाते हैं। खारे समुद्री जल का रि-साइकिल एवं प्यूरीफाइंग से भी पेयजल की समस्या को दूर करने में किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता।

इन जलीय संसाधनों की प्राकृतिक उपलब्धता के बावजूद भी संपूर्ण भारत में अलवणीय जल की

समस्या से रू-ब-रू होना पड़ता है। एक तरफ कुशल जल प्रबंधन का अभाव, तो दूसरी तरफ बढ़ती आबादी के कारण विकास के अन्य विकल्पों की खोज में जल प्रदूषण में वृद्धि भी मीठे जल की समस्या को बढ़ा देता है।

वर्तमान में जल प्रबंधन का कोई विकसित तंत्र नहीं है। वर्षाजल का अत्यधिक भाग बेकार चला जाता है, वहीं अत्यधिक सिंचाई वाले फसलों के लिए भारी मात्रा में भू-जल का दोहन किया जाता है, जिनसे भू-जल का स्तर कई राज्यों में काफी नीचे चला जाता है। नदियों के जल का रख-रखाव का भी कोई विकसित तंत्र का अभाव, स्थिति को और भयावह बना देता है। हिमालयी नदियों के जल का अत्यधिक भाग बिना उपयोग समुद्र में चला जाता है यदि जल प्रबंधन के द्वारा इन समस्याओं पर ध्यान दिया जाय तो स्थिति की गंभीरता से निजात पाना असंभव नहीं है।

एक तरफ सुनियोजित जल प्रबंधन का अभाव, तो दूसरी तरफ उपलब्ध जल का अत्यधिक हिस्सा भी प्रदूषित होता जा रहा है। उद्योग-धन्धों द्वारा अपशिष्ट का निस्तारण नदियों में होने के कारण नदियों का जल भी प्रदूषित हो रहा है। आर्सेनिक, कैडमियम, पारा जैसे हानिकारक रासायनिक तत्वों की उपस्थिति कई गंभीर बीमारियों को जन्म दे रही हैं। घरेलू कूड़े-कचरे एवं महानगरीय सीवेजों के कारण लगभग प्रत्येक महानगर की निकटवर्ती नदियां प्रदूषित होकर नये-नये रोगों को जन्म दे रही हैं।

देखा जाए तो भारत अलवणीय जल का सुसंपन्न देश है, इसके बावजूद कई कारणों से यहां पेयजल का अभाव है। स्थिति ऐसी है कि महानगरों में अगर बोतल वाले पानी की उपलब्धता खत्म हो जाए तो कोहराम की स्थिति पैदा हो जाएगी। ऐसे में उचित जल - प्रबंधन एवं वैज्ञानिक तकनीक से पेयजल समस्या से निपटा जा सकता है।

वाटर शेड द्वारा वर्षा के जल का संचय किया जा सकता है, जिसका उपयोग पेयजल एवं सिंचाई के लिए उत्तम है। ऐसे चीजों के इस्तेमाल पर भी बल देना होगा, जिनसे भू-जलीय स्तर पर कोई प्रभाव न पड़े। नवीन तकनीकों से ऐसे बीजों का निर्माण किया जा रहा है जिन्हें कम पानी की मात्रा में भी सहज उगाया जा सकता है। बहुद्देशीय जल परियोजना पर बल देना भी एक कारगर कदम होगा जिनसे पेयजल की समस्या से निपटा जा सके। इसी तरह उत्तम जलीय प्रबंधन को विकसित करना होगा जिनसे पानी की न्यूनतम मात्रा का क्षय हो सके। देश की कई कंपनियां ऐसे तंत्र को विकसित कर रही हैं जिनसे प्यूरीफाइंग हो सके। उस तकनीकों पर बल देना होगा, साथ ही उद्योगों के कचरे का निपटान एवं शहरी सीवेजों के लिए उचित तंत्र की आवश्यकता है करेंगी। अन्यथा देश जल की समस्या से जूझेगा ही, कई तरह की बीमारियां भी लोगों को संक्रमित करेंगी।

इस तरह, भारत अपनी बनावट के कारण अलवणीय जल से संपन्न देशों में से एक है, परन्तु उचित जल - प्रबंधन एवं रख-रखाव के अभाव के कारण भयंकर जल की समस्या से भी जूझ रहा है। आश्चर्य नहीं कि अन्य समस्याओं की तरह जलाभाव की समस्या से भी बेहतर प्रबंधन एवं वैज्ञानिक तकनीकों से निपटा जा सकता है, जिसमें जनभागीदारी की भी अहम भूमिका है।

Key to Remember

- हिमालय की स्थिति
- मानसूनी वर्षा
- समुद्र की अवस्थिति
- भारत में अलवणीय जल की समस्या के कारण
- वैज्ञानिक एवं तकनीकी निदान

प्र. बिहार राज्य में बढ़ती ऊर्जा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उन वैज्ञानिक प्रयासों का सुझाव दीजिए, जिन्हें आप लागू करना चाहेंगे।

Key to Answer

बिहार राज्य में ऊर्जा की आवश्यकता एवं उन वैज्ञानिक प्रयासों / गैर-परम्परागत स्रोतों की चर्चा कीजिए जो ऊर्जा की समस्याओं को दूर कर सकें।

उत्तर - समकालीन परिप्रेक्ष्य में बिहार के सर्वांगीण विकास हेतु ऊर्जा आवश्यक घटक हो गई है। राज्य के विभाजन के बाद बिहार में ऊर्जा आधारित संरचना के विकास में अनेक बाधाएं आती रही हैं। इन बाधाओं को दूर करने हेतु वैज्ञानिक प्रयास अभी तक संतोषजनक नहीं रहे हैं।

बिहार में कोयले तथा खनिज तेल पदार्थ की उपलब्धता पूर्णत: शून्य है। ताप विद्युत उत्पादन के लिए कोयले की संपूर्ण मात्रा भी झारखण्ड की खानों से प्राप्त होता है। इसके अलावा वांछित पेट्रोलियम संसाधन की प्राप्ति असम से पाइप लाइन के द्वारा होती है। जल विद्युत के लिए प्रचुर जल-संसाधन स्रोत हैं, लेकिन नदी के धरातल आकृति के अनुकूलता का अभाव है। वर्तमान में बिहार की विद्युत उत्पादन क्षमता मात्र 36% रह गई है। बिहार में प्रति व्यक्ति मात्र 16.7% विद्युत उपलब्ध है, जबकि अन्य राज्यों में इससे बहुत ज्यादा है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 1948 में विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम पारित हुआ, जिसके तहत राज्य स्तर पर विद्युत के समेकित विकास हेतु 'बिहार राज्य विद्युत परिषद्' का गठन 1 अप्रैल, 1958 ई. को हुआ। जबकि अन्य राज्यों ने इस अधिनियम का लाभ उठाकर 1949 से ही अपने यहां विद्युत परिषद् का गठन कर लिया था। अपने संयंत्र स्थापना में पिछड़ने से परियोजना लागत में भी भारी वृद्धि हुई और प्रारंभ से ही उत्पादन, वितरण और विद्युत मांग का अंतराल बना रहा। बिहार में ऊर्जा के संकट निम्न कारणों से हैं-

- बिहार में ऊर्जा के क्षेत्र में निजी निवेश नहीं होने के कारण इसका पर्याप्त विस्तार नहीं हो सका। विद्युत उत्पादन केन्द्रों में मशीनें पुरानी पड़ रही हैं। इनमें बदलाव की प्रक्रिया शुरू नहीं हो पाई है।

  विद्युत संकट का एक कारण सरकारी अधिकारी एवं राज्य विद्युत परिषद् की अकुशलता एवं अनियमितताओं का परिणाम है। नौकरशाही में लापरवाही आ जाने और राजनैतिक हस्तक्षेप बढ़ जाने से अकुशल प्रबंधन की स्थिति उत्पन्न हो गई। वित्तीय अभाव ने प्रबंधन की अकुशलता को और भी गंभीर बना दिया।
- बिहार में बिजली की चोरी भी एक बड़ी समस्या है। इसमें सरकारी राजस्व की हानि होती है। चोर बिजली के तार काट लेते हैं, जिससे काफी लम्बे समय तक विद्युत उत्पादन में रुकावट होती है।
- बिजली के वितरण एवं संरक्षण भी एक समस्या है जिसकी वजह से बिजली की अधिकांश मात्रा का क्षय हो जाता है।
- परंपरागत ऊर्जा स्रोतों तक पहुंच भी बिहार में एक महत्वपूर्ण समस्या है। तकनीकी अभाव के कारण प्रचुर संसाधन होते हुए भी लोगों को भू-तापीय विद्युत ऊर्जा पर ही निर्भर होना पड़ता है।

इन तमाम संकटों को दूर कर ही विद्युत ऊर्जा की कमी को पूरा किया जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है इन पर वैज्ञानिक प्रयास किए जाएं। इसके लिए कुछ प्रभावी कदम उठाए जाने की जरूरत है-

- राज्य में गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोतों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
- जहां अधिक विद्युत चोरी होती है, वहां विशेष निगरानी दल की व्यवस्था की जानी चाहिए। बिजली के तारों की चोरी रोकने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि तारों को जमीन के अन्दर से ले जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

- बायोगैस के प्रचुर संसाधन बिहार में मौजूद हैं, इस तकनीक को अपना कर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा दिया जाए।
- एक नियामक बोर्ड बनाकर विद्युत क्षेत्र को निजीकृत कर देना चाहिए तथा सुनिश्चित करना चाहिए कि निजी उद्यम पिछड़े क्षेत्रों एवं आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्तियों को रियायती दरों पर अपने विद्युत केन्द्रों से बिजली बांटे जाएं।
- अगनूर परियोजना, कलेर (अरवल), त्रिवेणी संयोजक परियोजना, ओबरा (औरंगाबाद), डेलाबाग लघु परियोजना, डेहरी (रोहतास), जयनगर-नोखा लघु परियोजना, नोखा (रोहतास) आदि परियोजनाएं बिहार में कार्यशील हैं, आवश्यकता है इन परियोजनाओं की क्षमता को बढ़ाना एवं उसकी निगरानी करना। इसके अलावा अन्य नदियों पर जल-विद्युत के स्रोत तलाशे जाएं जिनसे पन- बिजली परियोजना का और अधिक विकास हो सके।

उपर्युक्त सुधारों से आवश्यक ऊर्जा के अभाव को पूरा करने में हल खोजा जा सकता है। आवश्यकता है सरकार की निष्ठा एवं आमजन की भागीदारी की, जिनसे बिहार संवृद्धि की राह पर तरक्की कर सके।

Key to Remember

- परंपरागत ऊर्जा स्रोतों की जगह नवीन वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की चर्चा करें।
- विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 की खामियां एवं खूबियां।
- बिहार राज्य विद्युत परिषद् का गठन 1 अप्रैल, 1958 ई. के नवीकरण पर बल।

प्र. भारत में भूमंडलीकरण (ग्लोबलाइजेशन) के सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रभावों की गंभीरतापूर्वक विवेचना कीजिए। विज्ञान तथा तकनीकी नकारात्मक प्रभावों को कैसे कम कर सकते हैं? व्याख्या कीजिए।

Key to Answer

भूमण्डलीकरण के सकरात्मक एवं नकरात्मक पहलू को लिखें। उन वैज्ञानिक एवं तकनीकी पहलुओं की चर्चा कीजिए जिनसे भूमण्डलीकरण के प्रभाव को कम किया जा सके।

उत्तर - वैश्वीकरण का उद्देश्य अपनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को संसार की अर्थव्यवस्था के साथ जोड़ना है। यह स्वतंत्र एवं मुक्त अंतर्राष्ट्रीय व्यापार दर्शन पर आधारित है। वैश्वीकरण ने अब संसार के अनेक देशों को आपसी व्यापारिक समझौते कराने की प्रक्रिया से मुक्त कर दिया है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि तुलनात्मक मूल्य पर उच्चकोटि की वस्तुएं ही टिक सकती हैं। ये ऐसे दो कारक हैं जिनके लिए विकसित प्रौद्योगिकी तथा भारी मात्रा में पूंजी की आवश्यकता होती है, किन्तु भारत में दोनों की कमी है। इसके सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रभाव पड़े हैं।

सकारात्मक प्रभाव

1. **एक जीवंत अर्थव्यवस्था-** इस नीति के आने के बाद सभी आर्थिक गतिविधियों के स्तर में वृद्धि हुई है। इसके परिणामस्वरूप स्पष्ट रूप से GDP की संवृद्धि दर में वृद्धि दर्ज की गई है।
2. **निजी विदेशी निवेश का प्रवाह** - भूमण्डलीकरण को अपनाने के बाद निजी विदेशी निवेश को बढ़ने का अधिक अवसर मिला है। इसके फलस्वरूप देश में न केवल पूंजी प्रवाहित होती है, बल्कि प्रौद्योगिकी या टेक्नॉलॉजी भी प्रभावित होती है।
3. **उपभोक्ता की प्रमुखता** - वैश्विक बाजारों से अनेकों वस्तुएं एवं सेवाएं उपभोक्ता को आसानी से उपलब्ध हैं। उत्पादन भी उपभोक्ता के चयन एवं पसंद के अनुरूप वस्तु उत्पादन को ढाल रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि उपभोक्ताओं के व्यय स्तर में वृद्धि हुई।
4. **मुद्रास्फीति पर रोक-** देश में वस्तुओं व सेवाओं के अधिक प्रवाह के फलस्वरूप कीमत वृद्धि की दर में रोक लगी है। कीमतों पर नियंत्रण मुद्रा की क्रय-शक्ति अथवा लोगों की वास्तविक

आय को क्षीण नहीं करता है। हालांकि 2007-08 से वैश्विक मंदी के कारण यह दर बढ़ता-घटता रहा है।

5. **राजकोषीय घाटे पर रोक-** 1991 से पूर्व यह 8.5% था। वैश्वीकरण की नीतियों के फलस्वरूप सरकारी राजस्व में वृद्धि हुई है। इसके परिणामस्वरूप 12वीं पंचवर्षीय योजना में राजकोषीय घाटे को GDP के 3.2% के आस-पास बनाए रखा गया है। साथ ही राजस्व घाटे को शून्य स्तर पर लाने का प्रयास किया जा रहा है।
6. **विदेशी विनिमय कोषों में वृद्धि** - विदेशी कोषों की कमी के कारण भी सरकार को इसे मजबूरन अपनाना पड़ा। इस नीति के फलस्वरूप आज विदेशी विनिमय कोष एक सुखद अवस्था में है। वर्तमान में भारत में विदेशी मुद्रा का भण्डार लगभ 365 अरब डॉलर तक पहुंच गया है।

नकारात्मक प्रभाव

1. **उपभोक्तावाद का प्रसार-** उपभोक्तावादी प्रवृत्ति के फैलाव के कारण भारतीय समाज पर ऋण का भार अधिकाधिक बढ़ गया है।
2. **कृषि की अवनति** - इस नीति के परिणामस्वरूप कृषि विकास गति में अवरोध उत्पन्न हो गया है, जो भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है।
3. **विकास प्रक्रिया का शहरीकरण-** इस नीति से शहरों के विकास में तीव्रता आयी है, जबकि गांव की स्थिति सामान्य ही रही है, इससे गांव और शहर की दूरी बढ़ने लगी है।
4. **सांस्कृतिक ह्रास-** इस नीति के कारण आर्थिक संपन्नता जीवन के अन्य सभी पैरामीटर पर हावी हो चुकी है। आज प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक रूप से स्वतंत्र एवं धनी होना चाहता है। वह इस बात को भूलता जा रहा है कि परिवार/समाज के लिए भी कोई जिम्मेदारी या दायित्व है। फलतः भारतीय संस्कृति का ह्रास हो रहा है।
5. **आर्थिक उपनिवेशवाद-** इस नीति के कारण भारतीय बाजार शोषित हो रहे हैं। इस प्रक्रिया में घरेलू उत्पादक अपनी कमजोर प्रतियोग, शक्ति के कारण सीमान्त हो रहे हैं अर्थात् पीछे की ओर जा रहे हैं।

यद्यपि विज्ञान एवं तकनीकी के आगमन से आर्थिक संवृद्धि में उछाल आया है परन्तु इसके नकारात्मक पक्ष को भी छोड़ा नहीं जा सकता। विज्ञान एवं तकनीकी से इसके उस पक्ष को सुधारना मुश्किल है जो मानसिकता से है। उपभोक्तावादी मानसिकता से संस्कृति का ह्रास उन पहलुओं में है जिन्हें तकनीकी नहीं सुधार सकती। परन्तु ऐसे तनकीकों का आगमन भी संभव नहीं है, जिनसे संस्कृति का पश्चिमीकरण न हो। शिक्षा एवं जन-जागरूकता ही इस पक्ष के लिए कारगर कदम हो सकते हैं। फिर भी जरूरी है कि नकारात्मक पक्ष की अवहेलना किए बिना आर्थिक संवृद्धि दर भी बढ़े। इस पर विचार होने जरूरी हैं।

प्र. अपने देश में ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोतों की समस्या की विवेचना करें। कार्बन क्रेडिट क्या है? देश के आर्थिक विकास के लिए कितना वैश्विक उष्माकरण (Global Warming झेला जा सकता है?

उत्तर- हमारी वर्तमान ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति मुख्यतः परंपरागत स्रोतों से ही होती है लेकिन जीवाश्म ईंधनों के सीमित भंडार एवं जल-विद्युत एवं नाभिकीय ऊर्जा के सीमित उत्पादन क्षमता के कारण ऊर्जा के कुछ गैर-परंपरागत स्रोतों के विकास की आवश्यकता है। ऊर्जा के ये स्रोत सामान्यतः नवीकरणीय हैं एवं सर्वसुलभ हैं। गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोतों के रूप में सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोमास, भू-तापीय ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, समुद्र तरंग ऊर्जा, हाइड्रोजन ऊर्जा, बायोडीजल •

आदि हैं। इनमें सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोगैस, लघु पनबिजली का उपयोग किया जा रहा है। शेष गैर-परंपरागत स्रोत अभी प्रयोग एवं परीक्षण के दौर में हैं। जिन स्रोतों का प्रयोग किया जा रहा है, उनका विकास भी पर्याप्त मात्रा में नहीं हो सका है तो इसका कारण कुछ समस्याएं हैं, जो निम्नवत् हैं -

1. भारत में गैर-परंपरागत ऊर्जा कार्यक्रम में अनुसंधान की गति धीमी है। ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों पर ही विशेष ध्यान दिया जा रहा है। केन्द्र स्तर पर नाभिकीय ऊर्जा हेतु जिस तरह की सक्रियता दिखाई जा रही है, उतनी सक्रियता एवं धन निवेश सं गैर परंपरागत स्रोतों का काफी विकास हो सकता है, जो स्थायी एवं सर्व सुलभ होगा। अनुसंधान के अभाव में ये स्रोत काफी महंगे साबित हो रहे हैं। अतः सरकार द्वारा इसके विकास को गंभीरता से न लेना इसकी सबसे बड़ी समस्या है।
2. कुछ गैर-परंपरागत स्रोतों की एक बड़ी समस्या दुर्गम स्थानों में इनकी उपलब्धता है। भू-गर्भीय ऊर्जा, समुद्री-ताप ऊर्जा. ज्वारीय ऊर्जा आदि में प्रचुर संभावना होने के बावजूद इनके अनुसंधान की गति धीमी है। पुनः ये अनेक स्थानों में बिखरे पड़े हैं। कहीं-कहीं संभावना है, परंतु लागत के अनुपात में उत्पादन कम होने की समस्या है। अतः इनके विकास के लिए ज्यादा तत्परता नहीं दिखाई जाती।
3. इन स्रोतों के विकास में भ्रष्टाचार भी बाधक है। पंचायतों द्वारा स्ट्रीट लाइट के लिए सौर-प्लेटों की खरीद में भारी भ्रष्टाचार होता है। आबंटित धन का लगभग तीसरा अथवा चौथा भाग इन उपकरणों को खरीदने में व्यय किया जाता है। बाकी पैमा पंचायत-नेताओं, अधिकारियों एवं ठेकेदारों द्वारा गोल कर लिए जाते हैं। ऐसे में ये सस्ते उपकरण जल्द ही खराब हो जाते हैं और बाद में आकलन किया जाता है कि ये स्रोत ज्यादा कारगर नहीं है जमीनी स्तर पर ऐसे भ्रष्टाचार बायोगैस प्लांट आदि में भी होते हैं।

कार्बन क्रेडिट- क्योटो प्रोटोकॉल (1997) के बाद पूरी दुनिया में उद्योगों को कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) गैस के उत्सर्जन में कटौती के लिए प्रोत्साहित करने के लिए कार्बन क्रेडिट का प्रावधान किया गया। कार्बन क्रेडिट ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए उन्हें मौद्रिक रूप देने का तरीका है। सर्वप्रथम सरकारी नियामक एजेंसी उद्योगों के लिए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन की सीमा तय करती है। यदि कोई उद्योग, इकाई निर्धारित सीमा से कम कार्बन उत्सर्जन करती है तो उस उद्योग- इकाई को कार्बन क्रेडिट मिलता है जिसे बेचकर वह धन कमा सकती है तथा सीमा से अधिक कार्बन उत्सर्जन करने वाली औद्योगिक इकाई कार्बन क्रेडिट हासिल करने वाली औद्योगिक इकाई से कार्बन क्रेडिट खरीदती है। आदित्य बिड़ला ग्रुप की सीमेंट कंपनी ग्रासीम इंडस्ट्रीज विश्व की पहली सीमेंट कंपनी बन गई है जिसने अपने कार्बन क्रेडिट को यूरोप में बेचकर धन अर्जित किया है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रति टन कार्बन क्रेडिट की कीमत 15-20 डॉलर है।

वर्तमान आर्थिक विकास का ढांचा परंपरागत ऊर्जा संसाधनों पर निर्भर है एवं परंपरागत ऊर्जा संसाधन (कोयला, पेट्रोलियम) ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के लिए मुख्यतया जिम्मेदार हैं। ग्रीन हाउस गैसों ने विश्व के तापमान को काफी बढ़ा दिया है। भविष्य में इसके गंभीर परिणामों की आशंका है। ऐसे में जब आर्थिक विकास को जारी रखना पूरे विश्व खासकर भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले विकासशील देश के लिए मजबूरी है, तो हमें ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोगैस, बायोडीजल इत्यादि के विकास पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जिससे हमारी दीर्घकालिक ऊर्जा आवश्यकता पूरी होगी, वहीं आर्थिक विकास भी अबाध गति से जारी रहेगी।

Key to Remember

- गैर-परंपरागत स्रोत-सौर/पवन/भू-तापीय / ज्वारीय/समुद्र, तरंग / हाइड्रोजन ऊर्जा, बायोमास, बायोडीजल।

- गैर-परंपरागत स्रोतों की समस्याएं-
    - अनुसंधान की कमी
    - भौगोलिक समस्या (कुछ गैर-परंपरागत स्रोत - भू-गर्भीय, ज्वारीय ऊर्जा आदि में अनुसंधान संबंधी समस्या)

कार्बन क्रेडिट

- क्योटो प्रोटोकॉल (1997) के बाद कार्बन क्रेडिट का प्रावधान किया गया।
- कार्बन क्रेडिट ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए उन्हें मौद्रिक रूप देने का तरीका है।
- यदि कोई उद्योग इकाई निर्धारित सीमा से कम कार्बन उत्सर्जन करती है, तो उस इकाई को कार्बन क्रेडिट मिलता है जिसे बेचकर वह धन कमा सकती है।

पर्यावरणीय प्रदूषण

प्र. पर्यावरण प्रदूषण और देश के आर्थिक विकास के बीच क्या संबंध है? ये दर्शाइये कि पर्यावरण संरक्षण नियमों का 'तथाकथित' विकास के लिए त्याग अत्यंत कष्टदायी होगा।

उत्तर - वर्तमान दौर के आर्थिक विकास की अवधारणा पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ाने वाली है। यद्यपि उच्च - प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर इस स्थिति से बचा जा रहा है/ बचा जा सकता है। पर्यावरण प्रदूषण एवं देश के आर्थिक विकास के बीच संबंध को निम्नलिखित पंक्तियों के माध्म से से समझा जा सकता है-

- विकास के लिए पर्यावरण प्रदूषण
- आर्थिक विकास के कारण पर्यावरण प्रदूषण

उपर्युक्त बातें आर्थिक विकास के संबंध में नकारात्मक सोच को दर्शा सकती हैं, परंतु वास्तविकता यही है। आज जो भी देश आर्थिक दृष्टिकोण से उन्नत हो रहा है, वहां पर्यावरण प्रदूषण का स्तर उतना ही बढ़ता जा रहा है। जो देश आर्थिक विकास की दृष्टिकोण से उन्नत हैं, वास्तव में उन्होंने उतना ही ज्यादा पर्यावरण को प्रदूषित किया है। आर्थिक विकास के लिए हमें क्या करना चाहिए? इसके लिए उद्योगों का विकास करना, अपनी कृषि को उन्नत अवस्था में लाना, अपने आधारभूत ढांचे का विकास करना आदि प्रमुख हैं। उद्योग लगाने के लिए जमीन चाहिए जो जंगलों को साफ कर प्राप्त की जाएगी। उद्योगों की ऊर्जा आवश्यकता के लिए बिजली उत्पन्न करना होगा जो या तो कोयले से प्राप्त करेंगे या जल-विद्युत उत्पादन करेंगे अथवा नाभिकीय ऊर्जा के रूप में अन्य विकल्प अपनाएंगे। लेकिन ये सभी साधन पर्यावरण को प्रदूषित करने वाले हैं। यद्यपि नाभिकीय ऊर्जा पर्यावरण हितैषी दिखती हो परंतु विभिन्न कारणों से नाभिकीय संयंत्रों में विस्फोट अथवा खराबी आने पर ये सबसे ज्यादा पर्यावरण को हानि पहुंचाते हैं। हाल ही में जापान के फुकुशिमा नाभिकीय संयंत्र में हुई दुर्घटना इसका ज्वलंत उदाहरण है। उसी प्रकार कृषि विकास के लिए अपनाए जाने वाले उर्वरक एवं कीटनाशक, जल एवं भूमि प्रदूषण के लिए उत्तरदायी हैं। उद्योगों के विकास से परिवहन साधनों का विकास होगा। इन कारखानों एवं गाड़ियों से निकलने वाली हानिकारक गैसें वायु प्रदूषण के मूल कारक हैं। इससे वैश्विक तापमान भी तेजी से बढ़ रहा है। अतः आर्थिक विकास जैसे-जैसे होगा, पर्यावरण प्रदूषण का स्तर उतना ही ज्यादा होगा। यद्यपि पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक संगठन लगे हुए हैं जो आर्थिक विकास के लिए होने वाले पर्यावरण प्रदूषण का विरोध करते हैं। सर्वोच्च न्यायालय भी इस मामले में सक्रिय है।

पर्यावरण प्रदूषण एवं आर्थिक विकास के बीच एक और संबंध है- आर्थिक विकास के कारण पर्यावरण प्रदूषण। आज हम जैसे-जैसे उन्नत होते जा रहे हैं, वैसे-वैसे पर्यावरण की अनदेखी कर रहे हैं। आर्थिक संपन्नता के कारण शहरों की आबादी तेजी से बढ़ी है जिसके कारण अधिकाधिक आधारभूत ढांचे का निर्माण, अधिक से अधिक परिवहन साधनों की आवश्यकता हो रही है। कई नई कालोनियां बसाई गई हैं जिसके कारण जंगलों का सफाया किया गया है। आर्थिक विकास के साथ-साथ उद्योगों के लिए एवं घरेलू उपयोगों के लिए ऊर्जा की आवश्यकता बढ़ी है। ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए नदियों पर बांध बनाए जा रहे हैं। नाभिकीय ऊर्जा के लिए बड़े-बड़े नाभिकीय संयंत्र लगाए जा रहे हैं जो भविष्य में पर्यावरण के लिए खतरनाक साबित हो सकते हैं।

आर्थिक-विकास के लिए आज पर्यावरण संरक्षण के नियमों का उल्लंघन किया जा रहा है, जो चिंता की बात है। सबसे बड़ी बात पर्यावरण संरक्षण नियमों का उल्लंघन विभिन्न निजी संस्थानों के साथ ही सरकारी स्तर पर भी हो रहा है। यदि हम तथाकथित

विकास के लिए पर्यावरण के प्रति सचेत न हुए तो इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं, जिसे निम्न बिंदुओं से समझा सकता है-

1. अत्यधिक औद्योगिक विकास के कारण वायु में कार्बन मोनोऑक्साइड (CO), कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2), हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S), सल्फर डाईआक्साइड (SO_2) आदि गैसों का स्तर बढ़ रहा है जो पृथ्वी के तापमान वृद्धि, ध्रुवीय - प्रदेशों के बर्फ के तेजी से पिघलने तथा स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न समस्याओं आदि के लिए जिम्मेदार हैं।
2. उद्योगों की स्थापना तथा बढ़ते शहरीकरण के लिए वनों का विनाश किया जा रहा है। वनों के विनाश के कारण भूस्खलन, अनियमित बाढ़, मृदा कटाव, वर्षा की कमी, वन्य प्राणियों एवं औषधीय गुणों वाले पौधों की कमी आदि समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।
3. अत्यधिक उर्वरक एवं कीटनाशकों के प्रयोग से भूमि, जल एवं वायु प्रदूषित हो रहा है।
4. बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं के काण व्यापक पर्यावरणीय क्षति एवं लोगों के विस्थापन की समस्या उत्पन्न हुई है।
5. विकास की वर्तमान प्रक्रिया के कारण विभिन्न प्रकार के प्रदूषण फैल रहे हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।

अत: हम कह सकते हैं कि विकास की प्रक्रिया नियमित एवं संयमित होनी चाहिए, नहीं तो मानव का भविष्य खतरे में पड़ सकता है।

प्र. पेट्रोलियम तथा कोयले के प्रयोग से वायु दूषित हो जाती है। इस प्रदूषण को हम कैसे कम कर सकते हैं?

उत्तर- पेट्रोलियम तथा कोयले से निकलने वाले धुएं के कारण वायु में कार्बन-मोनोऑक्साइड (CO), कार्बन-डाईऑक्साइड (CO_2), हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S), सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2) आदि गैसों का स्तर बढ़ रहा है जो वायु प्रदूषण के प्रमुख कारक हैं। इस प्रदूषण को कम करने के लिए निम्नलिखित विधियों को अपनाया जा सकता है-

- **विद्युत उत्पादन के लिए कोयले की जगह अन्य प्रमुख स्त्रोत-** जल विद्युत एवं नाभिकीय ऊर्जा क्षेत्र को बढ़ावा दिया जा सकता है। ये पर्यावरण प्रदूषण कम करने में सहायक होंगे।
- ऊर्जा उत्पादन के गैर-परंपरागत तकनीकों के अनुसंधान एवं विकास पर जोर देकर इन्हें अपनाना चाहिए। ये स्त्रोत हैं- पवन-ऊर्जा, सौर-ऊर्जा, भू-गर्भीय ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, बायो-गैस आदि। सरकार कई योजनाओं के तहत सौर-ऊर्जा, बायो-गैस आदि गांवों तक पहुंचाने का प्रयास कर रही है। इन गैर-परंपरागत ऊर्जा स्त्रोतों में अधिक से अधिक निवेश की आवश्यकता है। इनमें निजी क्षेत्र की भागीदारी तथा FDI के भी प्रयास किए जाने चाहिए।
- ऊर्जा संरक्षण के लिए समाज में जनजागरूकता आवश्यक है। लोगों को ऊर्जा के महत्व के बारे में समझाना चाहिए। इसके तहत सरकारी तथा गैर-सरकारी स्तर पर प्रयास आवश्यक है। CFL बल्ब के प्रयोग को बढ़ावा देकर एवं ऐसी अन्य तकनीकों का विकास आवश्यक है।
- सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देकर वायु प्रदूषण के साथ ही ध्वनि-प्रदूषण को भी रोका जा सकता है।
- वन वायु प्रदूषण को कम करने में सबसे ज्यादा सहायक होते हैं। प्रथमतः वन को कटने से रोका जाना चाहिए। सरकार इसके लिए कड़े कानून लाए, साथ ही वृक्षारोपण की संस्कृति विकसित कर हम एक हरे भरे एवं वायु प्रदूषण रहित पृथ्वी का निर्माण कर सकते हैं।

प्र. भारत में वातावरणीय प्रदूषण किस प्रकार मानव स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है?

आधुनिक प्रौद्योगिकी के द्वारा किस प्रकार प्रदूषण को कम किया जा सकता है?

Key to Answer

प्रश्न के प्रथम भाग के लिए प्रश्न संख्या 4 (42वीं BPSC/1999: पर्यावरणीय प्रदूषण) का उत्तर देखें।

उत्तर - वातावरणीय प्रदूषण को कम करने के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी द्वारा निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं

1. वाहनों में ईंधन के लिए प्रयुक्त पेट्रोल एवं डीजल की जगह CNG को अपनाया जा सकता है। राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में सार्वजनिक वाहनों के लिए यह अनिवार्य है। CNG सुविधाओं का विस्तार करके प्रदूषण कम किया जा सकता है।
2. आधुनिक तकनीकों का प्रयोग करके ऊर्जा के गैर-परंपरागत स्रोता, जैसे सौर ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भू-तापीय ऊर्जा आदि का विकास किया जा सकता है। ये स्त्रोत हानिकारक गैसे नहीं छोड़ते, साथ ही कभी न खत्म होने वाले प्राकृतिक स्रोत हैं।
3. कृषि में प्रयुक्त उर्वरकों, कीटनाशकों के प्रयोग के स्थान पर जैव-तकनीकी के माध्यम से ऐसे बीज तैयार किए जा सकते हैं जो कीटनाशीमुक्त हों, साथ ही उर्वरकों की कम आवश्यकता वाले हों।
4. ऊर्जा उत्पादन के लिए नाभिकीय ऊर्जा पर्यावरण हितैषी है। इसके उत्पादन एवं प्रयोग में धुआं या प्रदूषित गैसों का उत्सर्जन नहीं होता।
5. पॉलीथीन, एस्बेस्टस आदि प्रदूषक पदार्थों के स्थान पर ऐसे विकल्प विकसित किए जा सकते हैं जो पर्यावरण प्रदूषक न हों। दिल्ली एवं कुछ अन्य राज्यों में पॉलीथीन प्रतिबंधित कर दिया गया है एवं जूट के बने थैले आदि का प्रयोग किया जा रहा है। ऐसे प्रतिबंध पूरे देश में लगना चाहिए।
6. कल-कारख़ानों से निकलने वाले अवशिष्ट पदार्थों का उपचार कर उन्हें उपयोग लायक बनाया जा सकता है।

प्र. पर्यावरण प्रदूषण से आप क्या समझते हैं? विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों का वर्णन करें। भारत मानव के स्वास्थ्य पर उनके प्रभावों का भी वर्णन करें।

उत्तर - जैव और अजैव कारकों से निर्मित पर्यावरण, मानव के अनियंत्रित क्रियाकलाप से जब असंतुलित हो जाता है तो इस असंतुलित अवस्था को पर्यावरण प्रदूषण कहते हैं। आज मानव ने भौतिक विकास के लिए प्रकृति का मनमाने एवं अनियंत्रित ढंग से दोहन किया है। जंगलों का व्यापक पैमाने पर विनाश हुआ है। कारखानों एवं गाड़ियों से निकलने वाले धुएं पर्यावरण के लिए हानिकारक हैं। इनमें पाये जाने वाले कुछ रसायन, जैसे CFC आदि से पर्यावरण के ओजोन (O) स्तर का क्षय हुआ है एवं पृथ्वी पर पराबैंगनी किरणों का प्रभाव बढ़ा है। आज पर्यावरण प्रदूषण के कारण वैश्विक तापमान (Global Warming) अनियोजित ढंग से बढ़ रहा है। पर्यावरण प्रदूषण पर्यावरण के विभिन्न घटकों-वायु, जल, मृदा आदि को प्रदूषित कर रहा है। पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख प्रकार निम्न हैं-

1. **वायु प्रदूषण-** वायु नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, ऑर्गन, कार्बन-डाईऑक्साइड आदि गैसों का एक संतुलित मिश्रण है, लेकिन जब विभिन्न मानवीय क्रियाओं के कारण यह संतुलन बिगड़ जाता है तो वायु प्रदूषण की स्थिति उत्पन्न होती है। वायु प्रदूषण का कारण कल-कारखाने, गाड़ियों से निकलने वाले धुएं, कोयला, पेट्रोलियम पदार्थों के धुएं, A. C. एवं रेफ्रिजरेटरों का व्यापक प्रयोग आदि है। इनके कारण वायु में कार्बन मोनोऑक्साइड (CO), कार्बन डाईऑक्साइड (CO), हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S), सल्फर डाईऑक्साइड (SO) आदि गैसों का स्तर बढ़ रहा है जो पृथ्वी के तापमान वृद्धि,

ध्रुवीय प्रदेशों के बर्फ के तेजी से पिघलने, स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न समस्याओं के लिए जिम्मेवार हैं।

वायु के प्रदूषणकारी तत्व और और स्वास्थ्य पर उनका दुष्प्रभाव

प्रदूषणकारी तत्व	दुष्प्रभाव
(a) कार्बन मोनोऑक्साइड	केन्द्रीय नर्वस सिस्टम पर प्रतिकूल प्रभाव, स्नायु दुर्बलता, दृष्टि शक्ति क्षीण होना आदि।
(b) सल्फर डाईऑक्साइड	दमा का आक्रमण, फुसफुस की कार्यक्षमता में कमी।
(c) धूल-कण	विषाक्त और कैंसर।
(d) सीसा	लीवर और किडनी की क्षति बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव, प्रजनन क्षमता की हानि।

2. **जल - प्रदूषण** - जल- प्रदूषण से तात्पर्य जल में विषाक्त तत्वों का समावेश तथा इससे जल के गुणों में अवांछित परिवर्तन है। जल-प्रदूषण का प्रमुख कारण - औद्योगिक कचरे, घरेलू अवशिष्ट पदार्थ, कृषि में रासायनिक व कीटनाशी पदार्थों का प्रयोग। जल-प्रदूषण के कारण भारत के अनेक नदियों का अस्तित्व संकट में आ गया है। इसमें गंगा एवं यमुना है जो भारतीय जनमानस की जीवन-रेखा है। जल प्रदूषण से जहां पीने के पानी का संकट होता जा रहा है वहीं पीलिया, पेचिस, टायफाइड, अतिसार आदि बीमारियां फैल रही है। इसके अतिरिक्त मलेरिया, इन्सेफलाइटिस, फाइलेरिया, डेंगू आदि भी होने की संभावना बढ़ जाती है।

3. **ध्वनि-प्रदूषण** - विभिन्न कारणों से होने वाले तीव्र एवं अनियंत्रित शोर ध्वनि प्रदूषण के कारण हैं। परीक्षणों के अनुसार 30 डेसीबल से कम तीव्रता वाली ध्वनि का पर्यावरण पर दुष्प्रभाव पड़ता है जो पर्यावरण प्रदूषण का कारण बनता है। शहरों का तीव्र विकास ध्वनि प्रदूषण का एक बड़ा कारण है। ध्वनि प्रदूषण के कारण मनुष्य को विभिन्न रोग, जैसे- अनिंद्रा, हृदय रोग, मस्तिष्क रोग, चिड़चिड़ापन, श्रवणदोष आदि हो सकते हैं।

4. **भूमि-प्रदूषण** - कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए अनियंत्रित ढंग से उर्वरकों, कीटनाशकों, खरपतवारनाशकों आदि का प्रयोग, साथ ही उद्योगों के ठोस एवं द्रव अवशिष्ट पदार्थ भूमि प्रदूषण के कारण हैं। इसे रोकना आवश्यक है, क्योंकि इससे कृषि के साथ ही अन्य चीजें प्रभावित होंगी।

5. **रेडियोधर्मी प्रदूषण-** मनुष्य द्वारा परमाणु ऊर्जा, एक्स-रे आदि का अत्यधिक प्रयोग पर्यावरण में रेडियोधर्मी प्रदूषण पैदा करता है। परमाणु परीक्षणों के कारण वायुमंडल एवं मृदा में काफी मात्रा में रेडियोधर्मी कण मुक्त हो जाते हैं। ये रेडियोधर्मी कण प्रायः वर्षा के साथ भूमि के अंदर पहुंचकर जल एवं मृदा के माध्यम से पौधों में चले जाते हैं। भोजन द्वारा ये पदार्थ शरीर में प्रवेश करते हैं जो अनेक बीमारियों का कारण बनता है।

Key to Remember

जैव-अजैव कारकों से निर्मित पर्यावरण, जब मानव के अनियंत्रित क्रियाकलाप से असंतुलित हो जाता है तो इस असंतुलित अवस्था को पर्यावरण प्रदूषण कहते हैं।

वायु प्रदूषण

- **कारण** - CO, CO,, H,S, SO, आदि गैसों का वायु में स्तर बढ़ना
- **प्रभाव** - स्वास्थ्य संबंधी समस्या, वैश्विक तापमान में वृद्धि

जल-प्रदूषण

- **कारण -** औद्योगिक कचरा, कृषि में अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों/कीटनाशकों का प्रयोग आदि
- **प्रभाव -** पीलिया, पेचिस, टायफाइड, अतिसार जैसी बीमारियां, जल-संकट आदि

ध्वनि-प्रदूषण -

- **कारण -** तीव्र एवं अनियंत्रित स्त्रोत
- **प्रभाव -** अनिंद्रा, हृदय रोग, मस्तिष्क रोग, चिड़चिड़ापन, श्रवणदोष आदि

भूमि- प्रदूषण -

- **कारण -** कृषि में अनियंत्रित मात्रा में उर्वरकों, कीटनाशकों, खरपतवार नाशकों आदि का प्रयोग
- **प्रभाव -** कृषि के साथ ही अन्य चीजें प्रभावित

रेडियोधर्मी प्रदूषण -

- **कारण -** रेडियोधर्मी पदार्थों का प्रयोग
- **प्रभाव -** स्वास्थ्य संबंधी समस्या

कृषि

प्र. बृहत कृषि (Large Scale Agriculture) में व्यवहार होने वाले उर्वरकों तथा कीटनाशियां क्या हैं?

उत्तर- वृहत् कृषि में व्यवहार होने वाले उर्वरक मुख्यतः नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटैशियम (NPK) हैं। इनका प्रयोग एक निश्चित अनुपात में किया जाना चाहिए। भारत के लिए यह अनुपात सामान्यतः 4: 2:1 है, किन्तु समग्र रूप से यह अनुपात विवाद में रहता है। 2005-06 में यह अनुपात 5.7 : 2.5 : 1 था। इनके अलावा आजकल जैव उर्वरक (Bio- Fertilizers), जैसे- हरी-खाद (Green-Mnure), एजोला (Azolla) आदि का प्रयोग भी बढ़ रहा है।

नाइट्रोजन उर्वरक

1. **यूरिया -** यूरिया में लगभग 46% नाइट्रोजन की मात्रा होती है। भारत में सबसे ज्यादा प्रयुक्त उर्वरक यूरिया ही है।
2. **कैल्शियम नाइट्रेट -** यह नाइट्रोजन का सबसे अच्छा उर्वरक है। बाजार में इसे 'नार्वेजियन साल्टपीटर' के नाम से जाना जाता है।
3. **कैल्शियम सायनामाइट-** नाइट्रोजन युक्त इस उर्वरक का प्रयोग खेत में बुआई के पूर्व करते हैं।
4. **अमोनिया सल्फेट-** यह आलू के फसल के लिए उपयुक्त उर्वरक है।

पोटैशियम-उर्वरक- पोटैशियम युक्त उर्वरकों के रूप में पोटैशियम क्लोराइड, पोटैशियम सल्फेट आदि का प्रयोग किया जाता है।

फॉस्फोरस-उर्वरक - फॉस्फोरस युक्त उर्वरकों के रूप में सुपर फॉस्फेट ऑफ लाइम, फॉस्फेटी धातुमल आदि का प्रयोग किया जाता है।

जैव-उर्वरक - जैव-उर्वरकों के मूल स्त्रोत जीवाणु, कवक एवं सायनो बैक्टीरिया होते हैं। ये उर्वरक वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण (Nitrogen - Fixation) तथा मृदा में स्थित फास्फोरस को अधिक घुलनशील बनाने में मदद करते हैं। नील हरित शैवाल, हरी खाद, एजोला आदि प्रमुख जैव उर्वरक हैं।

प्रमुख कीटनाशी - निकोटीन, फेरोमोंस, कोक्सीमिलिडम, सायरेफिड टाइकोग्रेमा, इपीपाइरोपस आदि प्रमुख कीटनाशी है।

Key to Remember

प्रमुख उर्वरक

- **नाइट्रोजन उर्वरक -** यूरिया, कैल्शियम नाइट्रेट, कैल्शियम सायनामाइट, अमोनिया सल्फेट
- **पोटैशियम उर्वरक -** पोटैशियम क्लोराइड, पोटैशियम सल्फेट,

- **फॉस्फोरस उर्वरक-** सुपर फॉस्फोरस ऑफ लाइम, फॉस्फेटी धातुमल
- **जैव उर्वरक-** नील हरित शैवाल, एजोला, हरी खाद
- **प्रमुख कीटनाशी-** निकोटीन, फेरोमोंस, कोक्सीमिलिडम आदि।

प्र. खेतीबाड़ी के क्षेत्र में भारत में क्या-क्या विकास हुआ है? व्याख्या करें- (क) जलस्रोत (ख) बीज का चुनाव

उत्तर- (क) जलस्रोत - भारतीय कृषि मुख्यतया वर्षाजल पर निर्भर है। लगभग 990 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई वर्षा जल से होती है। यह आंकड़ा कुल कृषियोग्य भूमि का लगभग 70 प्रतिशत है। इसके अलावा नहरें, कुएं, तालाब आदि सिंचाई के मुख्य स्रोत हैं। स्वतंत्रता के बाद देश में बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजनाओं का निर्माण किया जाने लगा एवं इससे निकली नहरें सिंचाई के प्रमुख स्रोत साबित हुए। दामोदर घाटी परियोजना (झारखंड, पं. बंगाल), भाखड़ा नांगल परियोजना (पंजाब), रिहंद बांध परियोजना उत्तर प्रदेश, हीराकुंड बांध परियोजना (उड़ीसा), मयूराक्षी परियोजना (पश्चिम बंगाल एवं झारखंड) आदि कुछ नदी घाटी परियोजनाएं हैं जिससे इन राज्यों के बड़े भाग में सिंचाई कार्य हो रहा है।

वर्तमान में भारत में कुछ नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रयोग सिंचाई के लिए हो रहा है जिनमें से प्रमुख हैं –

1. **ड्रिप सिंचाई (Drip Irrigation) —** इसे 'टपक सिंचाई' भी कहते हैं। इस प्रणाली में खेत में पाइपलाइन बिछा कर स्थान-स्थान पर नोजल लगाकर पौधों की जड़ों में सीधे बूंद-बूंद करके जल पहुंचाया जाता है। सिंचाई की यह विधि रेतीली मृदा, उबड़-खाबड़ खेत तथा बागों के लिए अधिक उपयोगी है।
2. **छिड़काव सिंचाई (Sprinkling Irrigation)** - इस विधि में पाइपलाइन द्वारा पौधों पर फव्वारों के रूप में पानी का छिड़काव किया जाता है। रेगिस्तानी क्षेत्रों के लिए यह विधि उपयुक्त है। कपास, मूंगफली, तंबाकू आदि के लिए यह विधि अपनाई जाती है।
3. **रेन वाटर हारवेस्टिंग (Rain Water Harvesting)-** वर्षा के पानी को आधुनिक विधियों से एकत्र किया जाता है ताकि वे भूमिगत जल में समा जाएं एवं भूमिगत जल का स्तर बना रहे।

(ख) बीज का चुनाव- साठ के दशक में हुई हरित क्रांति में उन्नत बीजों का सबसे ज्यादा योगदान था। मैक्सिको से आयातित गेहूं के उन्नत बीज लार्मा रोजा का भारतीय वैज्ञानिकों ने देशी किस्म सोनेरा के साथ क्रास कर सोनारा-64 नामक उच्च उत्पादक किस्म (HYV) तैयार की जो हरित क्रांति में महत्वपूर्ण साबित हुई।

1963 में राष्ट्रीय बीज निगम का गठन किया गया। इसके बाद 1966 में भारतीय बीज अधिनियम पारित किया गया। कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए संकरण पद्धति का प्रयोग कर उच्च उत्पादकता वाली किस्म (HYV) के बीज उत्पादित किए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त जैव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत बीज के प्राकृतिक जीन में परिवर्तन कर जीन संवर्द्धित (GM) बीजों का उत्पादन किया जा रहा है। संकरण पद्धति से तीन चरणों में उन्नत किस्म के बीज, जिसे क्वालिटी बीज कहते हैं, प्राप्त किया जाता है। ये तीन चरण हैं-

1. प्रजनक बीज (Breeders Seeds)
2. आधार बीज (Foundation Seeds)
3. प्रमाणित बीज (Certified Seeds)

इसके अलावा GM Seeds भी तैयार किए गए हैं जो कृत्रिम उपायों द्वारा बीजों के गुणों में फेरबदल करके प्राप्त किया जाता है। इनमें कम सिंचाई की आवश्यकता होती है तथा ये कीटरोधी होते हैं। पराजीनी बीज (Transgenic Seeds) एक अन्य उन्नत बीज है जिसमें कृत्रिम उपायों द्वारा बीज के जीन में किसी अन्य वनस्पति या जीव के जीन को मिलाकर विकसित किया जाता है। ये रोगरोधी तथा कीटरोधी होते हैं। साथ ही इनसे प्राप्त फसलों के रूप-रंग, स्वाद में भी इच्छित परिवर्तन किए जा सकते हैं।

Key to Remember

(क) प्रमुख बहुद्देश्यीय परियोजना (इनका प्रयोग सिंचाई कार्य हेतु किया जा रहा है।)

- दामोदर घाटी परियोजना (झारखण्ड, पश्चिम बंगाल)
- रिहंद बांध परियोजना (उत्तर प्रदेश)
- मयूराक्षी परियोजना (पश्चिम बंगाल एवं झारखंड)
- भाखड़ा नांगल परियोजना (पंजाब)
- हीराकुड बांध परियोजना (उड़ीसा)

सिंचाई की नवीनतम तकनीक

- ड्रिप सिंचाई (Drip Irrigation)
- रेन वाटर हारवेस्टिंग (Rain Water Harvesting)
- छिड़काव सिंचाई (Sprinkling Irrigation)

(ख) उत्तम बीजों के लिए स्थापित संगठन/ढांचा

- 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम की स्थापना।
- 1966 में भारतीय बीज अधिनियम पारित |
- संकरण पद्धति का उपयोग कर उच्च उत्पादकता किस्म (HYV) वाली बीज उत्पादित किए जा रहे हैं। इसके अलावा GM Seeds, Transgenic Seeds का विकास किया जा रहा है।

प्र. शुष्क भूमि खेती (Dry Land Agriculture) क्या है? भारत के लिए इसके महत्व की विवेचना कीजिए।

उत्तर - सामान्यतः 20 सेमी. अथवा इससे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में वैज्ञानिक विधियों एवं बीजों का प्रयोग कर जो कृषिकार्य किए जा रहे हैं, उसे ही शुष्क - भूमि कृषि (Dry Land Agriculture) कहते हैं। भारत में राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिमी उत्तर प्रदेश में इस विधि को अपनाया जाता है। इस विधि के अंतर्गत-

- भूमि की गहरी जुताई की जाती है ताकि नमी सुरक्षित रखी जा सके।
- पानी की कम आवश्यकता वाले फसलों को उगाया जाता है। जैसे- ज्वार, बाजरा, जौ आदि।
- सिंचाई के लिए ड्रिप सिंचाई, स्प्रींक्लर सिंचाई आदि विधियां अपनाई जाती हैं।
- जल संरक्षण पर जोर दिया जाता है, बांध बनाकर तथा मिट्टी के अवरोधक बनाकर वर्षा के पानी का संरक्षण किया जाता है। पक्के तल वाले नहरों का निर्माण भी किया जाता है।
- मिट्टी का संरक्षण किया जाता है। इसके लिए खेतों के किनारे वृक्षारोपण, सीढ़ीदार खेत आदि विधियां अपनाई जाती हैं।
- उन्नत बीजों का प्रयोग किया जाता है जो शुष्क भूमि में भी उग सकें एवं विकास कर सकें।

भारत के लिए शुष्क- भूमि कृषि पद्धति अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि देश का लगभग 12% भाग शुष्क क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इसके अंतर्गत गुजरात, राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र के क्षेत्र आते हैं। ये क्षेत्र ज्वार, बाजरा, दलहन, तिलहन एवं मोटे अनाजों के प्रमुख उत्पादक हैं जिन्हें जल की आवश्यकता कम पड़ती है। इस तकनीक से इन क्षेत्रों के गरीब एवं बदहाल किसानों को काफी फायदा मिला है। भारत में मानसून की अनिश्चितता एवं सिंचाई के उन्नत साधनों के अभाव ने शुष्क कृषि पद्धति के महत्व को और भी बढ़ा दिया है।

Key to Remember

- सामान्यतः 20 सेमी. अथवा इससे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में वैज्ञानिक विधियों एवं बीजों का प्रयोग कर जो कृषि कार्य किए जाते हैं, उसे शुष्क भूमि कृषि (Dry Land Agriculture) कहते हैं।
- क्षेत्र- राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, आन्ध्र-प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिमी उत्तर प्रदेश।
- ड्रिप सिंचाई, स्प्रींक्लर सिंचाई अपनाई जाती है।
- भूमि की गहरी जुताई की जाती है।
- जल संरक्षण पर जोर दिया जाता है।
- उन्नत बीजों का प्रयोग किया जाता है।
- कम पानी की आवश्यकता वाले फसलों-ज्वार, बाजरा, जौ आदि का उत्पादन।

प्र. बिहार राज्य में सिंचाई के कार्यों में प्रयोग होने वाली पारंपरिक तकनीक का परीक्षण कीजिए। इसमें सुधार लाने के लिए क्या कदम उठाये जाने चाहिए?

उत्तर - बिहार की कृषि मुख्यतः वर्षा पर निर्भर है एवं लगभग 49% भूमि पर ही सिंचाई की सुविधा प्राप्त है। राज्य में सिंचाई के लिए प्रमुख साधन निम्न हैं-

1. **नहर -** राज्य की प्रमुख नहरों में सोन, गंडक, कोसी, तिरहुत, सारण आदि प्रमुख हैं। इन नहरों से बिहार के कुल सिंचित भूमि के लगभग 30% भाग पर सिंचाई होती है।
2. **ट्यूबवेल-** राज्य की भूगर्भीय स्त्रोतों से सिंचाई का प्रमुख साधन ट्यूबवेल है जो राज्य की कुल सिंचाई क्षमता का लगभग 63% है। बिहार में भूगर्भीय जल संसाधन का भरपूर उपयोग नहीं हो सका है।
3. **कुआं-** राज्य में कुआं सिंचाई का प्रमुख परंपरागत साधन है जो सिंचाई के आधुनिक तकनीकों के बावजूद आज अधिकतर कृषकों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। यद्यपि कुल सिंचित क्षेत्र का मात्र 2-3% ही इस साधन की क्षमता है।
4. **तालाब -** तालाब भी सिंचाई के परंपरागत स्त्रोत हैं, जिससे मधुबनी, वैशाली, दरभंगा, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर आदि जिलों में कुछ मात्रा में सिंचाई होती है। कुल सिंचित क्षेत्र का लगभग 2% सिंचाई की क्षमता वाला यह स्रोत है।
5. सिंचाई के अन्य साधन आहर, पाईन, चौर आदि हैं जिनसे राज्य के कुछ भागों में सिंचाई कार्य हो रहे हैं।

बिहार में प्रयुक्त सिंचाई के वर्णित साधन / स्त्रोत में सुधार की आवश्यकता है ताकि अधिकतम कृषि भूमि सिंचाई क्षमता के अंतर्गत आ सके। इसके लिए ट्यूबवेल के लिए सरकार को विशेष प्रोत्साहन देना चाहिए, क्योंकि यह सिंचाई का सबसे सक्षम साधन है। इसका विस्तार कर कृषि की मानसून पर निर्भरता कम की जा सकती है। दूसरा नहरों की व्यवस्था दुरुस्त करनी होगी। बिहार में नदियों का जाल बिछा हुआ है। इन नदियों का समुचित उपयोग इनसे नहरों को निकाल कर कृषिकार्य के लिए किया जाना चाहिए। अन्य परम्परागत साधन, जैसे कुएं, तालाब, आहर, पाईन, चौर आदि के भी विकास की आवश्यकता है। साथ ही आधुनिक सिंचाई तकनीक, जैसे- ड्रिप सिंचाई, छिड़काव सिंचाई, रेन वाटर हारवेस्टिंग आदि विधियों को अपनाना चाहिए।

प्र. मौसम पूर्वानुमान एवं भूकंप अध्ययनों की प्रासंगिकता का वर्णन कीजिए।

उत्तर- आधुनिक तकनीकी विकास ने मौसम एवं भूकंप संबंधी अध्ययनों को संभव बनाया है। मौसम पूर्वानुमान के लिए भारतीय दूर - संवेदी उपग्रह (Indian Remote Sensing Satellite - IRS), भारतीय इनसेट प्रणाली एवं सुपर कम्प्यूटर अत्यंत लाभदायक हैं।

मौसम पूर्वानुमान अध्ययन की प्रासंगिकता.

1. कृषि क्षेत्र में मौसम पूर्वानुमान अत्यंत लाभदायक है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में,

जहां कृषि मानसून पर निर्भर है, मौसम पूर्वानुमान द्वारा भविष्यगामी सूखे, वर्षा आदि की सूचना प्राप्त हो जाती है जिससे हम कृषि संबंधी समुचित व्यवस्था कर सकते हैं।

2. मौसम पूर्वानुमान का लाभ आपदा प्रबंधन के दृष्टिकोण से भी है। चक्रवात, तूफान, बर्फीली आंधी जैसी समस्या व्यापक जान-माल की हानि के लिए उत्तरदायी है। इनका पूर्वानुमान होने पर चेतावनी जारी कर दी जाती है जिससे आपदा प्रबंधन संस्थान/विभाग तथा जनसामान्य सचेत हो जाते हैं।
3. उपग्रह तकनीकी एवं सुपर कम्प्यूटर का प्रयोग करके मौसम के अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन परिस्थितियों का पता लगाया जा सकता है जिसका उपयोग भविष्य की वृहत योजना निर्माण में किया जा सकता है।
4. वायु परिवहन एवं रेल परिवहन मौसम की दशाओं से ज्यादा प्रभावित होते हैं। इनके सुचारू संचालन के लिए मौसम पूर्वानुमान आवश्यक है।

भूकंप अध्ययन की प्रासंगिकता

- भूकंप अध्ययन के कारण ही संपूर्ण विश्व के भूकंप प्रभावित क्षेत्रों का निर्धारण संभव हो सका है। इससे इन क्षेत्रों में भूकंप से बचाव एवं आपदा प्रबंधन की विशेष व्यवस्था की जाती है।
- भूकंप के बाद भूकंप तीव्रता की जानकारी हो जाती है जिससे राहत एवं बचाव कार्यों में सहायता मिलती है।
- भूकंपीय तरंगों के अध्ययन के आधार पर भूगर्भ स्तर, चट्टानों की संरचना, तापमान का अध्ययन हो सका है। भूगर्भ में स्थित खनिजों, ऊर्जा के स्त्रोतों की खोज में भूकंप विज्ञान सहायक है।
- सागरीय भूकंप के अध्ययन के अंतर्गत 'सुनामी चेतावनी प्रणाली' का विकास किया गया है जो सुनामी की पूर्व सूचना दे देती है जिससे जान-माल को होने वाली हानि से बचाया जा सकता है।

प्र. भूगर्भीय जल स्तर (Ground Water Level) गिरता जा रहा है। जल स्तर बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक उपाय सुझाइये।

उत्तर - भारत में हरित क्रांति के बाद कृषिकार्य में उन्नत बीजों, उर्वरकों एवं तकनीकों का प्रयोग प्रारंभ हुआ जिसके कारण कृषि के लिए जल की आवश्यकता बढ़ गई एवं हम सिंचाई के लिए भू-जल का दोहन करने लगे। अब स्थिति यह है कि भू-गर्भीय जल स्तर तेजी से गिर रहा है जो चिंता की बात है। जल स्तर को बढ़ाने के लिए निम्नलिखित वैज्ञानिक उपायों को अपनाया जा सकता है-

- वृक्षारोपण को बढ़ावा देकर भूमिगत जल स्तर को बढ़ाया जा सकता है। वृक्ष मृदा की नमी धारण करने की क्षमता को बनाए रखते हैं तथा तीव्र वाष्पीकरण पर नियंत्रण रखते हैं। वन वर्षा के लिए भी उत्तरदायी हैं।
- भूगर्भीय जल का दोहन सबसे ज्यादा कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के लिए किया जा रहा है। कृषि में ऐसी तकनीक अपनाने की आवश्यकता है जिसमें कम पानी की आवश्यकता हो, जैसे- ड्रिप सिंचाई, छिड़काव सिंचाई आदि। वाटर हारवेस्टिंग (Rain Water Harvesting) के माध्यम से वर्षाजल को संग्रहित किया जा सकता है जिसका प्रयोग कृषिकार्य के लिए किया जा सकता है। साथ ही रेन वाटर हारवेस्टिंग के माध्यम से जमा पानी पुनः भूगर्भ में चला जाता है जिससे भूगर्भीय जल को संतुलित किया जा सकता है।
- कुछ पेड़-पौधे भूमिगत जल का अत्यधिक उपयोग करते हैं। ऐसे पेड़-पौधों की पहचान कर उन्हें लगाने से बचना चाहिए। यूकेलिपटस ऐसे ही वृक्षों की श्रेणी में है जिसे प्रारंभ में

व्यापक मात्रा में लगाया गया लेकिन ये भूगर्भीय जल स्तर को नीचे लाने का काम करते हैं।

- सतही जल का समुचित प्रयोग करना आवश्यक है। साथ ही कुछ कार्यों के लिए शुद्ध किए गए सागरीय जल का प्रयोग करना चाहिए।

प्र. टिप्पणी लिखें- अम्ल वर्षा (Acid Rain)

उत्तर- अम्ल वर्षा (Acid Rain) - औद्योगिक विकास एवं मनुष्य के जीवन-स्तर के उच्च होने के कारण विभिन्न स्त्रोतों से विषैली गैसों, जैसे-सल्फर डाईआक्साइड (SO2) तथा नाइट्रस ऑक्साइड (NO) का उत्सर्जन बढ़ा है। वायुमंडल में पहुंचकर ये गैस अभिक्रियास्वरूप क्रमशः सल्फ्यूरिक अम्ल (H,SO) एवं नाइट्रिक अम्ल (HNO3) बनाते हैं। ये अम्ल जब जल के साथ धरातल पर पहुंचते हैं, तो उसे अम्ल वर्षा कहते हैं।

अम्लीय वर्षा मानव सहित विभिन्न जीवों, पेड़-पौधों के लिए हानिकारक होते हैं। कृषि पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। झीलों, तालाबों एवं जल भंडारों में जलीय जीवों की मृत्यु के लिए अम्लीय वर्षा उत्तरदायी हो सकती है। इस कारण इसे कभी-कभी 'झील कातिल' (Lake Killer) भी कहा जाता है।

स्मारकों आदि को अम्ल वर्षा से संक्षरण (Corrosion) का खतरा रहता है। इसी कारण कहा जाता है कि मथुरा स्थित तेल शोधक एवं आसपास के औद्योगिक क्षेत्र से निकलने वाले सल्फर डाईऑक्साइड (SO) के कारण ताजमहल के संगमरमर को संक्षरण का खतरा है। यद्यपि भारत में अम्ल वर्षा की समस्या वर्तमान में ज्यादा घातक नहीं है लेकिन बढ़ते प्रदूषण के कारण अब हमें सचेत होने की आवश्यकता है।

Key to Remember

- सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) एवं नाइट्रिक अम्ल (HNO_3) युक्त वर्षा को अम्ल वर्षा कहते हैं।
- अम्ल वर्षा मनुष्य सहित विभिन्न जीव-जंतुओं एवं वनस्पतियों के लिए घातक है, झीलों तालाबों के जीवों पर इसके बुरे प्रभाव के कारण इस वर्षा को झील कातिल (Lake Killer) भी कहते हैं।
- अम्ल वर्षा भवनों विशेषकर स्मारकों के लिए घातक है।